संयुक्त अंक 82-83 जुलाई-दिसम्बर, 1998

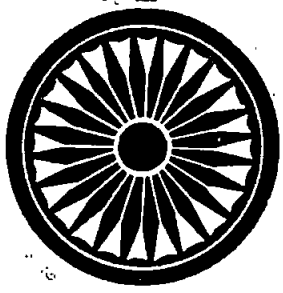

राजभाषा भारती

राजभाषा विभाग गृह मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली

हिन्दी दिवस 1998

सत्यमेव जयते

गृह मंत्री
भारत सरकार

संदेश

आप सब जानते हैं कि हमारे संविधान निर्माताओं ने 14 सितम्बर 1949 को संविधान में भारतीय भाषाओं को मान्यता प्रदान करते हुए केन्द्र की राजभाषा के रूप में हिन्दी को अंगीकार करने का निर्णय लिया था । उसी दिन यह निर्णय भी हुआ था कि भारत के राज्यों में क्षेत्रीय भाषाओं को राजभाषा के रूप में अंगीकार करने के लिए उन राज्यों की विधानसभाएं सक्षम होंगी । उस दिन की याद में हर वर्ष 14 सितम्बर हिन्दी दिवस के रूप में मनाया जाता है । वास्तव में हिन्दी दिवस सभी भारतीय भाषाओं का दिवस भी है और भाषाओं के आपसी सौहार्द का दिवस भी । इसलिए इस दिवस के शुभ अवसर पर मैं सभी देशवासियों को अपनी ओर से और भारत सरकार की ओर से हार्दिक शुभ-कामनाएं देता हूं ।

हमने अपनी स्वतंत्रता की 50वीं वर्षगांठ के उपलक्ष्य में अनेक आयोजन किए और यह महोत्सव पूरे साल धूमधाम से चला । इस परिप्रेक्ष्य में मैं स्मरण कराना चाहूंगा कि हमारे स्वतंत्रता संग्राम की भाषा होने का श्रेय राजभाषा हिन्दी को ही जाता है । एक अन्य स्मरणीय तथ्य यह है कि केन्द्र में हिन्दी को राज सिंहासन दिलाने का श्रेय प्रमुखतः उन गैरहिन्दी प्रतिभाओं को जाता है जो कि अहिन्दी क्षेत्रों से थे और जिन्होंने राष्ट्रीय सूत्र तथा सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी भाषा के महत्व को अपने निर्मल चिन्तन से सर्वप्रथम पहचाना था । इस परिप्रेक्ष्य में हमारे अनेक अहिन्दी भाषी महापुरूषों के कथन साक्षी हैं ।

स्वाधीनता के इन वर्षों में भारत के वैज्ञानिकों ने विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में नए कीर्तिमान स्थापित किए हैं और इसके फलस्वरूप देश का गौरव बढ़ा है । आधुनिक युग में हम अपने दिन-प्रतिदिन के काम काज में मशीनों और इलैक्ट्रॉनिक उपकरणों जैसे कम्प्यूटर आदि पर बहुत निर्भर करते हैं । आने वाले समय में यह निर्भरता और बढ़ेगी । इसलिए यह अत्यंत आवश्यक हो जाता है कि आधुनिक समय में हम अपनी भाषाओं को इन उपकरणों पर आसीन करें ताकि भविष्य में इन उपकरणों तथा हमारे कार्यों के बीच भाषाई गतिरोध न हो । इसके लिए एक ओर तो यह आवश्यक है कि कम्प्यूटर संबंधी विकास कार्यों में राजभाषा हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में भी सॉफ्टवेयर बनवाएं तो दूसरी ओर यह भी आवश्यक है कि आधुनिक संयंत्रों और उपकरणों से हम मैत्री साधें तथा अपने कार्यों में उनका अधिकाधिक प्रयोग करें । इस प्रकार इन संयंत्रों पर राजभाषा का मार्ग प्रशस्त होगा तथा इन संयंत्रों के माध्यम से हिन्दी तथा अन्य भाषाओं का आपसी समन्वय भी सुदृढ़ होगा । हमारी भाषाओं का तकनीकी स्वरूप उभरेगा और आम व्यवहार की भाषा में कुछ हद तक सरलता, मानकता तथा समन्वय आएगा । साथ ही साथ, इन आधुनिक उपकरणों के माध्यम से भारत में इन संयंत्रों का उपयोग सुदृढ़ बनेगा । अतः इस कार्य में हमारा असीम राष्ट्रीय हित है ।

मैं, आज, केन्द्र के सभी अधिकारियों / कर्मचारियों और अन्य देशवासियों से आग्रह करूंगा कि वे सरकार की राजभाषा नीति का कार्यान्वयन कारगर बनाने में अपना सहयोग एवं योगदान दें । नीति कार्यान्वयन में यदि कुछ कठिनाइयां सामने आती हैं तो उनका समाधान संयम और आपसी सहयोग से किया जाए । राजभाषा नीति कार्यान्वयन, प्रेरणा-प्रोत्साहन और सद्भाव पर आधारित है और राजभाषा हिन्दी के प्रगामी प्रयोग को बढ़ावा देने के लिए हमें इसी दिशा में यत्न करने होंगे ।

जयहिन्द !

भा ल आडवाणी

नई दिल्ली,

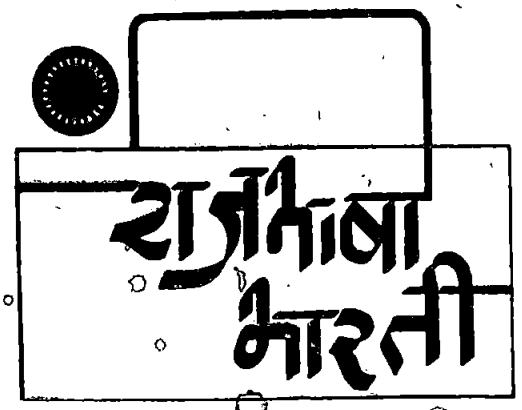

भारति जय विजय करे, कनक-शस्य-कमल धरे—निराला

राजभाषा भारती

राजभाषा की त्रैमासिकी

वर्ष : 21
संयुक्त अंक : 82-83
चैत्र-भाद्रपद, 1920, जुलाई-सितम्बर, 1998
आश्विन-पौष अक्तूबर-दिसम्बर, 1998

☐ संपादक :
प्रेम कृष्ण गोस्वामी
निदेशक (अनुसंधान)
फोन : 4617807

☐ उप संपादक :
नैत्र सिंह रावत
फोन : 4698054
सुरेन्द्र लाल मल्होत्रा
फोन : 4698054

☐ संपादन सहायक :
शांति कुमार स्याल
फोन : 469854

नि:शुल्क वितरण के लिए

पत्रिका में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। सरकार अथवा राजभाषा विभाग का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

पत्र-व्यवहार का पता :

संपादक, राजभाषा भारती,
राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय,
लोकनायक भवन, (दूसरा तल)
खान मार्किट, नई दिल्ली-110003

अनुक्रम

अनुक्रम			पृष्ठ
☐ संपादकीय			
☐ चिंतन			
1.	भारत की राष्ट्रभाषा	— जगदम्बी प्रसाद यादव	3
2.	राष्ट्रीय एकता की संवाहिका	— डॉ. शैलेन्द्र कुमार शर्मा	5
3.	भाषा की सामाजिकता	— डॉ. कविता रस्तोगी	9
4.	भारतीय न्यायपालिका : राजभाषा-प्रवेश की मानसिकता	— डॉ. सुरेन्द्र प्रसाद जमुआर	11
5.	चिकित्सा विज्ञान की शिक्षा में हिंदी माध्यम की आवश्यकता	— जगन्नाथ	14
6.	देश की संपर्क भाषा और हिंदी	— जगपति शरण निगम	16
7.	बैंकों की कार्यपद्धति में अनूदित हिंदी का स्वरूप	— डॉ. पूरन चन्द टण्डन	18
8.	हम और हमारी राष्ट्रभाषा	— उत्तम कुमार चटर्जी	30
9.	गुरु नानक देव जी का दैवी जीवन और अमर संदेश	— नरेन्द्र कुमार शर्मा	34
10.	नाभिकीय विखंडन-एक स्थूल दृष्टि	— ए.एस. पाण्डेय	37
11.	हमारी राष्ट्र लिपि देवनागरी	— आशीष जयसवाल	39
12.	भारतीय उद्योग के विकास में हिंदी की भूमिका	— टी. महादेव राव	42
☐ साहित्यिकी			
13.	राष्ट्रीय जागरण के कवि : सुमित्रानंदन पंत	— गुणानन्द थपलियाल	44
14.	समन्वित भाषा और संस्कृत के कवि वली दकनी	— डॉ. जानकी प्रसाद शर्मा	46

3176 HA/99—1A

☐ **विश्व हिंदी दर्शन**

15. विदेशी हिंदी पत्रकारिता का कीर्तिस्तम्भ-शांतिदूत — डॉ. विमलेश कांति वर्मा 51

☐ **भाषा संगम**

- **कविताएं**
  - जवाब दिहि — गोपाल भौमिक 56
  - स्वर्ण भस्म — दिनेश दास 57
  - गांधीजीर दिल्ली — देवेशदास 58

☐ **पुस्तक समीक्षा** 60

सामाजिक यथार्थ के चित्तेरे नागार्जुन और धूमिल (डॉ. सी.के. जेम्स /प्रो. कुंवर पाल सिंह), दीवार में तरेड़ (राजकुमार सैनी/निर्मल कांता सहगल), सेंट जोन (मूलः बर्नार्ड शाह, अनुवाद : संतोष खन्ना/ रमेश चन्द्र), देश-प्रदेश ([illegible] बाला शर्मा/स्मिता), बहते पानी से बाखबर ([illegible] कृष्ण काव/घनश्याम तिवारी), एक और तथागत (रा[illegible] बन्धु/आशीष जायसवाल), मुम्बई से रोम मोटर साइकिल पर (प्रवीण कारखनीस/ एम. एल. मैत्रेय), हिंदी साहित्य : रचना और परिवेश (डॉ. कृष्ण विहारी मिश्र/डॉ शशि तिवारी), अनुभूति के आयाम (बद्री प्रसाद गुप्त/ रेणु अरोडा), हमारे राष्ट्र रत्न (डॉ. लाल बहादुर सिंह चौहान/संतोष तनेजा)। उड़ान (पूर्णिमा गुप्ता/मीनाशी रावत), प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी (जगदीश विद्रोही/बलवीर सक्सेना/डॉ. इन्द्र सेंगर)

(इस स्तम्भ में पुस्तक के लेखक का नाम/ समीक्षक का नाम पूर्वावर क्रम से दिया गया है।)

☐ **राजभाषा सम्मेलन/ संगोष्ठी** 71

☐ **हिंदी कार्यशालाएं** 79

☐ **हिंदी दिवस/ पखवाड़ा/ माह** 83

☐ **समाचार** 104

☐ **आदेश-अनुदेश** 105

संपादकीय

राजभाषा भारती का संयुक्तांक पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है।

पत्रिका में प्रकाशित सामग्री के संबंध में हमें अपने पाठकों से प्रशंसा भरे पत्र प्राप्त होते रहते हैं। इसका श्रेय हम अपने लेखकों को देते हैं। तथापि इससे हमारा मनोबल बढ़ता है। हमारा प्रयास रहता है कि भारती में ज्ञान-विज्ञान से संबंधित लेख भी प्रकाशित किए जाएं जिससे केन्द्रीय सरकार के उन विभागों में जहां वैज्ञानिक और तकनीकी प्रकार के कार्यों का बाहुल्य है, वहां कार्यरत अधिकारियों/कर्मचारियों को हिंदी में कार्य करने की प्रेरणा मिले। प्राय: यह दलील दी जाती है कि प्रौद्योगिकी एवं वैज्ञानिक प्रगति अंग्रेजी भाषा के माध्यम से ही संभव है। यह बात तर्कहीन व निराधार है। इसके लिए जहां हमारा वैदिक वांड्मय साक्षी है, वहीं विश्व के अनेक देशों ने अपनी भाषा के माध्यम से ही विकासशील राष्ट्रों की सूची में अपना नाम अंकित किया है। हमारे वैदिक वांड्मय में तो हमारे ऋषियों ने ऐसे वैज्ञानिक सूत्रों का प्रतिपादन किया है जिन पर आज विश्व में शोध कार्य चल रहा है।

प्रस्तुत अंक में "राष्ट्रीय एकता की संवाहिका नागरी लिपि" शीर्षक लेख में लेखक द्वारा रोचक जानकारी देने का प्रयास किया गया है। भारत जैसे विशाल देश में आचार, वेशभूषा, खानपान, जीवन पद्धति आदि विभिन्न स्तरों पर विषमता होना स्वाभाविक है। लेकिन इस विषमता के बावजूद राष्ट्रीय एकता के लिए सांस्कृतिक एवं भाषाई समन्वय सर्वोपरि है। भारतीय संदर्भ में राष्ट्रीय एकता के लिए नागरी लिपि का विशेष महत्व है। भाषा के माध्यम से मनुष्य अपने दैनंदिन कार्यों को निष्पादित करता है। भाषा ही मानव को अन्य प्राणियों से ऊपर उठाकर मानव बनाती है। भाषा और समाज सिक्के के दो पार्श्वों की भांति हैं, जिन्हें एक दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता है। ये आद्यान्त: अन्योन्याश्रित रहते हैं। "भाषा की सामाजिकता" लेख में इन्हीं पक्षों पर प्रकाश डाला गया है।

न्यायालयों में अंग्रेजी का प्रयोग हो रहा है। ब्रिटिश शासन काल से पूर्व न्यायालयों में फारसी, उर्दू का प्रयोग होता था। न्यायालयों में हिंदी के प्रयोग के संबंध में मानसिकता में परिवर्तन लाने की आवश्यकता है। हिंदी मात्र कुछ राज्यों की भाषा नहीं है। यह समस्त देश की भाषा है। इस परिप्रेक्ष्य में ठोस उपाय और कारगर कार्रवाई आवश्यक है। ''भारतीय न्यायालयों में राजभाषा प्रवेश की मानसिकता'' लेख में इन्हीं कुछ बातों पर प्रकाश डाला गया है।

भारत में अंग्रेजी की तुलना में हिंदी जानने वालों की संख्या सर्वाधिक है। इस प्रकार उच्च स्तर पर यदि वैज्ञानिक एवं तकनीकी विषयों की पढ़ाई का माध्यम हिंदी या अन्य भारतीय भाषाएं हों तो इन क्षेत्रों में हो रहे शोध कार्यों का लाभ आम जनता भी सहजता से उठा सकेगी। ''चिकित्सा विज्ञान में हिंदी माध्यम की आवश्यकता'' लेख में कुछ इसी प्रकार के तथ्य प्रस्तुत किए गए हैं जिनसे चिकित्सा विज्ञान की पढ़ाई हिंदी माध्यम से किए जाने में अब कोई कठिनाई नहीं है।

अन्य स्तम्भों के अन्तर्गत भी सुरूचिपूर्ण एवं ज्ञानवर्धक जानकारी देने का प्रयास किया गया है।

श्री अशोक पाहवा, सचिव राजभाषा विभाग का स्थानान्तरण हो गया है। उनके स्थान पर श्रीमती आशा देवी, आई. ए. एस. ने राजभाषा विभाग के सचिव के रूप में अपना कार्यभार ग्रहण कर लिया है। हमें आशा है कि उनके दीर्घानुभव व कुशल नेतृत्व से राजभाषा के विकास को एक नया आयाम मिलेगा।

(प्रेमकृष्ण गोरावारा)

भारत की राष्ट्रभाषा

—जगदम्बी प्रसाद यादव

माननीय गांधी जी ने कहा था—अंग्रेजी मात्र परतंत्रता और विदेशी भाषा ही नहीं यह भाषा स्वार्थी है और समाज को बांटती है । यह शब्दशः सिद्ध हो रहा है। आज भारत का एक छोटा-सा अंग्रेजी दाँ वर्ग लन्दन की शानदार जिन्दगी जी रहा है वहीं वृहत्तर समाज अभाव ही नहीं शुद्ध जल तक के लिए तरस रहा है।

सभी दल, शासन में हों या विरोध में, जोर-जोर से कहते हैं कि साधारण जनता को प्रशासन और विकास में भागीदार बनायेंगे। यह मात्र नारा अभी तक बना हुआ है क्योंकि प्रशासन के कामकाज की भाषा अंग्रेजी है। उच्च शिक्षा का माध्यम भी अंग्रेजी है। अंग्रेजी भाषा के कारण कुछ व्यक्ति स्वतंत्रता का लाभ लेकर सत्ता, साधन,मानसम्मान अधिकार पर कुंडली मारकर जमे हुए हैं। अंग्रेजी बनाये रखकर वे तो सुख साधन का उपभोग कर ही रहे हैं तथा इसको बनाये रखकर अपने आगे आने वाली संतति का भी रास्ता सुलभ बनाये रखना चाहते हैं। लेकिन समाज का एक बड़ा हिस्सा रोजी-रोटी के संघर्ष में बेकारी, गरीबी, महंगाई, अशिक्षा, चिकित्सा के अभाव में विकास से पिछड़ता जा रहा है। अंग्रेजी ने भय, भ्रष्टाचार और भूख का दावानल पैदा कर दिया है। एक तरफ ब्रेन-ड्रेन हो रहा है तो दूसरी तरफ गांवों से लोग शहरों की ओर झुग्गी-झोपड़ी की आबादी दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ाते जा रहे हैं । समस्या के समाधान के बदले उसका रूप विकराल होता जा रहा है।

माननीय गांधी जी ने आगे कहा कि अंग्रेजी मात्र भाषा नहीं अंग्रेजियत के रूप में संस्कृति है। वह भारतीय संस्कृति को गहराई से विभाजित कर रही है। भारतीय अस्मिता को धूमिल करती हुई भारतीयों में अपनी-अपनी भाषा के प्रति हीन भावना पैदा कर रही है।

देश ने देखा स्वतंत्रता का स्वर्ण जयन्ती वर्ष सरकार ने अपना शान गुमान का वरदान उत्सव मनाकर, समाचार पत्र-पत्रिका का विशेषांक निकाल कर मनाया, पर साधारण जनता तो जान भी नहीं पायी कि स्वर्ण जयन्ती किस बात की मनाई जा रही है। मेरे मन में बार-बार यह प्रश्न उठता रहा है और सरकार को लिखता रहा कि यह स्वतंत्रता जयन्ती तो मात्र अंग्रेजों के लार्ड क्लाईव के राज जाने की है क्योंकि लार्ड मैकाले प्रदत्त अंग्रेजी तो काले अंग्रेजों के द्वारा शान से भारतीयों पर, भारतीय भाषाओं पर इठलाती हुई मजबूती से राज कर रही है। देश के शासक-प्रशासक तो विशेषकर परतंत्रता के जकड़न में पड़े हुए हैं । वे समझते हैं कि अंग्रेजी विश्व भाषा है । इसके बिना तो भारत विकास ही नहीं कर सकता है। रूस, फ्रांस, जर्मनी, जापान, चीन आदि कैसे बिना अंग्रेजी के इंग्लैण्ड से आगे हैं। उनको कौन समझा सकता है। वे ही तो देश प्रवक्ता हैं। वे जानते हैं कि जब तक साधारण जनता को भ्रम में रखा जा सकता है तभी तक उनकी पांचों ऊंगलियां घी में हैं।

देश को बताया जा रहा है कि हिन्दी धीरे-धीरे राजभाषा बन रही है। इसके के लिए केन्द्रीय हिन्दी समिति है, संसदीय राजभाषा समिति है तथा प्रत्येक मंत्रालय में हिन्दी सलाहकार समिति हैं तथा इसके कार्यान्वयन के लिए सभी स्तर पर राजभाषा कार्यान्वयन समितियां काम रही हैं । इन सबकी देखभाल के लिए गृह मंत्रालय में राजभाषा विभाग है। विदेश विभाग में एक भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद है । शासकीय, विधि, वैज्ञानिक, तकनीकी आदि शब्दों की रचना कर ली गयी है।

विश्व के हिन्दी प्रेमी चाहते हैं कि विश्व के दूसरे नम्बर की भाषा हिन्दी राष्ट्र संघ की भाषा बने। बनने की सभी क्षमता और सभी आवश्यक तत्व उसमें मौजूद हैं। आज एक दर्जन देशों की किसी न किसी तरह उनकी प्रिय भाषा हिन्दी है । तीन-चार दर्जन देशों में हिन्दी प्रेमी भारतीय लोग हैं। वे हिन्दी के प्रचार-प्रसार में संलग्न है।

हिन्दी में विश्व मानव की चेतना भरी पड़ी है। यह संगठन और स्नेह की भाषा है। इसमें अनेकता में एकता प्रलक्षित होती है। यह संतों-महात्माओं के वरदान की भाषा है। संस्कृति का अनुपम भंडार है। यह ज्ञान विज्ञान भाषा के साथ प्रशासन की भाषा है। सफल अभिव्यक्ति की भाषा है। यह भारत की आत्मा है, गौरव और स्वाभिमान की भाषा है।

आज हिन्दी जगत और विश्व हिन्दी सम्मेलन हिंदी को राष्ट्र संघ की भाषा बनाना चाहते हैं। हिन्दी आज मात्र भारत की भाषा नहीं, अपितु समस्त एशिया की भाषा है। भारत के बाहर बर्मा, श्रीलंका, मलाया,

सांसद, 4, डॉ. विशम्भर दास मार्ग, नई दिल्ली

इण्डोनेशिया, मारीशस, दक्षिण-पूर्वी अफ्रिका, ब्रिटिश गायना, सुरीनाम, त्रिनिदाद, टुबैगो में हिन्दी जानने बोलने वाले हैं। ऐसे और अनेक देश हैं जिन्होंने हिन्दी को स्वीकारा है। नेपाल, फिजी, पाकिस्तान, बांग्लादेश आदि यहां इसके ठोस आधार बने हुये हैं। कई देशों में हिन्दी को वैकल्पिक भाषा के रूप में तैयार किया जा रहा है। दुनिया के सैकड़ों विश्वविद्यालयों में हिन्दी की पढ़ाई हो रही है तथा भरतवंशी जहां-जहां हैं वे भी हिन्दी का प्रयोग और प्रसार कर रहे हैं।

प्रबल जनबल होने पर भी हिन्दी राष्ट्र संघ में आखिर उपेक्षित क्यों हैं? हिन्दी भाषियों में भाषा का अपेक्षित स्वाभिमान नहीं है, इस कारण हिन्दी के पीछे विश्व राजनीति का दबाव नहीं बन रहा है। हिन्दी भाषियों ने भी अपने कर्त्तव्य का पालन नहीं किया और न दबाव बनाया। अब अधिक दिनों तक यह स्थिति नहीं रहेगी। आज तो विश्व हिन्दी मंच सक्रिय है।

अंग्रेजी भी एकमात्र अन्तर्राष्ट्रीय भाषा नहीं है। यह न तो यूरोप के हर देश की भाषा है और न इसके बिना चीन, जापान, फ्रांस, जर्मनी, रूस का बहुमुखी विकास ही रुका हैं। पहले इंग्लैंड, रूस की भाषा फ्रेंच थी। एतिहासिक घटना ने उन्हें अपनी राष्ट्रभाषा अपनाने का बोध कराया। भारत को भी स्वतंत्रता के स्वर्ण जयंती के वर्ष पर अपनी राष्ट्रभाषा के संबंध में आत्म विश्लेषण कर हिन्दी को स्थापित करना चाहिए। जिन शब्दों में हिन्दी के प्रति ललक है, उनके लिए भारत हिन्दी-पाठ्यक्रम बनाना और लिखवा कर प्रकाशित कर उपलब्ध कराना चाहिए। विदेशों में भारतीय के मन में भारतीय संस्कृति, अस्मिता, आध्यात्मिकता, नैतिकता उन्हें हिन्दी से जोड़ती है।

भाषा राष्ट्रीय अस्मिता का माध्यम बन कर जीवित रहती है। आज हिन्दी राजनीति का शिकार बन रही है। विश्व हिन्दी पर इसका असर होता है। हिन्दी अपने ही देश में बेगानी होती जा रही है। भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद को देखना चाहिए कि इस मंच से हिन्दी के संप्रसारण में क्या ठोस काम हुए। अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग परिषद, नागरी प्रचारिणी सभा, आथर्स गिल्ड ऑफ इंडिया, अखिल भारतीय प्रकाशक संघ, नेशनल बुक ट्रस्ट, साहित्य एकादमी, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय आदि सक्रिय भूमिका निभा सकते हैं। इस सारे कार्य में विदेश मंत्रालय का सहयोग आवश्यक भूमिका अभिनीत कर सकता है। हिन्दी और विश्व भाषाओं में कितनी कमी है और उस कमी को कैसे पूरा किया जा सकता है। इसी प्रकार विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हिन्दी को बहुत प्रयास करना है। जन रुचि में आ रहे परिवर्तन पर ध्यान देना आवश्यक है। विश्व में हिन्दी-लेखक परिवार का कोई परिचय कोश नहीं है जिससे एक दूसरे से सम्पर्क सूत्र बना रहे।

राष्ट्रीय पुरुष को यह स्मरण रखना चाहिए कि भाषा मानव को मानव से जोड़ती है। यह परम्परा, संस्कृति, मान्यता एवं विश्वासों को समझने का माध्यम है। भाषा भी स्वाभिमान स्वतंत्र राष्ट्र के जीवन का एक अंश होता है। यह भी स्मरण रखने का महत्वपूर्ण तथ्य है कि आज भाषाओं का दारमदार कम्प्यूटर आदि पर हैं। इसमें देवनागरी लिपि में जितना अधिक काम होगा, राष्ट्र भाषा का कल्याण प्रचार-प्रसार उतना ही अधिक होगा। इस ओर सरकार विशेषकर कारगर कदम उठाये, यह नितांत आवश्यक है।

अन्त में यह स्मरण करें कि राष्ट्र के गूंगेपन को हर हालत में दूर करना पड़ेगा—तभी राष्ट्र का विकास और कल्याण होगा, जनसाधारण तभी शासन के विकास कार्य में भागीदारी पा सकती है।

चाहे जैसा भी अंग्रेजी का अन्धकार छाया हो, भारत की राजभाषा हिन्दी प्रकाशमान होकर जनोपयोगी बनेगी।

****

"शिक्षा जब पराई भाषा में दी जाती है तब केवल शब्दों को याद रखने का बोझ ही विद्यार्थी के दिमाग पर नहीं पड़ता, बल्कि विषय को समझने में भी उसे बड़ी कठिनाई होती है। यह तो स्पष्ट है कि जहां रटने की शक्ति बढ़ती है वहां समझने की शक्ति मन्द पड़ जाती है। हमारे मुल्क की संस्कृति एक ही है - यह हिन्दी संस्कृति है।"

- सरदार बल्लभ भाई पटेल

****

राष्ट्रीय एकता की संवाहिका : नागरी लिपि

—डॉ शैलेन्द्र कुमार शर्मा

राष्ट्र की भारतीय अवधारणा में उसके बहिरंग की अपेक्षा अंतरंग की अधिक महत्ता है। राष्ट्र निर्माण में भौगोलिक दृष्टि से ऐक्य के स्थान पर जन समुदाय में भावात्मक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से एकता पर अधिक बल दिया गया है। ऋग्वेद (4/42/1) से लेकर आज तक राष्ट्रभावना के मूलाधारों में एक देश, एक शासन केन्द्र, एक संस्कृति,एक सभ्यता और एक भाषा की महत्ता सर्वमान्य रही है। मानव समाज में विभेद के अनेक कारकों, यथा आचार, वेशभूषा, खानपान, जीवन पद्धति, रंग-रूप आदि की मौजूदगी के बावजूद राष्ट्रीय एकता की परिधि में सांस्कृतिक एवं भाषायी समन्वय का महत्व सर्वोपरि है। किसी राष्ट्र में निहित भौगोलिक वैषम्य और सभ्यता के स्तरों में अन्तर के बावजूद राष्ट्रीय एकात्मता की रचना में भाषा और संस्कृति का योगदान महत्वपूर्ण होता है। इस दृष्टि से संस्कृति के मूलाधार में स्थित भाषा की लिखित अभिव्यक्ति से सम्बद्ध 'लिपि' की भूमिका भी अद्वितीय है। विश्व के विविध भाषायी समाजों का इतिहास इस बात का गवाह है कि उनकी 'लिपि' ने जहां भाषिक अभिव्यक्ति को देश एवं काल—दोनों धरातलों पर विस्तार दिया, वहीं भाषा के स्थानीय विभेद के बावजूद व्यापक जन समुदाय को एक सूत्र में बांधा है। भारतीय संदर्भ में राष्ट्रीय एकात्मता की साधना में नागरी लिपि की भूमिका अद्वितीय है।

भावात्मक-सांस्कृतिक दृष्टि से बंधे भारत को भाषा एवं लिपि की एकता ने सदियों से आधार दिया है। संस्कृत और उसकी 'लिपि' "ब्राह्मी" ने शताब्दियों तक भारत की एकात्मता को सुदृढ़ता दी थी। ब्राह्मी की विकासयात्रा में उत्पन्न नागरी, संस्कृत, प्राकृत, पालि और अपभ्रंश की यात्रा में सहभागी रही है और विगत एक हज़ार वर्षों से आधुनिक राष्ट्रभाषा हिन्दी तथा अनेक क्षेत्रीय भाषाओं तथा शैलियों के लिए निरन्तर प्रयुक्त होती आ रही है। वस्तुत: नागरी ने ही ब्राह्मी के राष्ट्रीय व्यक्तित्व को पाया है, क्योंकि भारत की अनेक भाषाओं, यथा—संस्कृत, पाली, प्राकृत, अपभ्रंश, हिन्दी, मराठी, आदि के लिए उसका उपयोग होता है, साथ ही कई भाषाओं की लिपियां भी उसी के स्थानीय प्रभेद हैं, जैसे—बंगला, उड़िया, असमिया, मैथिली, शारदा, गुरुमुखी, लहेंडा, गुजराती आदि। वस्तुत : नागरी के साथ उपर्युक्त लिपियों का सम्बंध या तो सहगोत्रजा भगिनीवत् है या प्राचीन नागरी की आत्मजावत्। इस दृष्टि से हम देखें, तो विभिन्न भाषाओं और भाषायी समुदायों को नजदीक लाने के लिए नागरी उपयुक्तम लिपि है। भारत की एकता के मूल आधार—सांस्कृतिक ऐक्य को एक सम्पर्क लिपि—'नागरी' के सहकार से और अधिक सुदृढ़ता मिल सकेगी। भारत की विविधता के सौन्दर्य को नागरी के माध्यम से एकता की शक्ति मिल जाए, तो निस्संदेह राष्ट्रीय समन्वय का नया अध्याय प्रारंभ हो जाएगा।

इस संदर्भ में यह तथ्य भी विचारणीय है कि भारत की सभी भाषाओं को संस्कृत की देन बहुमुखी है। परिमाण के स्तर पर अन्तर हो सकता है, किन्तु सभी भाषाओं के लिए संस्कृत अक्षय स्रोत के समान रही है। ब्राह्मी के बाद नागरी ही सदियों से संस्कृत की मानक लिपि के रूप में प्रयोग में आ रही है। यही वजह रही कि संस्कृत से विभिन्न भारतीय भाषाओं की विकास यात्रा के समानान्तर नागरी ने भी भारत की एकाधिक लिपियों को जन्म या संस्कार दिया है। आज नागरी से विकसित इन स्थानीय लिपि भेदों के कारण विभिन्न भाषाएं, शब्दावली तथा संरचनागत समानता के बावजूद दूर हो रही हैं। इस दृष्टि से यह आवश्यकता लम्बे समय से महसूस की जा रही है कि विभिन्न भारतीय भाषाओं के लिए सहकारी लिपि के रूप में नागरी को अपनाया जाए। उस स्थिति में नागरी राष्ट्रीय एकात्मता को चरितार्थ करने का अधिक प्रभावी माध्यम बन सकेगी। वस्तुत: नागरी को राष्ट्रीय समन्वय की भूमिका के निर्वाह के लिए हमारी समृद्ध सांस्कृतिक विरासत से अपार शक्ति मिली है। नागरी लिपि ही बहुभाषी और बहुलिपि वाले देश की सम्पूर्ण लिपि बनने की संभावनाओं को अपने में समेटे है।

राष्ट्रीय एकता की दृष्टि से नागरी की बहुआयामी भूमिका सदियों से विद्यमान रही है, किन्तु भारत के स्वाधीनता आन्दोलन के दौरान इसकी अनिवार्यता को नए सिरे से परिभाषित किया जाने लगा। नागरी के पक्ष में सर्वप्रथम और सर्वाधिक आवाज उठाने वाले लोग मूलत: अन्य लिपियों के प्रयोक्ता रहे हैं। भारतीय स्वातंत्र्य एवं संस्कृति चेताओं के पूर्व-पश्चिम के विद्वानों ने भी नागरी की सामर्थ्य को पहचान लिया था। सर विलियम जोन्स (1740 ई.—1794 ई.) ने 1788 ई. में एशियाई भाषाओं के लिए सार्वजनीन लिपि की अवधारणा प्रस्तुत की थी। यद्यपि उन्होंने सम्पूर्ण एशियाई भाषाओं

प्राध्यापक, हिंदी अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन- 456010

के लिए संशोधन रोमन लिपि की वकालत की, इसके बावजूद उन्होंने देवनागरी लिपि की स्वाभाविक व्यवस्था को अन्य लिपियों की अपेक्षा सर्वश्रेष्ठ घोषित करने में संकोच का अनुभव नहीं किया। उनके बाद फ्रेडरिक जॉन शोर (1799 ई.—1837 ई.) ने अनेक लेखों में देवनागरी लिपि का तार्किकता के साथ समर्थन किया। जहां तक कि उन्होंने अंग्रेजी पुस्तकों का प्रकाशन पौरस्त्य लिपि अर्थात् देवनागरी में करने का भी सुझाव दिया। डॉ. जॉन बार्थविक गिलाक्राइस्ट, सर चार्ल्स एडवर्ड ट्रैविलियन, जे. प्रिन्सेप टाईटलर, रेवरेण्ड ए .डप. आदि ने पूर्व की भाषाओं के रोमन लिप्यंतरण की वकालत की, किन्तु इनकी चर्चा अपेक्षित गति न पा सकी। 1867 ई. में एफ. एस. ग्राउस ने भारतीय लिपियों के रोमन लिप्यंतरण के प्रस्ताव को अमान्य करते हुए देवनागरी लिपि का व्यापक समर्थन किया और इस तरह विवाद का पटाक्षेप कर दिया[1]।

भारतीय चिन्तकों में देवनागरी लिपि को सर्वजनीन लिपि बनाने की दिशा में शुरुआती विचार पंडित बालकृष्ण भटट् के मासिक पत्र (हिन्दी प्रदीप) के अप्रैल, 1882 ई. में प्रकाशित सम्पादकीय में मिलते हैं। शुरुआती चिन्तकों में बंगला भाषी सर गुरुदास बनर्जी, पंडित केशववामन पेठे, बालमुकन्द गुप्त, श्यामसुन्दर दास आदि के नाम भी प्रमुख हैं । राष्ट्रलिपि के रूप में नागरी की स्थापना के लिए बीसवीं शती की शुरुआत में राजा राममोहन और बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय ने उद्घोष किया, जो बंगला लिपि के प्रयोक्ता होने के बावजूद राष्ट्रीय परिदृश्य में नागरी की अनिवार्यता के समर्थक बने। 1905 ई. में बंगवासी जस्टिस शारदाचरण मित्र ने कलकत्ता में देश की सभी भाषाओं के लिए एक लिपि विस्तार परिषद् की स्थापना की, जिसके माध्यम से उन्होंने देवनागरी पत्र निकाला और नागरी लिपि के पक्ष में एक नए युग की आधारशिला रखी।

स्वामी दयानन्द सरस्वती, लोकमान्य तिलक, महात्मा गांधी आदि जैसे राष्ट्रीय नेताओं ने अपने सामाजिक-सांस्कृतिक-राष्ट्रीय आन्दोलनों में देवनागरी को महत्वपूर्ण हथियार बनाया। 1910 ई. में दक्षिणांचल के कृष्णस्वामी अय्यर ने सभी भारतीय भाषाओं के लिए नागरी को अपनाने का सुझाव दिया। गांधीजी ने स्वराज्य प्राप्ति के उपकरणों में नागरी को भी स्थान दिया था। उनके कथन द्रष्टव्य है "मेरा दृढ़ विश्वास है कि भारत की तमाम भाषाओं के लिए एक ही लिपि का होना फायदेमन्द है। और वह लिपि देवनागरी ही हो सकती है।" तथा "भाषाओं का यह पारस्परिक अन्तर एक लिपि द्वारा आधा तो पाटा ही जा सकता है।"[2] राष्ट्रीय आन्दोलन के समानान्तर भारतीय भाषा एवं साहित्य की प्रतिष्ठा के लिए संघर्षरत संस्थाओं, यथा—नागरी प्रचारिणी सभा (वाराणसी), हिन्दी साहित्य सम्मेलन (प्रयाग), राष्ट्रभाषा प्रचार समिति (वर्धा), दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा (मद्रास) आदि ने भी राष्ट्रीय एकता की सिद्धि के लिए नागरी के संरक्षण-संवर्धन का मार्ग अपनाया था।

स्वतंत्रता प्राप्ति के अनन्तर भारत को संघ के रूप में सुस्थापित करने के लिए संविधान निर्माताओं ने हिन्दी की महत्ता को स्वीकार करने के साथ-साथ नागरी लिपि को भी वैधानिक दर्जा दिया, क्योंकि वे जानते थे कि नागरी भारत की संस्कृति के स्वभाव से मेल खाती है। संविधान के अनुच्छेद 343(1) में स्पष्टत: अंकित किया गया है कि संघ की राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी होगी। इसी प्रकार भारतीय संविधान के अनुच्छेद 351 के अन्तर्गत 'हिन्दी भाषा के विकास के लिए निदेश' शीर्षक में समाहित पंक्तियां भी द्रष्टव्य हैं — संघ का कर्तव्य होगा कि वह हिन्दी भाषा का प्रसार बढ़ाए, उसका विकास करे ताकि वह भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके और उसकी प्रकृति में हस्तक्षेप किए बिना हिन्दुस्तानी के और आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट भारत की अन्य भाषाओं में प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात करते हुए और जहां आवश्यक या वांछनीय हो वहां उसके शब्द भण्डार के लिए मुख्यत: संस्कृत से और गौणत: अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करें। इन पंक्तियों में हिन्दी के संदर्भ में उल्लिखित तथ्य नागरी पर भी समान रूप से लागू होते हैं। निस्संदेह नागरी भारत की सामासिक संस्कृति के सर्वथा अनुरूप है और अब तो नागरी का ऐसा रूप विकसित हो गया है, जिससे वह भारत की समस्त भाषाओं के सम्पूर्ण लिपि चिह्नों को कतिपय परिवर्द्धन के साथ ठीक-ठीक अभिव्यक्त कर सकती है।

वस्तुत: केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय द्वारा देवनागरी को सभी भारतीय भाषाओं के लिप्यंतरण का सशक्त माध्यम बनाने के लिए विशेषज्ञों के परामर्श से 1966 में 'परिवर्द्धित देवनागरी' का स्वरूप निर्मित किया गया था, जिसमें फरवरी 1980 में आवश्यक संशोधन-परिवर्द्धन भी किए गए। अंतत: 'परिवर्द्धित देवनागरी' का ऐसा स्वरूप विकसित हो गया है, जिसमें भारत की सभी मान्य भाषाओं के वर्णों को अभिव्यक्त किया जा सकता है। इसमें फारसी, अरबी और अंग्रेजी जैसी गैर भारतीय भाषाओं की अभिव्यक्तियों का भी समावेश किया गया है। इस परिवर्द्धित देवनागरी के प्रयोग से विभिन्न भाषाओं को जोड़ने का अद्वितीय कार्य संभव हुआ है, जो नागरी की समन्वय- सामर्थ्य का प्रमाण है।

मुख्य मंत्रियों के राष्ट्रीय सम्मेलन (अगस्त 1961) में राष्ट्रीय एकता की रचना में नागरी की भूमिका को स्वीकार किया गया था। सम्मेलन की सिफारिश में कहा गया है—'समस्त भारतीय भाषाओं के लिए सामान्य लिपि का होना वांछनीय ही नहीं, आवश्यक भी है, क्योंकि ऐसी लिपि भारतीय भाषाओं के बीच एक सेतु का काम करेगी और इससे देश की भावात्मक एकता को बढ़ावा मिलेगा।' इस प्रकार की सिफारिशों को कार्यालयीन नस्तियों में कैद होने के बजाय कार्य रूप में परिणत करने के लिए अब राष्ट्रीय स्तर पर नैतिक दबाव आवश्यक प्रतीत होने लगे हैं।

भारतीय भाषाओं के सभी लिपि चिह्नों की अभिव्यक्ति की दृष्टि से रोमन लिपि की सीमाओं से हम सुपरिचित हैं।[3] भारतीय भाषाएं ही नहीं, वरन् विश्व भर की सैंकड़ों भाषाओं के हजारों शब्दों के त्रुटिपूर्ण उच्चारण एवं लेखन के लिए रोमन के अत्यल्प लिपि—चिह्न जिम्मेदार हैं, यह बात किसी से छुपी नहीं है। यह हमारी विडम्बना ही है कि रोमन की सीमाओं को जानकर भी अनेक निजी और राजकीय संदर्भों तथा दृश्य माध्यमों में उसका धड़ल्ले से प्रयोग जारी है। इसके लिए कभी तथाकथित आधुनिकता, तो कभी रोमन सार्वदेशिकता या यांत्रिक सुलभता का बहाना बनाया जाता है, जो सर्वथा निराधार तो है ही, हमारी अपनी भाषाओं के प्रति अन्याय भी है। वस्तुत: परिवर्द्धित देवनागरी के सार्वदेशीय इस्तेमाल से हम भारतीय और गैर-भारतीय भाषाओं के मूल स्वरूप की रक्षा कर सकते हैं तथा उनके बीच अन्तर्संवाद की भूमिका तैयार कर विश्व-समन्वय की दिशा में सार्थक कदम रख सकते हैं।

स्वतंत्र भारत में राष्ट्रीय एकता के लिए नागरी के महत्व को संवैधानिक स्वीकार्यता तो मिली ही, साथ ही उसे सामाजिक-सांस्कृतिक चिंतकों ने भी आवश्यक माना है। ऐसे लोगों में आचार्य विनोबा भावे का नाम चिर स्मरणीय है, जिन्होंने जन आन्दोलन के धरातल पर नागरी को नया कैनवास दिया। उनकी दृष्टि में नागरी की सार्वदेशिक ग्राह्यता से भारतीय जन बिलकुल नजदीक आ सकते हैं। राष्ट्रीय एकता की भूमिका को तैयार करने में वे विभिन्न भाषाओं के लिए नागरी के साथ-साथ उनकी अपनी लिपियों को चलाने के भी समर्थक थे। उनका कथन है—'भारत की एकता के लिए हिन्दी भाषा जितना काम देगी, उससे बहुत ज्यादा काम देवनागरी लिपि देगी। अतएव भारत की सभी भाषाएं देवनागरी लिपि में लिखी जाएं। विनोबा जी की दृष्टि में नागरी का महत्व भारत की एकता तक ही सीमित नहीं था। वे उससे आगे जाकर भारत एवं एशिया के एक होने तथा अन्ततः भारत और विश्व के एक होने की संभावनाएं नागरी में ही पाते हैं।[4]

विनोबा जी की प्रेरणा से गांधी स्मारक निधि के प्रयासों का मूर्तरूप 1975 ई. में नागरी लिपि परिषद् की स्थापना के रूप में सामने आया, जिसके सम्बन्ध में श्री मन्नारायण का आरंभिक वक्तव्य था, 'परिषद् का लक्ष्य है, राष्ट्रीय एकता के उद्देश्य से समस्त भारतीय भाषाओं की सहलिपि के रूप में नागरी लिपि को स्वीकार कराने का प्रयत्न करना और विश्व की सभी भाषाओं, विशेषकर एशियाई भाषाओं की लिपि के रूप में नागरी को स्वीकार्य बनाने का प्रयास करना।' विनोबा जी एवं नागरी लिपि परिषद् द्वारा प्रदत्त 'राष्ट्रीय एकता के लिए नागरी लिपि' का मंत्र अब व्यापक स्तर पर असर दिखाने लगा है। भारतीय भाषाओं की प्रतिष्ठा तथा संवर्धन की पक्षधर विभिन्न संस्थाएं तथा व्यक्ति राष्ट्रीय एकात्मा में नागरी की भूमिका को एक स्वर में स्वीकारते हैं।

कई लिपिविहीन लोक एवं जनजातीय बोलियों के लिए नागरी के प्रयोग का काम तेजी से बढ़ रहा है। पंजाबी, कोंकणी, सिंधी और उर्दू भाषाओं में नागरी के प्रयोग की दिशा में उन्मुखता, धीरे-धीरे ही सही, अवश्य बढ़ रही है। विभिन्न भाषाओं को समीप लाने के लिए 'ओड़िआ विश्वनागरी' (सम्पादक—शत्रुघ्न नाथ), असमिया विश्वनागरी (सम्पादक-शकुन्तला चौधरी) आदि पत्रिकाओं के सदृश व्यापक प्रयास भी जरूरी है। इसी प्रकार पूर्वोत्तर राज्यों तथा देश के विभिन्न जनजातीय अंचलों की बोलियों के लिए नागरी के इस्तेमाल की प्रक्रिया को अधिक तीव्र करने की आवश्यकता है। अपनी पृथक पहचान को कायम रखने के नाम पर कई लिपि रहित जनजातीयों बोलियों के लिए कृत्रिम लिपियां बनाई जा रही हैं या फिरो मन जैसी अशक्त और अस्वाभाविक लिपि के इस्तेमाल को महत्व दिया जा रहा है। इस प्रकार के पृथक्तावादी प्रयासों से ऐसे वंचित समुदायों के ही राष्ट्र की धारा से दूर होने की आशकाएं फलीभूत हो रही है, जिससे मुक्ति के लिए नागरी का प्रयोग ही समर्थ सिद्ध हो सकता है।

उर्दू और हिन्दी का मौखिक रूप आज अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पूरे उभार पर है, किन्तु दोनों के बीच खड़ी लिपि की दीवार अन्तर्संवाद में बाधक बन रही है। वस्तुतः नागरी हिन्दी के साथ-साथ उर्दू के लिए भी अधिक उपयुक्त तथा स्वाभाविक लिपि है। उर्दू की 'फारसी लिपि' में रोमन के सदृश सीमित लिपि चिह्नों का दोष वर्तमान है। साथ ही "उसकी लिखावट पढ़ने में प्रायः बहुत अधिक भ्रम का अवकाश रहता है, वह शुद्ध अर्थों में लिपि नहीं, बल्कि संकेत लिपि है।"[5] यही कारण है कि उर्दू में जाकर अनेक भारतीय मूल के शब्दों के उच्चारण त्रुटिपूर्ण हो गए हैं। उर्दू की लिपि में प्रयुक्त जटिल संयोजन प्रणाली दोनों भाषाओं के समन्वय के समर्थकों को असहाय बना रही है। इन्हीं कारणों से अब उर्दू वाङ्मय नागरी में लिप्यंतरण का नया दौर शुरू हुआ है। उर्दू ग़ज़लों के कई सग्रह नागरी में प्रकाशित होने से बहुत बड़े पाठक वर्ग तक पहुंच पा रहे हैं। उर्दू की अनेक पत्र-पत्रिकाओं यथा दैनिक अफकार, ताहा, शेप (सम्पादक—हसन जमाल) आदि के नागरी लिपि में प्रकाशित होने के पार्श्व में व्यापक समुदाय से सम्वाद कायम करने की इच्छा मूर्त होती है। हिन्दुस्तानी प्रचार सभा, मुम्बई की शोध पत्रिका 'हिन्दुस्तानी ज़बान' (सम्पादक—डॉ. सुशीला गुप्ता) हिन्दी और उर्दू को समीप लाने के लिए नागरी और उर्दू लिपियों में एक साथ प्रकाशित होती है। इसी तरह उर्दू में रचे गये धार्मिक और शिक्षाप्रद साहित्य को अब नागरी में प्रकाशित किये जाने की प्रवृत्ति बढ़ी है। इस नए चलन से यह स्पष्टतः परिलक्षित होता है कि उर्दू के फैलाव और अभिव्यक्तिगत सुगमता के साथ-साथ राष्ट्रीय एकता की रचना में नागरी प्रभावी योगदान दे रही है। उर्दू लेखन के लिए जरूरी कुछ नए लिपि संकेत भी नागरी में सर्वगाह्य हो गए हैं; जिनसे नागरी की समन्वय क्षमता प्रमाणित होती है।

उत्तर और दक्षिण भारत भावात्मक दृष्टि से एक हैं। संस्कृति के मूलभूत उपादान दोनों हिस्सों को भौगोलिक वैषम्य के बावजूद सहस्त्रों वर्षों से परस्पर बांधे हुए हैं। नागरी भी इस दिशा में समन्वय की प्रभावी संवाहक रही है। वस्तुतः उत्तर और दक्षिण भारत की समस्त लिपियां ब्राह्मी लिपि से ही देश-काल-भेद से विकसित हुई हैं। गुप्तकाल के पूर्व ब्राह्मी राष्ट्रीय लिपि के रूप में व्यापक भू-भाग में प्रचलित थी। गुप्तकाल में यह उत्तरी और दक्षिणी—दो शैलियों में विभक्त हो गई। उत्तरी ब्राह्मी लिपि या गुप्त लिपि से 7वीं—8वीं शती में कुटिल लिपि का विकास हुआ, जिसके देशगत भेदों में पश्चिम में अर्द्धनागरी, पूर्व में पूर्वी नागरी, दक्षिण में नंदिनागरी और मध्य क्षेत्र में सामान्य नागरी का विकास हुआ। इन्हीं में 'नंदिनागरी' का प्रयोग विजयनगर के राजाओं के दानपात्रों में है और यह अब भी दक्षिण में संस्कृत ग्रंथों के लेखन में व्यवहृत हो रही है।[6] स्पष्ट है कि सामान्य नागरी की ही विशिष्ट शैली 'नंदिनागरी' उत्तर-दक्षिण के बीच सेतु का कार्य करती आ रही है।

दक्षिणांचल में प्रचलित विभिन्न भाषाओं की लिपियां ब्राह्मी की दक्षिणी लिपि से विकसित हुई है। इन लिपियों में पश्चिमी, मध्यप्रदेशी, तेलुगु-कन्नड़, ग्रन्थ लिपि, कलिंग लिपि [7] तथा तमिल लिपि [7] प्रमुख हैं। ग्रन्थ लिपि से ही मलयालम और तुलु लिपियों का विकास हुआ। उपर्युक्त लिपियों के प्रयोग के साथ-साथ मध्यदेशीय सामान्य नागरी के प्रति स्वीकार का भाव सम्पूर्ण दक्षिणांचल में रहा है। वस्तुतः नागरी एवं दक्षिणांचल की समस्त लिपियों की विकास यात्रा की पृष्ठभूमि को जाने बगैर मात्र उनके लिपि चिह्नों के अंतर को दृष्टिगत रखना उचित नहीं है। एक राष्ट्रीय लिपि ब्राह्मी की संतति होने के कारण उत्तर-दक्षिण की सभी लिपियां भगिनीवत् हैं और इन सब के बीच मध्यदेशीय लिपि 'नागरी' राष्ट्रीय एकता के संवहन-संवर्द्धन का महत्वपूर्ण माध्यम है। दक्षिण की भाषाओं की कुछ ध्वनियों के लिए नागरी के पूर्व प्रचलित लिपिचिह्नों में ही नए संकेतक चिह्न जोड़कर पूर्ण अभिव्यक्ति क्षमता प्राप्त हो गई है। इनके

3176 HA/99—2A

प्रयोग से नागरी अन्तर्भाषिक सम्पर्क लिपि की समन्वयात्मक भूमिका को सार्थक निर्वहन कर रही है। राष्ट्रीय एकता में बाधक भाषायी दूरी को एक लिपि के प्रयोग से काफी हद तक पाटा जा सकता है, इस दिशा में नागरी के प्रयोग का विस्तार राष्ट्रीय एकात्मकता को नई दिशा दे रहा है।

स्पष्ट है कि एक राष्ट्र की अवधारणा को एक लिपि का आधार प्रभावी सामर्थ्य दे सकता है। नागरी की सर्वोपरि विशेषता यही है कि वह भारतीय संदर्भ में राष्ट्रीय एकता का संवहन करने के साथ ही अन्य भाषाओं और लिपियों के विकास में सहायिका भी है। यही कारण है कि अहिंसक समाज के समर्थक महात्मा गांधी और विनोबा ने नागरी को अपनी चैन्तनिक भूमि के अनुरूप पाया और उसका राष्ट्रीय सम्पर्क लिपि के रूप में स्वीकार करने की महत्ता प्रमाणित की। भारतीय भाषाओं की मौखिक अभिव्यक्ति को लिखित अभिव्यक्ति की माध्यम 'लिपि' की एकता का बल मिल जाए, तो कोई संदेह नहीं बचता कि राष्ट्रीय एकता का नया युग प्रारंभ हो जाएगा। इस कार्य में 'ब्राह्मी' के राष्ट्रीय व्यक्तित्व की उत्तराधिकारी 'नागरी' सर्वथा उपयुक्त भूमिका निर्वाह करती आ रही है। सार्वदेशीयता की दिशा में नागरी की यात्रा आरोपित या अस्वाभाविक न होकर समन्वय साधना की प्रतीक है, जिसकी सिद्धि से भारत की भावात्मक-सांस्कृतिक एकता अधिक सुदृढ़ता पा सकेगी।

संदर्भ—

(1) नागरी संगम, वर्ष 14, अंक 71 में प्रकाशित लेख 'भारत में सार्वजनिक लिपि की अवधारणा का इतिहास' (लेखक—डॉ. रामनिरंजन परिमलेन्दु), पृष्ठ 38-39.

(2) डॉ. अम्बाशंकर नागर : राष्ट्रभाषा हिन्दी और गाँधीजी, पृष्ठ 26-27.

(3) नागरी संगम, वर्ष 18, अंक 70 में प्रकाशित लेख नागरी लिपि शक्ति और संभावनाएँ (लेखक—डॉ. शैलेन्द्र कुमार शर्मा), पृष्ठ 28.

(4) नागरी संगम, वर्ष 1, अंक 1-2 में प्रकाशित लेख 'देवनागरी विश्वनागरी बनें' (लेखक—विनोबा भावे), पृष्ठ 1 और 16.

(5) रामचन्द्र वर्मा : मानक हिन्दी व्याकरण, पृष्ठ 20

(6) डॉ. अनन्त चौधरी : नागरी लिपि और हिन्दी, बर्तनी पृष्ठ 50

(7) वही, पृष्ठ 51-53.

भाषा की सामाजिकता

—डॉ० कविता रस्तोगी

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज में निवसित मानव पारस्परिक विचार विनिमय एवं सम्पर्क के लिए संकेत, स्पर्श आदि कई साधनों का प्रयोग करता है किन्तु इन सम्प्रेषण माध्यमों में प्रमुख एवं सर्वाधिक सक्षम भाषा है जिसके द्वारा मनुष्य अपने दैनन्दिन कार्य एवं सामाजिक व्यवहार का अधिकांश भाग सम्यक् रूपेण निष्पादित करता है। पशुओं की भांति विश्रंखल आदिम मानव भाषा के सूक्ष्म एवं सुदृढ़ सूत्र द्वारा ही परिवार, समूह, जाति की उत्तरोत्तर बढ़ती हुई व्यवस्थाओं में संगठित होकर सभ्यता एवं संस्कृति के बहुमुखी विकास की दिशाओं में अग्रसर हुआ है। भाषा की उपलब्धि मानव को अन्य प्राणियों से भिन्न प्रतिपादित कर उसे प्राणी से ऊपर उठा मानव बनाती है। इस विभूति का सृजन मानव उच्चारण सम्भूत अनेकानेक ध्वनियों में से कुछ निश्चित ध्वनियां करती है जिनसे भाषा के शब्द (प्रतीक) निर्मित होते हैं जो मनुष्य को चतुर्दिक व्याप्त वस्तुओं, घटनाओं, अनुभवों से परिचित कराते हैं। इसी तात्विक सत्य का उद्घाटन भर्तृहरि की निम्नलिखित पंक्तियां करती हैं —

"न सो स्ति प्रत्ययो लोके यः शब्दानुगमादृते।
अनुविद्धमिव ज्ञानं सर्वं शब्देन भासते॥"

(वाक्यपदीय 1-123)

अथवा दार्शनिक शब्दावली में —

"अनादि निधनं ब्रह्म शब्दतत्वं यदक्षरम्।
विवर्तते र्थभावेन प्रक्रिया जगतो यतः॥"

(वाक्यपदीय 1-112)

ये भाषिक प्रतीक जहां किसी विशिष्ट ध्वन्यात्मक संयोजन क्रम द्वारा सृजित होते हैं वहीं अर्थ विशेष को रूपायित भी करते हैं। भाषा में प्राप्त इस द्विविधता की चर्चा महाकवि कालिदास ने भी की, यथा —

"वागर्थविव सम्पृक्तौ वागर्थ प्रतिपत्तये।
जगतः पितरौ वन्दे पार्वती परमेश्वरौ॥" (रघुवंश 1/1)

भाषा और अर्थ का सम्बन्ध परिवर्तनीय, असहज एवं समाजाश्रित होता है। इसी कारण विविध भाषिक समाजों में किसी एक वस्तु या प्राणी को भिन्न-भिन्न नामों से अभिहित किया जाता है। वहां अंग्रेजी भाषी एक वस्तु विशेष को 'tree' कहता है, वहां हिन्दी भाषी "पेड़" और संस्कृत ज्ञाता "वृक्ष"। एक प्राणी विशेष जर्मन भाषी के लिए 'hund' है तो वही प्राणी अंग्रेजी के लिए 'dog' और हिन्दी वक्ता के लिए 'कुत्ता'। भाषिक प्रतीक एवं अर्थ का यह सम्बन्ध पारम्परिक और यादृच्छिक होते हुए भी निश्चित व व्यवस्थित होता है जिसका ज्ञान मनुष्य समाज में रहकर प्राप्त करता है। अतः मानव जन्म चाहे जिस भी परिवार में ले भाषा वही अधिग्रहित करता है जहां उसका लालन-पालन होता है। किसी मराठी माता-पिता की सन्तान का पालन-पोषण यदि हिन्दी भाषी परिवार में होगा तो वह बच्चा हिन्दी बोलेगा, मराठी नहीं। भाषार्जन के साथ-साथ भाषा प्रयोग भी समाज पर निर्भर करता है, प्रयोग-स्थल के अभाव में भाषा का विकास बाधित होता है। यही कारण है कि वैयक्तिक प्रयोक्ताओं के होने पर भी ग्रीक, अवेस्ता, संस्कृत आदि वरेण्य भाषाएं आज मृत कहलाती हैं और इनका पठन-पाठन एवं प्रयोग विश्वविद्यालयों, संस्थानों और गोष्ठियों तक ही सीमित है। उन्नीसवीं शताब्दी में विद्वानों ने पूर्ण भाषा की कल्पना को साकार करने हेतु "एस्परेन्तो" नामक कृत्रिम भाषा की रचना की जिसमें न केवल साहित्य सृजन किया गया बल्कि बोलचाल में भी जिसका प्रयोग हुआ किन्तु कुछ ही समय पश्चात् यह भाषा सामाजिकता के अभाव में विद्वानों के बुद्धि विलास का साधन बनकर रह गई। अस्तु भाषा की अस्मिता का स्रोत उसकी सामाजिक प्रयोजनवत्ता है। उसका विकास मूलतः प्राकृतिक एवं स्वैच्छिक आधार पर सामाजिक आवश्यकता से प्रेरित होता है। इससे यह तात्पर्य नहीं लिया जा सकता कि सिर्फ भाषा, समाज सापेक्ष है क्योंकि समाज भी अपनी पूर्ण अभिव्यक्ति के लिए भाषा पर निर्भर करता है। किसी सामाजिक परिवेश में प्राप्त अनुभव, घटनाएं, अनुभूतियां, मूल्य आदि उस समाज में प्रयुक्त भाषा के माध्यम से रूपायित होते हैं। प्रत्येक समाज का भिन्नता रखने वाला रहन-सहन, खान-पान, रीति-रिवाज भाषा में प्रतिबिम्बित होता है जैसे तटवर्ती प्रदेशों (केरल, बंगाल) की भाषाओं की तुलना में मैदानी क्षेत्रों (उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश) की भाषा हिन्दी में समुद्री जीवन से सम्बन्धित शब्द अल्प मात्रा में मिलते हैं। प्राचीन वैदिक समाज में यज्ञ आदि अनुष्ठानों से सम्बन्धित शब्द प्रचुर

वशिष्ठ प्राध्यापक, भाषाविज्ञान विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ।

मात्रा में मिलते हैं, जैसे सुमिधा, जबकि तत्कालीन भाषा संस्कृत की पुत्री हिन्दी भाषा में यह शब्द नहीं हैं। कारण यह है कि आज यज्ञ, हवन हमारी दैनिक सामाजिक पद्धति का उतना महत्वपूर्ण अंग नहीं है। समाज की आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक, भौगोलिक स्थितियां भी भाषा को प्रभावित करती रहती हैं। सामाजिक स्तर में विविधता भाषा रूप में भिन्नता लाती है और शिक्षा, व्यवसाय, आयु, लिंग के अनुरूप भाषा का स्वरूप परिवर्तित होता है। भाषा एक है समाज में उसके विविध रूप प्रयोग में आते हैं जैसे हिन्दी में अमां, यार आदि अभिव्यक्तियां युवावर्ग तक सीमित रहती हैं या "ऊई मां", "हाय दैय्या" जैसे प्रयोग सिर्फ स्त्री वर्ग करता है। इसी प्रकार कुछ अपशब्दों का प्रयोग आर्थिक रूप से पिछड़े वर्ग द्वारा ही किया जाता है जबकि संभ्रान्त व शिक्षित के लिए वे शब्द वर्णित समझे जाते हैं। इसी प्रकार विविध व्यवसाय से जुड़े व्यक्ति एक ही भाषा के भिन्न-भिन्न रूपों का प्रयोग करते हैं। कभी-कभी इनमें इतनी भिन्नता होती है कि दूसरे वक्ता के लिए वह भाषा रूप पूर्णत: बोधगम्य नहीं होता है, जैसे वकीलों की भाषा। स्पष्ट है कि कोई भी भाषा समाज की आवश्यकता एवं उन्नति के साथ विकसित एवं परिवर्धित होती है। यह मूलत: एक सामाजिक यथार्थ है जो सामाजिक उपकरणों एवं सन्दर्भों से जुड़कर ही व्यावहारिक और सार्थक बनती है। "उसने उससे उसके बारे में बात की" जैसे वाक्य पूर्व सन्दर्भ के अभाव में अर्थ स्पष्ट नहीं करते हैं। अत: कह सकते हैं कि भाषा की कोई निरपेक्ष या पूर्ण सत्ता नहीं है। यह सदैव सामाजिक सम्पर्क व सीमाओं से आबद्ध रहती है और समाज में होने वाले आन्तरिक एवं बाह्य अन्तर्विरोध उसके स्वरूप को प्रभावित करते हैं। यह स्थिति समाज व्यवस्था में परिवर्तन लाती है जिसके परिणामस्वरूप भाषा परिवर्तित होती है। इस प्रकार भाषा और समाज सिक्के के दो पार्श्वों की भांति है जिन्हें एक दूसरे से विलग करना सम्भव नहीं होता है। ये एक बिन्दु से प्रारम्भ हो कर अन्त तक साथ-साथ चलते हैं और आद्यान्त: अन्योन्याश्रित रहते हैं।

आज के दशक में समाज के साथ प्रवाहमान एवं विकसित होती भाषा के नियोजन पर विचार करना भी अनिवार्य है क्योंकि सामाजिक होते हुए भी प्रत्येक भाषा की एक निजता एवं अस्मिता है जिस पर समस्त भाषा प्रयोक्ताओं को गर्व होता है जो उन्हें एक सूत्र में बांधती है। किन्तु कभी-कभी भाषा को व्यावहारिक एवं सरल बनाने के नाम पर उसकी निजता एवं अस्मिता पर घातक प्रहार किए जाते हैं और भाषा का शोषण होता है। आज हिन्दी के सन्दर्भ में यही स्थिति देखने को मिलती है। शिक्षित आधुनिकता का जामा पहने गुलामी मानसिकता में जकड़े लोग हिंदी के ऐसे रूप का प्रयोग करते हैं जो न हिंदी भाषा है और न अंग्रेजी। "आज मेरी फ्रेन्डें लंच पर आ रही हैं"; तुमने मेरी शूज पॉलिश कर दीं; तुम तुम्हारी बहन के घर क्यों नहीं गए? ज्यास्ती बोलने का नईं; खलास कर देगा; अपुन को ऐसा नई चलेगा; मैने जाना है आदि आज के बहुप्रचलित प्रयोग हैं। माना कि इनमें से कई क्षेत्रीय भाषाओं के सम्पर्क से प्रभावित रूप हैं किन्तु क्या हिंदी के साथ किया गया यह खिलवाड़ उचित है? भाषाविद् होने के नाते मैं तो स्वयं भाषा के व्यवहृत रूप को महत्व देती हूं किन्तु भाषा का इतना उत्पीड़न भी उचित नहीं कि उसकी निजता नष्ट हो जाए। अत: आज आवश्यकता इस बात की है कि हिन्दी संरक्षण के प्रयास सिर्फ "हिंदी दिवस" तक सीमित न रहें। सरकारी एवं गैर सरकारी संस्थाएं सिर्फ "हिंदी पखवाड़ा" मना कर अपने दायित्व की इतिश्री न समझें। अन्यथा वह दिन दूर नहीं जब हम बाबू श्यामसुन्दर दास, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, महादेवी वर्मा सरीखे विद्वतजनों को प्रेयसी रही, भारतवर्ष की राष्ट्रभाषा, सात राज्यों की राजभाषा हिन्दी जिसे विश्व में तृतीय स्थान प्राप्त है, को खो बैठेंगे। आज आवश्यकता भाषा में फैले इस प्रदूषण को रोकने के लिए सकारात्मक प्रयास करने की है। यह कह कर बचने का प्रयास न करें कि भाषा समाज सापेक्ष है समाज से बंधी है तो समाज का प्रदूषण इसे भी दूषित करेगा। समाज के निर्माता भी हम और आप ही हैं। आइए, इस अंग्रेजी रूपी केक्टस को उखाड़ फैकें जिसे हमारी मानसिक गुलामी ने निरन्तर सींचा है। आपसे विनम्र निवेदन है कि अपनी मातृभाषा के प्रयोग में झिझकें या शर्माएं नहीं वरन् गर्व महसूस करें, आपके द्वारा किया गया एक अकेला प्रयास भी गागर को भरने वाली बूंद का कार्य करेगा।

"राष्ट्र के एकीकरण के लिए सर्वमान्य भाषा से अधिक बलशाली कोई तत्त्व नहीं। मेरे विचार में हिन्दी ही ऐसी भाषा है।"

लोकमान्य तिलक

भारतीय-न्यायपालिका : राजभाषा-प्रवेश की मानसिकता

—डॉ० सुरेन्द्र प्रसाद जमुआर

भारत की व्यवस्था में विधायिका और कार्यपालिका के बाद, न्यायपालिका (जुडीसियरी) का विशिष्ट महत्व है। 1950 में निर्मित संविधान-सभा के निर्णय के पश्चात्, पन्द्रह वर्ष 1965 की निर्धारित अवधि समाप्त हो गई। आज स्वतंत्रता के पचास वर्ष बीत जाने के बाद भी, जनता के साथ, न्याय के क्षेत्र में सदा खिलवाड़ होता रहा है। विधायिका और कार्यपालिका में तो कमोवेश राजभाषा हिन्दी का प्रचलन हो रहा है, उसकी नीतियां कार्यान्वित हो रही हैं। गुप्तकालीन राज में अदालत की भाषा प्राकृत-मिश्रित संस्कृत थी। मुगलों के शासन-काल में, न्यायालय की भाषा अरबी-मिश्रित फारसी थी, किन्तु स्वतंत्रता के बाद भारत की न्यायपालिका अंग्रेजी का व्यामोह त्याग नहीं सकी है। स्वतंत्रता-पूर्व अंग्रेजी शासन-काल में केवल अंग्रेजी का व्यामोह त्याग नहीं सकी है। स्वतंत्रता-पूर्व अंग्रेजी शासन-काल में केवल अंग्रेजी राज्यकाल में सब अदालतों की भाषा अंग्रेजी हो गयी और वही भाषा अब भी न्यायालयों में बखूबी चल रही है, पनप रही है और फल-फूल रही है। हम आज भी न्यायपालिका को लेकर, अंग्रेजी के वातावरण के दास बने हुए हैं। जनता के प्रतिनिधियों के दिमाग में हिन्दी कोई स्थान नहीं बना पाई है। संसद में विधेयक अंग्रेजी में ही पेश होता है, जहां से कानून बनता-संवरता है। रस्म अदायगी के तौर पर केवल इसका हिन्दी-अनुवाद प्रस्तुत किया जाता है। इसलिए अंग्रेजी पाठ ही न्यायालय में परिलक्षित होता है। यदि सभी राज्यों के संसद-सदस्यों के मन में ऐसी मानसिकता पनपे की राजभाषा हिन्दी के होने से विधेयक "मूल रूप में" हिन्दी में ही पेश किए जाएं और वह, तो यह एक लोकोतर कदम होगा। न्यायपालिका में हिन्दी के प्रवेश को कोई रोक नहीं सकता। ईस्ट-इंडिया कम्पनी के शासन के प्रारंभिक काल में न्यायालयों का कार्य अधिकतर फारसी में होता था। 1836 में फारसी का प्रयोग बन्द होने पर, उसका स्थान उर्दू और अंग्रेजी ने ले लिया।

उच्च न्यायालयों द्वारा हिन्दी में दिए गये निर्णयों का अंग्रेजी अनुवाद देना अनिवार्य नहीं होना चाहिए, बल्कि वकीलों का फैसला भी हिन्दी में होना चाहिए। उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों की भाषा से जुड़े अनुच्छेद 343 खण्ड में यह उपबन्ध कर दिया गया कि जब तक संसद द्वारा अन्यथा उपबन्ध न किया जाए तब तक भारतीय न्यायपालिका की सभी कार्यवाहियां अंग्रेज़ी भाषा में होंगी। राजभाषा हिन्दी के प्रवेश के लिए न्यायपालिका के कपाट बन्द हैं। कुछ न्यायपालिकाओं में हालांकि हिन्दी के व्यवहार में लाई जा रही है। परन्तु वहां हिन्दी अब भी स्वच्छंद रूप से विचरण नहीं कर पा रही है। न्यायालय का क्षेत्र व्यापक होने से उसके क्षेत्राधिकार (जुरिसडिक्सन) में विधि, विधायन, विधि-शिक्षण आते हैं। वर्तमान विधि का जन्म-स्रोत विधायन से होता है, क्योंकि विधायन से ही विधि की रचना होती है। संविधान के अनुसार विधेयक पर प्रस्तावित किए जाने वाले संशोधन जो संसद के प्रत्येक सदन में पेश किए जाते हैं, उन सबका प्राधिकृत पाठ अंग्रेजी भाषा में होता है। विभिन्न हिन्दी भाषी-प्रदेश बिहार, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान, हरियाणा, जिन्होंने अपने राजभाषा अधिनियम पारित कर, अधिनियमों, नियमों, विनियमों, आदेशों, उपविधियों की भाषा मंजूर कर ली हैं उन्हें विधि क्षेत्र में चिन्तन और प्रारूपण का कार्य, जो अंग्रेजी में होता है, यथाशीघ्र हिन्दी में करना चाहिए। न्यायालय का कार्य मुख्यत: विधि का निर्वाचन करना होता है अत: विधि-विधायन हिन्दी के माध्यम से निर्मित होने चाहिए। जनवरी, 1965 से मार्च, 1998 तक दो लाख पृष्ठों का अनुवाद अर्थात् 2500 केन्द्रीय अधिनियमों के अनुवाद हो चुके हैं। केन्द्रीय अधिनियम को विभिन्न प्रादेशिक भाषाओं से अनुवाद का कार्य राज्य सरकारों के माध्यम से कराया जा रहा है।

राजभाषा हिन्दी समग्र देश की राष्ट्रीय एकता की कड़ी है। यह किसी प्रदेश की मातृभाषा नहीं है। इसकी गति सदा से समृद्धि की ओर रही है। इसने परिवर्तन को सदा स्वीकार किया है। बंगला, मराठी, गुजराती, पंजाबी आदि के शब्द रूप और विभक्तियां आदि हिन्दी की अपेक्षा संस्कृत के निकट सर्वाधिक है। हिन्दी अब उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान की भाषा न होकर, समस्त देश की भाषा बन गई है। राजभाषा हिन्दी को भारतीय संविधान ने निर्धारित किया है। राष्ट्रभाषा (नेशनल लैंग्वेज) जनता की भाषा होती है और उसकी रूप-रचना भी जनता ही करती है, परन्तु राजभाषा (आफिसियल लैंग्वेज) प्रशासन की भाषा होती है और सरकार उसकी संवर्धन करती है। हिन्दी के द्वारा ही समस्त देश का हित संभव है। लेकिन अंग्रेजों के जाने के बाद अंग्रेजियत का चाव लोगों में बढ़ा है जिसे हिन्दी वालों ने ही और अधिक बढ़ाया है। अधिकांश माता-पिता अपने बच्चे को पब्लिक स्कूल में भेजकर अंग्रेजी की शिक्षा दिलाना चाहते हैं। विश्वविद्यालयों में शिक्षा का माध्यम, न्यायपालिका की तरह अधिकांश विश्वविद्यालयों में अंग्रेजी है। वस्तुत: अंग्रेजी प्रादेशिक भाषाओं और पर थोपी हुई है। इस हालात में, हमें समझ-बूझकर न्यायालयों में हिन्दी प्रवेश हेतु मानसिकता तैयार करनी होगी।

वन्दना कुटीर, दुजरा, पटना-800001

केन्द्रीय राजभाषा-कार्यान्वयन समिति, नगर राजभाषा-कार्यान्वयन समितियां, हिन्दी-सलाहकार-समितियां, केन्द्रीय हिन्दी समिति, राज्यों की हिन्दी प्रगति समितियां—इन समितियों को एक होकर, न्यायपालिका में राजभाषा हिन्दी के प्रवेश एवं प्रयोग की समस्याओं पर नीतियां निर्धारित करनी होंगी। सभी राज्यों के राजभाषा विभागों को दिल्ली में एक सम्मेलन आयोजित कर ''न्यायपालिका में हिन्दी के प्रवेश पर'' ठोस निर्णय लेना होगा। विधि-शिक्षा में हिन्दी माध्यम अधिक उपयुक्त है। पारिभाषिक शब्दों के अर्थ-ग्रहण की समस्या का निदान अपेक्षित है। अंग्रेजों ने भारतीय भाषा के रूप में उर्दू को स्वीकार कर, अंग्रेजी के विधि सम्बन्धी कुछ अनुवाद उर्दू में ही तैयार किए। केन्द्रीय विधेयकों और अधिनियमों (लॉज एण्ड एक्टस्) के उर्दू अनुवाद प्रस्तुत करने की घोषणा से, हिन्दी के प्रयोग में व्यवधान आया। 1897 में नागरी प्रचारिणी सभा, काशी के सत्प्रयास से 1901 में न्यायालयों की भाषा बनी और लिपि के प्रयोग की अनुमति प्राप्त हो सकी। खिचड़ी भाषा से बचने के लिए साहित्य-मनीषी राहुल सांस्कृतायन ने 1948 में हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग से ''प्रशासन शब्दकोश'' 1963 में और पटना में बिहार सरकार के राजभाषा विभाग के माध्यम से ''राजभाषा पारिभाषिक शब्दार्णव'' 1970 में निकाले। अप्रैल 1960 में राष्ट्रपति उनके कार्यालय से निर्गत एक आदेश के अनुच्छेद 13 में ''मानक विधि-शब्दावली'' लागू करने की मंजूरी दी। ''विधि शब्दावली'' 1970 में निकली, जो विधिक शब्दावली का मानक ग्रन्थ है। इसके बाद अनेक केन्द्रीय अधिनियमों आदि का अनुवाद किया जा चुका है। इनमें जिन विधिक शब्दों और अधिनियमों का प्रयोग हुआ है, उनके पर्यायों का समावेश कर 1979 में इस शब्दावली का दूसरा संस्करण (394 पृष्ठ) है। शुरू में विधि की हिन्दी कठिन लगती है, किन्तु बाद में प्रयोग करते-करते आसान हो जाती हैं। पुस्तकालयों की शोभा न बढ़ाकर, विधि में हिन्दी का प्रयोग न्यायालयों में प्रचारित करने की महती जरूरत है। राष्ट्रपति द्वारा 14/2/1950 को न्यायालय में हिन्दी प्रयोग के लागू होने के 20 दिनों की अल्पावधि में उच्च न्यायालय में हिन्दी प्रयोग का प्राधिकृत करने वाला संभवतः ''राजस्थान'' सर्वप्रथम राज्य था। न्यायिक कार्यों में हिन्दी के प्रयोग की पर्याप्त व्यवस्था के बाद, उत्तर प्रदेश विधान मण्डल द्वारा ''उत्तर प्रदेश राजभाषा (अधीनस्थ न्यायालय) अधिनियम, 1970'' पारित किया गया। उत्तर प्रदेश की उच्च न्यायालयीय समस्त कार्यवाहियों में तथा उच्च न्यायालय द्वारा दिये जाने वाले समस्त निर्णयों आदि में हिन्दी का वैकल्पिक प्रयोग, विधितः प्राधिकृत किया गया, किन्तु न्यायालयों में राजभाषा-प्रवेश [illegible] प्रदेश में न्यायालयों में हिन्दी का उतना प्रयोग संभव नहीं हुआ है। बिहार में 1980 में ''न्यायिक-हिन्दी-प्रशिक्षण-संस्थान'' की स्थापना करके, बिहार सरकार ने न्यायालय में अभी चरण बढ़ाए हैं। बिहार के न्यायालयों में हिन्दी पूर्ण रूप से प्रवेश नहीं कर पाई है।

विधि-प्रारूपण के सिद्धांत में सही अर्थ पहले आना चाहिए। विधि-शब्दावली-संचयन, विधि प्रारूपण के सिद्धांतों के अनुसार होता है। विधि का सम्बन्ध मानव के व्यक्तिगत और सामूहिक जीवन से, सम्पत्ति की सुरक्षा से, सामाजिक व्यवस्था नियमन से बड़ा व्यापक और गहरा है। विधि की भाषा में संक्षिप्तता, यथार्थता, सुस्पष्टता को तरजीह देनी होती है। विधि के पाठ मूलतः हिन्दी में तैयार हों तो न्यायालय की भाषा स्वयं हिन्दी हो सकती है। हिन्दी-भाषी राज्यों में राजभाषा-अधिनियम बनाए गए, जिनके अधीन हिन्दी में विधेयक पारित होने लगे। विधि की हिन्दी का सुन्दर और निखरा हुआ रूप तभी बन सकता है जब विधि-शिक्षा भी तदनुरूप हिन्दी में दी जाए। विधि की हिन्दी में नए शब्द गढ़े गए हैं। केवल उपसर्ग और प्रत्यय के प्रयोग से संस्कृत की एक धातु से हम अनेकों शब्द बना सकते हैं जैसे 'हृ' धातु से हार, बिहार, संहार, उपहार, उपसंहार और ''बस'' धातु से वास, आवास, उपवास आदि शब्द बन सकते हैं। विधि-प्रारूपण के लिए हिन्दी में नए शब्द आने पर, आपत्ति नहीं की जानी चाहिए। प्रयोग से ऐसे शब्द रूढ़ बन जाएंगे। हिन्दी में विधि को लाने का उद्देश्य तो यह है कि विधि समझने वालों का दायरा बढ़े। अर्थ-निश्चितता लाने का प्रयास हिन्दी में विधि को इतना दुरूह या अरुचिकर न बना दें कि हिन्दी सभी राज्यों के न्यायाधीश, अधिवक्ता और विधिवेत्ता आदि भी उसके विरोधी बन जाएं। विधि में शब्दावली अविकृत और प्रकृत हो। विधि का प्ररूपण मूलतः हिन्दी भाषा में हो तो न्यायपालिका में राजभाषा हिन्दी के प्रवेश की मानसिकता आसानी से तैयार की जा सकती है। यह बात अवश्य है कि विधि प्रस्ताव के कार्य में प्रारूपकार सीमित मौलिकता ही ला सकता है। अनुवाद को केवल अनुवाद ही न समझा जाए, वरन् यह समझा जाए कि उसी आशा को लेकर विधि का प्रारूपण मूलतः किया जा रहा है। जिस विधि का प्रारूपण किया जा रहा है वह जनता को पढ़ना और समझना है तथा उसका निर्वचन भी न्यायालयों में करना है। भारत की भाषाओं में विदेशी कानून को व्यक्त करने के लिए शब्दावली की समस्या अंग्रेजी राजकाज में उठी थी। कुछ दिनों तक ''उर्दू'' कानून की भाषा बनी, जिसका प्रयोग ''ताजीरात हिन्द'' में किया गया है। न्यायालय में आज तक मुख्तार, वकील, अर्जीनवीस, नकल-नवीस, अदालत के शब्द मौजूद हैं।

संविधान के अनुच्छेद 351 में हिन्दी की शब्दावली को समृद्ध करने का निदेश है। उर्दू भाषा में किए गए अनुवाद में जो शब्द उन संकल्पनाओं को व्यक्त करने हेतु काम में लाए गए थे, उन्हें अपना लिया जाए। संस्कृत के विधिक साहित्य में प्रयुक्त शब्दों को ले लिया जाए, या उस भाषा की सहायता से नए शब्दों को गढ़ लिया जाए। हिन्दी में सहज पचने वाले शब्द लेना जरूरी है जैसे ''सेक्रेटेरियट'' के लिए ''सचिवालय'', एडिशनल सेक्रेटरी के लिए ''अपर या अतिरिक्त सचिव'', अण्डर सेक्रेटरी के लिए अवर सचिव। देशरत्न डॉ० राजेन्द्र प्रसाद ने संविधान-सभा के अध्यक्ष के नाते यह आदेश दिया कि भविष्य में भारत भर में एकरूप मानक सांविधानिक और विधिक शब्दावली हो। भारत के संविधान के हिन्दी पाठ में वे ही शब्द और पदावलियां प्रयुक्त हो जिस हिंदी के प्रति सबका सद्भाव बने। हमें न्यायालय में जनता की राजभाषा हिंदी में प्रयोग शीघ्र से शीघ्र करना जरूरी है। न्यायपालिका का दायित्व पिछले पांच-छह वर्षों में बहुत बढ़ गया है। पूर्व संसद्-सदस्य वाल्मीकि चौधरी ने 'धर्मयुग' (बम्बई—साप्ताहिकी लेकिन अब 1996 से बन्द) के 7-9-69 अंक 'न्यायालय में हिंदी' ''लेख में लिखा है कि न्यायालय के जज, जो हिंदी नहीं जानते हों, या हिंदी में अपना फैसला नहीं लिख सकते हों, उनको अंग्रेजी के साथ हिंदी में भी फैसला तैयार करने के लिए सुविधा प्रदान की जानी चाहिए। लोकतंत्र में सुव्यवस्थित ढंग से काम करने के निमित्त यह अत्यंत लाजिमी है।''

नवंबर 1987 में उच्च न्यायालयों को हिन्दी में निर्णय सुनाने की मान्यता प्रदान करने वाले संविधान-संशोधन-विधेयक का राज्यसभा में सर्वसम्मति से पारित होना एक अच्छी शुरुआत थी। यह देश की जनता की मांग और मनोभावों के अनुरूप किया गया। पूर्ण स्वाधीनता की एक अनिवार्य शर्त आजादी के दिन से ही राष्ट्रभाषा में समस्त राजकाज की घोषणा आवश्यक होती है। केन्द्र तथा राज्यों के उच्च न्यायालयों और अवर न्यायालयों में हिन्दी में फैसला चुनने की वैधानिक सुविधा मिली है। राज्यसभा में संविधान के हिन्दी में अधिकृत अनुवाद को मान्यता देने वाले विधेयक को लोकसभा में पहले ही मंजूरी मिल चुकी है। महामना मदन मोहन मालवीय ने न्यायालयों में हिन्दी में निर्णय सुनाने तथा नागरी लिपि में अदालती कागज स्वीकार करने का आंदोलन आधी शताब्दी के पहले ही किया था। हिंदी के प्रति संपूर्ण देश की निष्ठा/आस्था होनी चाहिए। संविधान-सभा में पेश हिंदी अनुवाद को न्यायालय के द्वारा मान्यता नहीं मिलना दुर्भाग्य पूर्ण था। विश्वास है कि अब देश की संपूर्ण न्यायपालिका, राजभाषा हिंदी में अपना न्यायिक निर्णय (जुडिशियल डिसीजन) देकर, देश के स्वतंत्र राष्ट्र के गौरवानुकूल कार्य करेंगे। कानूनी स्थिति यही है कि संपूर्ण न्यायपालिका की भाषा तब तक अंग्रेजी ही बनी रहेगी, जब तक संसद कानून या विधि बनाकर, हिन्दी को न्यायपालिका की भाषा नहीं बना देती। समय का तकाजा है कि केन्द्र सरकार, हिन्दी को शीघ्रताशीघ्र भारतीय न्यायपालिका की भाषा हिंदी बनाने में जरा भी देर नहीं करें।

उच्चतम-न्यायालय ने 1905 में सिविल-प्रक्रिया-संहिता की धारा 137 के अधीन आदेश निकालकर, साक्ष्य (विटनेस) लिखने हेतु अंग्रेजी को अनिवार्य कर दिया। लेकिन उसे तुरन्त बदल देने की वांछनीयता है। केन्द्र सरकार का यह अध्यादेश तुरंत निकालना चाहिए। संविधान के अनुच्छेद 348 (2) और केन्द्रीय राजभाषा अधिनियम, 1963 की धारा 7 के अधीन पटना उच्च न्यायालय से फौजदारी तथा दीवानी मामलों में हिन्दी में बहस करने तथा शपथ-पत्रों एवं वाद-पुस्तिकाओं में हिन्दी का प्रयोग करने के विषय में तुरंत सहमति मिलनी चाहिए। आवश्यक है कि न्यायालयों में अपील योग्य केसों के अभिलेखों को अनूदित करने का कार्यक्रम बनाया जाए और न्यायालय-मार्गदर्शक-प्रामाणिक-विधि-ग्रंथों का हिंदी अनुवाद उपलब्ध कराया जाए। इस दृष्टि से बिहार सरकार ने 1980 में पटना उच्च न्यायालय के सेवा-निवृत्त न्यायाधिपति की अध्यक्षता में "न्यायिक हिंदी प्रशिक्षण संस्थान" (जुडिसिशयल हिंदी ट्रेनिंग इंस्टीच्यूट) की स्थापना की है तथा हिन्दीकरण संबंधी अधिसूचना, अधिनियमों परिपत्रों तथा आदेशों का संकलन 1980 में निकाला। न्यायपालिका में हिन्दी को कार्यक्षम बनाने में हिन्दी के अनुवादक, शब्दावली-निर्माता (लेक्सिकोग्राफर), परिमार्जक, नींव की ईंट का कार्य करेंगे। हिंदी-विधि-प्रारूपकारों को प्रशिक्षण की विधि-मंत्रालय के अंतर्गत बिहार का "राजभाषा-विधायी-आयोग" व्यवस्थी कर रहा है।

राजभाषा और विधि-विभाग के हिन्दी से संबंधित प्रयासों के क्रम में परस्पर समन्वय अपरिहार्य है जिससे भारतीय न्यायपालिका में राजभाषा हिंदी के प्रवेश की मानसिकता तैयार होगी। राजस्थान में विधि और सांविधिक लिखतों (इंस्ट्रूमेंट्स) का मौलिक प्रारूपण अब हिंदी में होने लगा है। हिंदी अपनी सार्वभौमिक मानसिक आत्मचेतना के बल पर राष्ट्रध्वज और राष्ट्रचिह्न, अशोकचक्र की भांति विश्वबंध और सर्वजन स्वीकृत होंगे। हिंदी की प्रगति 1973 के बाद से संतोषजनक कही जा सकती है, हालांकि इसमें पहले से अधिक काम होना रह गया है। हिंदी को राष्ट्रीय संपर्क के लिए विकसित करना है। हिंदी के विधि माहविद्यालयों को अपनी भूमिका निभानी होगी। कानून की न्यायिक सेवा के जो पदाधिकारी हिंदी के प्रशिक्षण से वंचित हैं, उन्हें हिंदी का पर्याप्त ज्ञान कराने की व्यवस्था शीघ्र होनी चाहिए। किसी भी न्यायालय को कार्य करने हेतु यह वांछनीय है कि उनके पास निर्वचन करने हेतु अधिनियमों की हिंदी प्रतियां हमेशा मौजूद रहनी चाहिए। हिंदी भाषी राज्यों के भाषा-विधि मंत्रियों ने तृतीय सम्मेलन के अवसर पर, राजभाषा विभाग, बिहार सरकार ने 1971 में आयोजन किया था और 27-9-1978 को "न्यायालय हिंदीकरण-संगोष्ठी" संयोजित की थी।

"हिन्दी का उद्देश्य यही है, भारत एक रहे अविभाज्य,
यों तो रूस और अमरीका जितना है उसका जन राज्य।
बिना राष्ट्रभाषा स्वराष्ट्र की, गिरा आप गूंगी असमर्थ,
एक भारती बिना हमारी भारतीयता का क्या अर्थ।।"

- राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त

चिकित्सा विज्ञान की शिक्षा में हिन्दी माध्यम की आवश्यकता

—जगन्नाथ

कितनी विचित्र बात है कि स्वतंत्रता के पचास वर्ष के बाद भी हमारे देश में यह भी विवाद का विषय है कि चिकित्सा, इंजीनियरी और अन्य तकनीकी ज्ञान-विज्ञान की पढ़ाई का माध्यम हिंदी अथवा अन्य भारतीय भाषाएं हों अथवा नहीं। विश्व में सभी उन्नत और विकसित देश प्रत्येक प्रकार की पढ़ाई अपनी-अपनी भाषाओं में कराते हैं। अणुबमों की मार से पूर्णतया ध्वस्त और पराजित जापान भी देखते-देखते सभी प्रकार की तकनीकी और ज्ञान-विज्ञान की पढ़ाई अपनी भाषा के माध्यम से कराकर इतना शक्तिशाली और उन्नत हो चुका है कि अमेरिका जैसे राष्ट्र को भी ललकारता और चुनौती देता है। किंतु भारत में कुछ अंग्रेजी भक्तों ने देश की भाषाओं के विरोध में ही एक सुगठित और गहरा षड्यंत्र किया हुआ है। इसके दुष्प्रभाव से भारतीय भाषाओं के प्रेमी भी कभी-कभी भ्रमित हो जाते हैं। इसलिए आवश्यक है कि इस षड्यंत्र द्वारा प्रस्तुत किए गए कुतर्कों का युक्तियुक्त उत्तर देकर भ्रम दूर कर दिया जाए। यद्यपि ये तर्क सभी विषयों पर लागू होते हैं, किंतु प्रस्तुत लेख में केवल चिकित्सा विज्ञान की पढ़ाई के माध्यम तक ही ध्यान केन्द्रित रहेगा और हम हिन्दी की बात करेंगे तो उसको प्रतीक मानकर हम हिंदुस्तान की सभी भाषाओं की बात ही कर रहे होंगे।

सभी मनोवैज्ञानिक और शिक्षा-शास्त्री यह मानते हैं कि अपनी भाषा में ही कोई व्यक्ति ज्ञान और विज्ञान अधिक आसानी से समझ कर ग्रहण कर सकता है। मातृभाषा से भिन्न भाषा के माध्यम से पढ़ने में उसकी बहुत सी शक्ति उस भाषा को सीखने-समझने में ही नष्ट हो जाती है और मुख्य विषय पड़ा ही रह जाता है। ऐसी कठिनाई तब और भी बढ़ जाती है जब वह कोई ऐसी भाषा पढ़ने को बाध्य हो जिसकी लिपि भी अनेक दृष्टियों से अत्यन्त अवैज्ञानिक और अधूरी हो।

पुस्तकों के अभाव का व्यर्थ शोर

वास्तविकता जाने बिना ही एक दलील प्राय: यह दी जाती है कि हिंदी में चिकित्सा संबंधी साहित्य और संदर्भ-पुस्तकों का अभाव है। परन्तु पिछले 10-15 वर्षों में प्रत्येक विषय में पर्याप्त साहित्य हिन्दी में भी उपलब्ध हो गया है। भारत सरकार के वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग ने ही बृहत् प्रशासन शब्दावली (1993) की प्रस्तावना में स्पष्ट किया है कि अब तक हिंदी की लगभग 2400 पुस्तकें और अन्य भारतीय भाषाओं की 7000 पाठ्य पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग सरल बनाने तथा उनकी परिभाषागत संकल्पनाएं स्पष्ट करने की दृष्टि से आयोग विभिन्न विषयों के मानक परिभाषा कोश भी तैयार कर रहा है। अभी तक आयोग द्वारा विभिन्न विषयों में ऐसे 24 परिभाषा-कोश प्रकाशित हो चुके हैं। लगभग 20,000 परिभाषाओं के दो बृहत् परिभाषा-कोश (एक विज्ञान विषयों का और दूसरा मानविकी विषयों का) शीघ्र ही प्रकाशित करने की योजना है।

सूचना एवं प्रकाशन निदेशालय, वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली ने 1981-90 में प्रकाशित "हिन्दी वैज्ञानिक और तकनीकी प्रकाशन निदेशिका" में और इससे पहले प्रकाशित अन्य निदेशिकाओं में हजारों पुस्तकों की सूचना दी है, जिनमें बहुत सी चिकित्सा-विज्ञान संबंधी पुस्तकें भी हैं। राज्य सरकारों की अकादमियों और निजी प्रकाशनों ने भी बहुत सी पुस्तकें प्रकाशित की हैं। चिकित्सा विज्ञान संबंधी विषयों में अनेक पत्रिकाएं 60-70 साल से छप रही हैं। जब से भारत सरकार के मंत्रालयों और विभागों आदि ने अपने-अपने विषयों में हिन्दी में तकनीकी और चिकित्सा-संबंधी विषयों पर अच्छी मौलिक पुस्तकें हिन्दी में लिखने पर नगद पुरस्कार देने की योजना आरम्भ की है, तब से इस दिशा में बहुत प्रगति हुई है।

फिर भी बड़े-बड़े शिक्षण संस्थानों के ऊंचे पदों पर बैठे अंग्रेजी के पक्षधर विद्वान् बिना सोचे-समझे और पता लगाए ही व्यर्थ शोर मचाते हैं कि हिन्दी में पुस्तकें नहीं हैं इसलिये पढ़ाई के लिये अंग्रेजी माध्यम अनिवार्य है। वे यह नहीं सोचते कि क्या रूस, जर्मनी, जापान जैसे देशों में इतनी चमत्कारपूर्ण प्रगति अंगेजी माध्यम से ही की है? एक बार हिन्दी माध्यम से पढ़ाई प्रारम्भ कर दी जाए तो बहुत से लेखक और प्रकाशक स्वयं आगे बढ़ेंगे और पुस्तकों की कभी भी कहीं कमी होगी भी तो साथ-साथ पूरी होती रहेगी। आरम्भ में कुछ कठिनाई हो तो शिक्षक भी मिली-जुली भाषा में शिक्षा दे सकते हैं और परीक्षार्थियों को भी अंगेजी के तकनीकी शब्द प्रयोग करने की छूट दी जा सकती है। भारत सरकार ने आरम्भिक चरणों में मिली-जुली भाषा के प्रयोग की अनुमति दे ही रखी है।

कहीं से हो आरम्भ करना ही होगा

एक बात यह कही जाती है कि देश के सभी चिकित्सा कालेजों में भाषा परिवर्तन एक साथ होना चाहिए ताकि विद्यार्थियों का स्थानांतरण (माइग्रेशन) आसानी से हो सके। इस संबंध में निवेदन है कि ऐसे मामले बहुत कम होते हैं और विद्यार्थी जिस कालेज में पढ़ना आरम्भ करता है, प्राय: उसी से पढ़ाई पूरी करके निकलता है। अत: शिक्षा का माध्यम परिवर्तन हिंदी-भाषी राज्यों के कालेजों से आरम्भ किया जा सकता है।

उनमें भी तत्काल सभी में माध्यम बदलने की संभावना न हो तो प्रत्येक राज्य के कुछ कालेजों में तत्काल माध्यम बदला जा सकता है। हिन्दीतर भाषी राज्यों में भी कुछ कालेजों में संबंधित राज्यों की अपनी-अपनी भाषाओं में पढ़ाई आरम्भ कराई जा सकती है।

आयुर्वेदिक चिकित्सा की पढ़ाई का उदाहरण

देश के अनेक भागों में सदियों से ही आयुर्वेद चिकित्सा की पढ़ाई हिन्दी माध्यम से होती आ रही है। रोग के निदान और लक्षण आदि सब प्रकार की चिकित्सा पद्धतियों में समान होते हैं। ऐसी सामान्य पढ़ाई आयुर्वेदिक पद्धति की तरह होमियोपैथी और एलोपैथी में भी हिन्दी में हो सकती है। देश की 80 प्रतिशत आबादी देहातों में रहती है जहां आयुर्वेदिक या होमियोपैथिक चिकित्सक ही अधिक उपलब्ध होते हैं। आयुर्वेदिक चिकित्सा की शिक्षा का माध्यम तो अधिकतर हिन्दी है ही। किंतु कालेजों में होमियोपैथिक और एलोपैथिक चिकित्सा की शिक्षा का माध्यम हिन्दी नहीं होने से इन विषयों की पढ़ाई की सुविधा कुछ ऐसे परिवारों तक ही सीमित रह गई है जिनके बच्चे अंग्रेजी माध्यम से पढ़े होते हैं। पढ़ाई के बाद ऐसे लोग प्राय: देहातों में जाना पसंद ही नहीं करते। फलस्वरूप अधिकांश भारतीय जनता चिकित्सा-सुविधा से वंचित रह जाती है। यदि कभी किसी मजबूरी से वे अनमने देहात में पहुंचते भी हैं तो मन में अंग्रेजी पढ़े होने की मिथ्या श्रेष्ठता-भावना पालते हुए वे अपने रोगियों से एकात्म नहीं हो पाते, उन्हें अपेक्षित अपनत्व और सहानुभूति नहीं दे पाते। इसका मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ता है और उनकी चिकित्सा से अपेक्षित लाभ नहीं होता। डाक्टर और रोगी का परस्पर अनौपचारिक स्नेह-संबंध चिकित्सा-विज्ञान का मूल मंत्र है जो किसी भी औषधोपचार से अधिक महत्वपूर्ण होता है।

यह भी एक सामान्य अनुभव है कि अंग्रेजी वातावरण में शिक्षित चिकित्सक अपना भविष्य सुधारने के लिये प्राय: विदेश जाने के लिये विशेष उत्सुक रहते हैं। फिर तो उनकी पढ़ाई में लगा देश के करदाता का पैसा व्यर्थ ही चला जाता है। उससे विदेश ही लाभान्वित होते हैं। ध्यानपूर्वक सोचा जाए तो देश से प्रतिभा-पलायन रोकने के लिये यह आवश्यक है कि पढ़ाई हिन्दी माध्यम से ही कराई जाए। 1981 की जनगणना के अनुसार देश में केवल आधे प्रतिशत लोगों की मातृभाषा अंगेजी है। देश की समस्याओं के समाधान में इन आधा प्रतिशत लोगों का एकाधिकार बने रहना भारत जैसे गरीब देश की प्रतिभाओं के साथ किया जा रहा एक क्रूर मजाक है।

अध्यापकों की समस्या

कहा जाता है कि हिन्दी के पढ़ाने के लिये सुयोग्य अध्यापकों की कमी है। यह तर्क भी थोथा है। अभी भी बहुत से अध्यापक बच्चों को मिली-जुली भाषा में पढ़ाते हैं तभी उनके पल्ले कुछ पड़ता है। अध्यापकों को विशेष कक्षाएं लेकर और कार्यशालाएं आयोजित करके हिन्दी माध्यम से पढ़ाने में सक्षम बनाया जा सकता है। उन्हें विशेष भत्ता देकर भी प्रोत्साहित किया जा सकता है। और सच बात तो यह है कि यदि कोई शिक्षक सचमुच अपने विषय का अधिकारी विद्वान् है तो वह अपनी भाषा में अधिक अच्छी तरह पढ़ा सकता है। उसकी पढ़ाई की योग्यता पर संदेह करना उसके विषय के ज्ञान पर ही संदेह करना है। कोई भी विषय ज्ञाता यदि अपनी भाषा में वह विषय समझा नहीं सकता तो उसे ज्ञाता नहीं "रट्टू तोता" ही कहा जा सकता है।

संविधान के अनुसार प्रत्येक नागरिक को उन्नति के समान अवसर दिये जाने जरूरी हैं। किन्तु यह एक विडम्बना ही है कि तकनीकी और चिकित्सा-विज्ञान की पढ़ाई में अंग्रेजी की अनिवार्यता बनाए रखकर कुछेक परिवारों को अघोषित शत-प्रतिशत आरक्षण दे दिया गया है।

होमियोपैथ—डाक्टर अनिल अग्रवाल (जिनके विचार पत्र-पत्रिकाओं और दूरदर्शन पर प्राय: आते रहते हैं) लिखते हैं—

> "अंग्रेजी भाषा में लिखी पुस्तकों में रोग के लक्षणों की तुलना विदेशों में पाई जाने वाली परिस्थितियों से की हुई होती है। इससे यहां के डाक्टरों को किताबी ज्ञान तो हो जाता है, जो परीक्षा उत्तीर्ण करने में तो काम आ जाता है लेकिन रोगियों के रोग का निदान करने में डाक्टर अक्षम रह जाता है। यही कारण है कि विदेशी डाक्टर कहते हैं कि भारतीय डाक्टरों का किताबी ज्ञान तो अच्छा है लेकिन क्लीनिकल ज्ञान अधूरा होता है।"
>
> —रेल राजभाषा
>
> (अक्तूबर-दिसंबर—1994)

सुझाव

चिकित्सा-विज्ञान की पढ़ाई हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषाओं में कराए जाने के विषय में पहले भी कुछ प्रयास हुए हैं। 1992 के आस-पास भारत सरकार के स्वास्थ्य सेवा महानिदेशालय ने केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद्, केन्द्रीय कर्मचारी स्वास्थ्य सेवाओं के अधिकारियों तथा अन्य संस्थाओं आदि के सहयोग से दिल्ली में एक गोष्ठी का आयोजन किया था, जिसमें अनेक हिन्दीतर-भाषी डाक्टरों ने भी भाग लिया था। गोष्ठी में एलोपैथी, होमियोपैथी और आयुर्वेद सभी के चिकित्सक सम्मिलित हुए थे। उन्होंने जोर देकर भाषा माध्यम के परिवर्तन के बारे में कहा था। संगठित प्रयासों के अभाव में बात आगे नहीं बढ़ सकी। किन्तु तात्कालिक कार्यवाही के लिए यह सुझाव है कि छात्रों को तो मिली-जुली हिन्दी में उत्तर देने की छूट दे ही दी जाए।

उपसंहार

आज हिन्दी माध्यम से शिक्षा देने के लिये पक्का इरादा और सच्चे मन की आवश्यकता है। हिन्दी को अक्षम भाषा कहकर अपने दायित्व से मुक्ति नहीं मिल सकती। अब हमें अंग्रेजी की मानसिक गुलामी छोड़नी ही पड़ेगी। यही देश की तरक्की और चिकित्सा शास्त्र की उन्नति का एकमात्र उपाय है। पाठकों से भी अनुरोध है कि इस विषय में गोष्ठियों, मित्र-मंडलियों की बैठकों और सम्मेलनों आदि के माध्यम से संगठित और निरन्तर प्रयास करें। जब तक मिशन के रूप में आन्दोलन नहीं किया जाएगा, परिवर्तन संभव नहीं है।

संयोजक, केंद्रीय सचिवालय हिंदी परिषद

3176 HA/99—3A

देश की संपर्क भाषा और हिन्दी

—जगतपति शरण निगम

संपर्क भाषा वह भाषा होती है जो किसी क्षेत्र, प्रदेश या देश के ऐसे लोगों के बीच पारस्परिक विचार-विनिमय के माध्यम का काम करे जो एक दूसरे की भाषा नहीं जानते। दूसरे शब्दों में विभिन्न भाषाभाषी वर्गों के बीच सम्प्रेषण के लिए जिस भाषा का प्रयोग किया जाता है, वह संपर्क भाषा कहलाती है।

भारत एक बहुभाषी देश है, यहां हजारों बोलियां बोली जाती है, यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है क्योंकि एक प्रचलित लोकोक्ति के अनुसार ''कोस-कोस पर पानी बदले,बीस कोस पर बानी''। किंतु बोलियां बदलती भी हैं तो एक दूसरे से अजनबी नहीं हो जाती। उनमें बहुत ही थोड़ा अंतर आता है, यह क्रमिक परिवर्तन होता है और दूरी बढ़ जाने पर अर्थात् भारत जैसे बड़े देश के एक कोने की बोली दूसरे कोने की बोली से बिल्कुल भिन्न हो जाती है। इसलिए परस्पर एक जैसी बहुत सी बोलियों का समूह मिलकर एक अलग भाषा का रूप ग्रहण कर लेता है। इस प्रकार काफी बड़े क्षेत्र की एक भाषा बन जाती है। जो निकटस्थ क्षेत्र की भाषा से भिन्न लगती है। 1991 की जनगणना के अनुसार भारत में 3448 बोलियां बोली हैं और 1652 भाषाएं प्रचलित हैं जबकि इनमें से 18 भाषाओं को भारत के संविधान की आठवीं अनुसूची में सांविधिक मान्यता प्राप्त है। ये भाषाएं हैं—असमिया, उड़िया, उर्दू, कन्नड़, कश्मीरी, गुजराती, तमिल, तेलुगु, पंजाबी, बंगला, मराठी, मलयालम, संस्कृत, सिन्धी, हिंदी, कोंकणी, मणिपुरी और नेपाली।

अनेकता में एकता हमारी अनुपम परम्परा रही है। वास्तव में सांस्कृतिक दृष्टि से सारा भारत सदैव एक ही रहा है। हमारे इस विशाल देश में जहां अलग-अलग राज्यों में भिन्न-भिन्न भाषाएं बोली जाती हैं और जहां लोगों के रीति-रिवाजों, खानपान, पहनावे और रहन-सहन तक में भिन्नता हो वहां संपर्क भाषा ही एक ऐसी कड़ी है जो एक छोर से दूसरे छोर के लागों को जोड़ने और उन्हें एक दूसरे के सपीप लाने का काम करती है। अर्थात् यह दायित्व संपर्क भाषा ही निभाती है और वह हिंदी है।

हिंदी को सम्पर्क भाषा का स्वरूप प्रदान करने में हमारे ऋषियों-मुनियों, साधु-संतों का महान् योगदान रहा है जिन्होंने कश्मीर से कन्याकुमारी तक और द्वारिका से डिब्रुगढ़ तक घूम-घूम कर लोगों को अपनी पवित्र वाणी से उपकृत किया। वह चाहे पंजाब के नानक हों, उत्तर प्रदेश के कबीरदास हों, बंगाल के बंकिम, असम के शंकरदेव, महाराष्ट्र के संत ज्ञानेश्वर, संत तुकाराम, संत रविदास आदि संतों ने जिस आध्यात्मिक चेतना को जागृत किया, वहीं दक्षिण के वेमना, आलवर आदि संतों की वाणी की भूमि भी वही थी।

वर्तमान में हिंदी को व्यापकता प्रदान करने में फिल्मों का बहुत बड़ा योगदान है। यों, फिल्में तो बंगला, तमिल, पंजाबी, मराठी, कन्नड़, मलयालम आदि भाषाओं में भी बनती हैं पर उनका दायरा बहुत सीमित रहता है। एक हिंदी की फिल्में ही ऐसी हैं जो अखिल भारतीय स्तर पर चलती हैं। बंगाल में भी बंगला से अधिक हिंदी की फिल्मों की मांग है और इसी तरह दक्षिण में भी। तमिल, तेलुगू, कन्नड़ या मलयालम बोलने वाले भी बड़े चाव से हिंदी फिल्मों को देखते हैं और उनके गीतों को गुनगुनाते हैं। फिल्म निर्माता प्राय: सभी कम्पनियां अहिंदी भाषी क्षेत्रों में ही स्थित हैं। सच पूछिए तो फिल्मों ने हिंदी को सम्पर्क भाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने का जितना बड़ा काम किया है, उतना कोई दूसरा एक माध्यम अब तक नहीं कर सका है। फिल्मों के बाद इलेक्ट्रानिक मीडिया का स्थान आता है। रेडियो और दूरदर्शन में यह वैशिष्ट्य है कि वे जीवित भाषा को सामने लाते हैं। जीवित भाषा से तात्पर्य उच्चारित भाषा से है अर्थात् भाषा जिस रूप में बोली जाती है उसे रेडियो और दूरदर्शन उसी रूप में प्रस्तुत करते हैं। इस प्रकार उसे भाषा संबंधी संस्कार में जो सहायता मिलती है, वह पुस्तकों, समाचार पत्रों अथवा पत्रिकाओं जैसे मुद्रित साधनों से नहीं मिल सकती। हाल के वर्षों में दूरदर्शन के नए-नए चैनलों द्वारा प्रसारित हिंदी धारावाहिकों के प्रति सुदूर अहिंदी प्रदेशों के लोगों की अभिरूचि इसका प्रमाण है। महाभारत, रामायण जैसे धारावाहिकों ने तो कीर्तिमान स्थापित किया।

भाषा के प्रसार में वाणिज्य और व्यवयास का बहुत बड़ा हाथ रहता है। आज की सभ्यता वणिक सभ्यता है। वाणिज्य जीवन पर छा गया है। हर व्यक्ति अधिक से अधिक धन कमाना चाहता है और उसका सर्वोत्तम माध्यम है, वाणिज्य।

उर्वशी, 1/251, विकास नगर, लखनऊ-22

3176 HA/99—3B

आजादी की लड़ाई लड़ते समय हमारी यह कामना थी कि स्वतंत्र राष्ट्र की अपनी एक राष्ट्रभाषा होगी जिससे देश एकता के सूत्र में सदा के लिए जुड़ा रहेगा। महात्मा गांधी, लोकमान्य तिलक, नेताजी सुभाषचंद्र बोस, मदनमोहन मालवीय, राजाराम मोहनराय, दयानन्द सरस्वती, गोपाल स्वामी, राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन, सेठ गोविंददास प्रभृति महापुरुषों ने एक मत से इसका समर्थन किया। क्योंकि हिंदी हमारे सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक आंदोलनों की ही नहीं अपितु राष्ट्रीय चेतना एवं स्वाधीनता आन्दोलन की अभिव्यक्ति की भाषा भी रही है।

हिंदी सदियों से ही प्रमुख संपर्क भाषा रही है और इसीलिए यह बहुत पहले से 'राष्ट्रभाषा' कहलाती है क्योंकि हिंदी की सार्वदेशिकता संपूर्ण भारत के सामाजिक स्वरूप का प्रतिफल है। भारत की विशालता के अनुरूप ही राष्ट्रभाषा विकसित हुई है जिससे उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिम कहीं भी होने वाले मेलों—चाहे वह प्रयाग में कुंभ हो अथवा अजमेर शरीफ की दरगाह हो या विभिन्न प्रदेशों की हमारी सांस्कृतिक एकता के आधार स्तंभ तीर्थस्थल हों—सभी स्थानों पर आदान-प्रदान की भाषा के रूप में हिंदी का ही अधिकतर प्रयोग होता है। इस प्रकार इन सांस्कृतिक परम्पराओं से हिंदी ही सार्वदेशिक भाषा के रूप में लोकप्रिय है। विशेषकर दक्षिण और उत्तर के सांस्कृतिक सम्बंधों की दृढ़ श्रंखला के रूप में हिंदी ही सशक्त भाषा बनी। हिंदी का क्षेत्र विस्तृत है। हिंदी भाषी क्षेत्र की जनसंख्या रूस और अफ्रीका की जनसंख्या से भी अधिक है। हिंदी ने पिछले हजार वर्षों में विचार-विनिमय का जो उत्तरदायित्व निभाया है वह एक अनूठा उदाहरण है।

हमारे संविधान के प्रमुख आधार स्तम्भ हैं—लोकतंत्र, धर्मनिरपेक्षता, समता एवं सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय। इन्हें हम तब तक सार्थक नहीं कर सकते जब तक राष्ट्रीय एकता सुदृढ़ नहीं हो जाती। राष्ट्र होने के लिए किसी भी देश के लिए यह आवश्यक नहीं है कि सारे देश की केवल एक भाषा हो, सभी का एक धर्म हो और सभी प्रजाति के हों। एक राष्ट्र होने के लिए यह जरूरी है कि एक इतिहास, अतीत के सह-अनुभूत उत्थान एवं पतन की स्मृतियां, वर्तमान में राष्ट्र के सुख-समृद्धि और सुरक्षा के लिए एक संकल्प तथा भविष्य के लिए संजोए सामूहिक स्वप्न और उन्हें साकार करने का व्रत। फिर, भी केवल एक भाषा की अनिवार्यता न होते हुए भी अलग-अलग भाषाओं के बीच एक सेतु की आवश्यकता तो है ही। इसी विचार को दृष्टिगत रखते हुए हमारे संविधान में अनुच्छेद 346 के अन्तर्गत संपर्क भाषा का प्रावधान किया गया है जिसे अंग्रेजी में 'लिंक लैंगवेज' कहते हैं।

राष्ट्रभाषा प्राय: राष्ट्र के भीतर की अपनी भाषा होती है, बाहर से आई हुई राष्ट्रीय भाषा नहीं हो सकती। किसी भाषा के राष्ट्रभाषा होने की अनिवार्य शर्त यह है कि वह न्यूनाधिक अंशों में सारे राष्ट्र में व्याप्त हो, राष्ट्रभाषा स्वत: इस पद पर आसीन हो जाती है। इसके लिए किसी आदेश या विधि-विधान की आवश्यकता नहीं पड़ती। धार्मिक, राजनैतिक और आर्थिक संदर्भों में राष्ट्र के भिन्न-भिन्न भाषा-भाषी समुदाय परस्पर सम्पर्क में आने पर प्राय: जिस भाषा का उपयोग सहज ही करते हैं वह उस राष्ट्र की राष्ट्रभाषा होती है। गुजराती मातृभाषा वाले महात्मा गांधी ने इस तथ्य का अन्वेषण मात्र किया था कि हिंदी भारत की राष्ट्रभाषा है, उन्होंने इस तथ्य को ईमानदारी के साथ स्वीकार किया था और नि:स्वार्थ देश सेवा की भावना के अधीन इस तथ्य का प्रसार किया था लेकिन उन्होंने इस तथ्य का आविष्कार या आदेश नहीं किया था। उनकी प्रेरणा से अहिंदी क्षेत्रों में राष्ट्रभाषा प्रचार समितियां स्थापित हुई थीं जो आज तक हिंदी का प्रचार पूरे समर्पण भाव से कर रही हैं।

हिन्दी समझना और बोलना दोनों ही उच्चारण की दृष्टि से सभी भाषा-भाषियों के लिए अति सुविधाजनक है। तीसरी विशेषता यह है कि इसकी लिपि देवनागरी विश्व की सभी लिपियों में सर्वाधिक वैज्ञानिक है, इसे अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर स्वीकार किया गया है। आचार्य विनोबाभावे के शब्दों में "देवनागरी में समस्त भारतीय लिपियों को लिखने की क्षमता है और देवनागरी के माध्यम से हम सम्पूर्ण भारतीय भाषाओं का लिप्यंतरण कर सकते है और सीख सकते हैं। यह राष्ट्र की एकता और अखंडता के लिए आवश्यक है।" जस्टिस शारदा चरण मित्र ने अपने 'देवनागर' नामक पत्र में लिखा था कि— "यदि भाषाओं में से लिपि की दीवार को हटा दिया जाए और सब भाषाओं को 'देवनागरी' लिपि में लिखने की परम्परा चल पड़े तो भारत की एकता अखंड रह सकेगी, एक लिपि के माध्यम से हमारी एकता सर्वथा अक्षुण्ण रह सकेगी। बंकिम चन्द्र चटर्जी ने विश्वास के साथ भविष्यवाणी की थी कि— "हिंदी ही वह समर्थ भाषा है जो भारत के विभिन्न प्रदेशों में ऐक्य बन्धन स्थापित कर सकती है।" डा. सत्येन्द्रनाथ बसु के शब्दों में— "हिंदी ही वह सेतु है जो हमारे देश की विविध भाषाओं को जोड़ने का कार्य कर रही है और भविष्य में भी करती रहेगी।"

कुछ लोगों की यह धारणा है कि हिंदी पहले राष्ट्रभाषा कहलाती थी। बाद में इसे सम्पर्क भाषा कहा जाने लगा। अब इसे राजभाषा बना देने से इसका क्षेत्र सीमित हो गया है। वस्तुत: यह उनका भ्रम है। जैसाकि पहले उल्लेख किया जा चुका है हिंदी सदियों से सम्पर्क भाषा और राष्ट्रभाषा एक साथ रही है और आज भी है। भारत की संविधान सभा द्वारा 14 सितम्बर, 1949 को इसे राजभाषा के रूप में स्वीकार कर लेने से उसके प्रयोग का क्षेत्र और विस्तृत हुआ है। जैसे बंगला, तमिल, तेलुगु, कन्नड़, मलयालम आदि को क्रमश: बंगाल, तमिलनाडु, कर्नाटक, केरल आदि की राजभाषा बनाया गया है। ऐसा होने से क्या उन भाषाओं का महत्व कम हो गया है। वास्तव में इससे उन सभी भाषाओं का उत्तरदायित्व और प्रयोग क्षेत्र पहले की अपेक्षा बढ़ गया है। जहां पहले केवल परस्पर बोलचाल में काम आती थी या साहित्य रचना होती थी, वहीं अब प्रशासनिक कार्य भी हो रहा है। यही स्थिति हिंदी की है। इस प्रकार हिंदी सम्पर्क और राष्ट्रभाषा तो है ही, राजभाषा बनाकर इसे अतिरिक्त सम्मान प्रदान किया गया है।

उल्लेखनीय बात यह है कि जहां पहले हिंदी की रचनात्मक भूमिका साहित्य तक सीमित थी तदनंतर राजभाषा बनने पर राजकाज और शासन-प्रशासन तक पहुंची, वहीं इस कम्प्यूटर युग में ज्ञान-विज्ञान के नए-नए आविष्कारों और नवीनतम टेक्नालोजी में हिंदी पीछे चल रही है। इसका मुख्य कारण उच्च वैज्ञानिक एवं तकनीकी शिक्षा का माध्यम विदेशी भाषा का होना है पर हमें इस चुनौती को स्वीकार कर अपनी गति बढ़ानी पड़ेगी और हिन्दी के प्रयोजन मूलक स्वरूप को अधिकाधिक सुदृढ़ करना पड़ेगा। साथ ही इसे सामाजिक सरोकारों से सम्पृक्त करना पड़ेगा। यह समय की मांग है अन्यथा हिन्दी को इक्कीसवीं शताब्दी में ले जाने की संकल्पना पर प्रश्नचिह्न लग जाएगा। इस पहलू पर चिंतन की आवश्यकता है, और अपेक्षा है ठोस प्रयासों की।

धीरे-धीरे बैंकों में क्षेत्रीय भाषाओं का प्रयोग भी बढ़ा तथा बैंकों में "राजभाषा कार्यान्वयन समिति" का गठन भी किया गया। इसके बाद प्रत्येक बैंक के प्रधान कार्यालय में हिन्दी कार्यान्वयन समितियाँ बनाई गईं। इसपर भी कठिनाई यह थी कि "सीधे हिन्दी प्रयोग" एकदम शुरू नहीं किया जा सका। बैंक संबंधी पूरी सामग्री अंग्रेजी में होने के कारण इस कठिनाई को ध्यान में रखते हुए हिन्दी अनुवाद पर बल दिया गया। अब ऐसे में अनपढ़, गरीब, पिछड़े, कृषक या भारतीय आम आदमी के लिए बैंक सुविधा उपलब्ध कराने की बात आई तो सभी कागजातों, कार्य-पद्धतियों, प्रपत्रों, परिपत्रों, विज्ञापनों, प्रविष्टियों आदि को अंग्रेजी के साथ-साथ हिन्दी में भी दिए जाने की तैयारी की गई। परिणामत: बैंकों में अनुवाद का कार्य बढ़ता चला गया और अंग्रेजी तथा हिंदी का एक-साथ प्रयोग होना शुरू हो सका। अधिकांश राष्ट्रीयकृत बैंकों का साहित्य द्विभाषी बनाया जाने लगा। अनुवादक एवं राजभाषा अधिकारियों में, सरकारी कार्यशालाओं एवं प्रशिक्षणों से तथा शब्दावली निर्माण में लगी संस्थाओं ने इस दिशा में महत्वपूर्ण कार्य किया।

बैंकिंग साहित्य के अनुवाद कार्य को सुगम बनाने की दृष्टि से भारतीय रिजर्व बैंक ने सर्वप्रथम "पदनाम शब्दावली"(अंग्रेजी-हिन्दी) तैयार की। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं :

Deputy General Manager	उप महाप्रबंधक
Vigilance Officer	सतर्कता अधिकारी
Chief Development Officer	मुख्य विकास अधिकारी
Gold Appraiser	स्वर्ण मूल्यांकक
Field Officer	क्षेत्र अधिकारी
Area Manager	क्षेत्र प्रबंधक
Divisional Manager	मंडल प्रबंधक
Probationary Officer	परिवीक्षा (प्रोबेशन) अधिकारी
Despatch Clerk	प्रेषण लिपिक
Managing Director	प्रबंध निदेशक
Management Executive Manager	प्रबंध अधिशासी प्रबंधक
Management Executive	प्रबंध अधिकारी

इसी प्रकार, बैंकिंग व्यवस्था में धीरे-धीरे शब्दावली, प्रयुक्तियां और अन्य सामग्री का अनुवाद बढ़ता गया।

बैंकिंग शब्दावली और अनुवाद

बैंकिंग क्षेत्र में अनुवाद का प्रथम चरण है उसकी शब्दावली। सभी बैंकों के लिए एकरूपता वाली शब्दावली बनाने का कार्य अपने आप में एक महत् कार्य रहा है। इस कार्य के लिए जिन बातों का मूल रूप से ध्यान रखना आवश्यक माना जा सकता है, उनमें से कुछ इस प्रकार हैं :

1. बैंकिंग कारोबार से जुड़े समस्त सामान्य तथा वाणिज्यिक, आर्थिक, मुद्रा, विधि, कृषि एवं प्रशासन संबंधी क्षेत्रों की शब्दावली का चयन आवश्यक है।

2. जन-प्रयुक्त शब्दों को चुनकर बैंकिंग में प्रयुक्त अंग्रेजी शब्दों के हिन्दी शब्द बनाने का प्रयास किया जाना चाहिए। जहां अंग्रेजी शब्दों के लिए हिन्दी शब्द न मिल रहे हों, वहां सहज, सरल तथा सुबोध शब्द बनाने के लिए संस्कृत एवं अन्य क्षेत्रीय भाषाओं की सहायता से शब्द चुने जा सकते हैं।

3. क्षेत्रीय सीमाओं को ध्यान में रखते हुए इस प्रकार के शब्दों का चयन करना चाहिए, जो उन भाषा-भाषियों के अनुकूल हों, उपयोगी हों तथा सुगम भी हों। इसके लिए विविध क्षेत्रों के शब्दों को पृथक-पृथक वर्णक्रमानुसार भी तैयार किया जा सकता है।

बैंकों में बहुत से ऐसे शब्द भी प्रयुक्त हो रहे हैं, जो प्रशासन में पहले ही उपलब्ध हैं, किन्तु उन्हीं शब्दों का बैंकों में यथावत् प्रयोग नहीं किया जा सकता—जैसे-Written off शब्द बैंक में "बट्टे खाते में डाला गया" का द्योतक है न कि प्रशासन में प्रयुक्त "रद्द किया गया" का। इसी प्रकार Accommodation Bill बैंक में "निभाव हुंडी" का द्योतक है न कि "आवास बिल" का। Chest, बैंक में "तिजोरी" का द्योतक है न कि "छाती" या "सीने" का। Outstanding वहां "देय बकाया" है न कि "उत्कृष्ट" और Interest "ब्याज" है न कि "रुचि" या "दिलचस्पी"।

बैंकों में प्रयुक्त होने वाली इस तरह की द्वयार्थक शब्दावली के कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं :

	शब्द	बैंकिंग अर्थ	अन्य अर्थ
1.	Accept	संकारना	स्वीकार करना
2.	Account	खाता या लेखा	विवरण या गणना करना
3.	Advance	अग्रिम	पेशगी, आगे बढ़ाना
4.	Attachment	कुर्की	लगाव
5.	Balance	बाकी, शेष	तौल
6.	Bank	अधिकोश	किनारा (नदी का)
7.	Book	बही	पुस्तक
8.	Chest	तिजोरी	छाती या सीना
9.	Clearing	समाशोधन	खुला स्थान
10.	Credit	उधार	साख
11.	Crossing	रेखांकन	चौराहा
12.	Discharge	अदा करना/चुकाना	सेवामुक्त करना

13.	Exchange	विदेशी मुद्रा	आदान-प्रदान
14.	Fixed	मियादी	अंतिम मूल्य
15.	Interest	ब्याज	रुचि
16.	Maturity	अवधि-समाप्ति	परिपक्वता
17.	Net	निवल	जाल
18.	Realisation	उगाही	समझना
19.	Returns	विवरणी	प्रतिफल
20.	Safe	सुरक्षा तिजोरी	सुरक्षित
21.	Settlement	भुगतान	समझौता
22.	Statement	विवरण	बयान
23.	Suspense	उचंत (लेखा)	अनिश्चय
24.	Term	मियाद/शर्त	पद
25.	Will	वसीयत	इच्छा

अब यह तो स्पष्ट है कि बैंकिंग में जो शब्द प्रयुक्त किए जाते हैं, उनका अपना एक निश्चित अर्थ होता है। सामान्यत: बैंकिंग-व्यवस्था में जो शब्द प्रयुक्त किए जाते हैं, वे निम्न प्रकार के होते हैं :.

(i) अपने मौलिक रूप में प्रयुक्त होने वाले अंग्रेजी शब्द। यथा- बैंक, ड्राफ्ट, चेक, काउंटर, बिल, रजिस्टर, गारंटी, कमीशन, लाइसेंस, प्रीमियम, डिबेंचर, एजेंट आदि।

(ii) अंग्रेजी शब्द के विकृत रूप। यथा—मॉंग ड्राफ्ट, इंडेन्टकर्त्ता, लाइसेंसीकरण, गारंटीकृत, बचत बैंक आदि।

(iii) पुराने प्रचलित देशी शब्द। यथा—बही, आढ़तिया, नामे, जमा, कुर्की, रोकड़, दलाल तथा हुण्डी आदि।

(iv) अंग्रेजी ध्वनि से साम्य रखने वाले रूप। यथा—Treasury के आधार पर तिजोरी, Receipt के आधार पर रसीद, Bond के आधार पर बंध-पत्र आदि।

(v) अंग्रेजी वाक्यांशों के समानार्थी वाक्यांश। यथा । Blanket Insurance—निर्बंध बीमा, No effects रुपया नहीं है; तथा Call Rate —शीघ्रावधि दर आदि।

(vi) एक ही शब्द के एकाधिक पर्यायों का बैंकिंग के संदर्भ में प्रयोग होना । यथा—

Account	—	लेखा, खाता
Tender	—	निविदा, मुद्रा, पेश करना
Credit	—	ऋण, जमा करना, प्रतिष्ठा

(vii) अंग्रेजी संक्षिप्ताक्षरों (abbreviations) के हिन्दी रूपांतरण। यथा—

R. B. I.	—	आर.बी.आई.
C. D. B.	—	सी. डी. बी.
I. R. D. P.	—	आई.आर.डी.पी.
N. B. M. S.	—	एन.बी.एम.एस.

(viii) अंग्रेजी संक्षिप्ताक्षरों को हिन्दी में अनुवाद करके लिखना। यथा

Cr.	—	जमा (Credit)
Dr.	—	नामे (Debit)
D.P.N.	—	मांग वचन पत्र (Demand promissing note)

(ix) अंग्रेजी संक्षिप्ताक्षरों को हिन्दी में ही संक्षिप्त लिखना रूपांतरण। यथा—

C. D. B.	—	स्व. माँ बि. (स्वच्छ मांग बिल)
I. D. B.	—	भू. वि. बैं. (भूमि विकास बैंक)
I. S. C.	—	आवद (आवद वसूली दर्शनिया)
B. E.	—	वि. प. (विनिमय पत्र)

बैंकिंग व्यवस्था संबंधी कुछ शब्दावली

Acceptance	स्वीकृति, सकार/स्वीकरण
Act	कार्य, काम, अधिनियम
Actual pecuniary damage	वास्तविक आर्थिक हानि/क्षति
Advance	अग्रिम, पेशगी, ऋण, उधार
Advice	सूचना, परामर्श, सलाह
Allotment	आबंटन, नियतन
Audit	लेखा-परीक्षा
Balance	संतुलन, बाकी, शेष, तुला
Bank charges	बैंक प्रभार
Banking operation	बैंकिंग परिचालन
Bearer	धारक, वाहक
Bill	विनिमय-पत्र, विधेयक, हुण्डी, बिल
Borrower	उधारकर्ता, ऋणी
Budget Estimate	बजट प्राक्कलन
Capital	पूँजी, मूलधन
Cash certificate	नकदी-पत्र, रोकड़ प्रमाण-पत्र

अनुवाद : बैंक ग्रामीण क्षेत्रों तथा समाज के आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों के विकास के लिए प्रतिबद्ध है। हमारा बैंक शैक्षिक ऋणों के संबध में सभी बैंकों की तुलना में प्रथम है। रोज़गार के अवसरों को बढ़ाना भी राष्ट्रीय महत्व की प्रमुख गतिविधियों में से एक है। दलितों को अपने तथा अधिक संख्या में किसानों की सहायता को उच्च प्राथमिकता दी जा रही है।

बैंक के वांछित विकास को सुनिश्चित करने के लिए गत कार्य-निष्पादन का सूक्ष्म विश्लेषण किया जाता है। वर्तमान प्रणाली को सुदृढ़ करने तथा नई प्रणालियां तैयार करने को यथावश्यक महत्व दिया जाता है। एक मजबूत संगठन के अभाव में लक्ष्य प्राप्त नहीं किए जा सकते और इसीलिए हमारे द्वारा निर्धारित विशिष्ट लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए इस बात पर जोर दिया जाता है।

बैंकिंग व्यवस्था और हिन्दी

आजादी के बाद भारत में हिन्दी की भूमिका को निश्चित तो किया गया परन्तु कार्यान्वित करने के प्रयासों की तरफ पर्याप्त ध्यान न दिया जा सका। संविधान-निर्माताओं ने संविधान में निर्धारित 15 वर्ष की अवधि की समाप्ति (26 जनवरी, 1965) पर संघ सरकार के कामकाज में हिन्दी को अंग्रेजी का स्थान लेना निर्धारित किया था। यह भी कहा गया कि इन पन्द्रह वर्षों के दौरान अंग्रेजी के साथ-साथ हिन्दी का प्रयोग भी किया जा सकेगा। परन्तु 1965 में 15 वर्ष बीत जाने के बाद भी हिन्दी का प्रयोग तो नाम मात्र को ही हो पाया और अंग्रेजी की स्थिति और अधिक दृढ़ता होती चली गई। परिणामत: हिन्दी को गौणतर होना ही था। शिक्षा एवं शिक्षा के माध्यम सम्बन्धी इस अदूरदर्शिता तथा राजनीतिक स्थितियों के कारण सरकारी कार्यालयों में द्विभाषी युग का सूत्रपात तो शुरु हुआ पर अंग्रेजी की प्रमुखता और उसका प्रभुत्व अभी भी सुरक्षित रखा गया। परिणामत: राजभाषाओं के होने के बावजूद हिन्दी अनुवाद की बैसाखियों पर लड़खड़ाती भाषा बनकर ही रह गई। ज्ञान-विज्ञान, साहित्य, प्रौद्योगिकी, वाणिज्य, बैंक आदि क्षेत्रों में अनुवाद सम्बन्धी कठिनाइयां आती रहीं और हिन्दी यथावत् प्रभुत्वहीन तथा वैकल्पिक बनी रही। ज्ञान-अर्जन के लिए, सांसारिक प्रगति की जानकारी के लिए शोध एवं प्रयोगों के ज्ञानार्जन के लिए पब्लिक स्कूलों में जो अंग्रेजी खिड़कियां खोली गई थीं, आजादी के बाद वे तो दरवाजों में बदल गई और हिन्दी तथा भारतीय भाषाओं के राजभाषा-अधिनियम आदि के तहत लगाए गए दरवाजे भी झरोखें और फिर झिरी बन कर रह गए।

हमारे संविधान के अनुचछेद 343(1) में कहा गया है कि देवनागरी लिपि में लिखित हिन्दी संघ की भाषा होगी। अत: राजभाषा के रूप में हिन्दी के प्रचार-प्रसार और प्रयोग को बढ़ाने के लिए जो प्रयास किए गए उनमें राजभाषा अधिनियम 1963, राजभाषा नियम 1976 मुख्य हैं। इन संवैधानिक और कानूनी प्रावधानों के अंतर्गत देश के तमाम केन्द्र सरकार के उपक्रमों में हिन्दी के प्रयोग को अनिवार्य बना दिया गया।

बैंक सम्बन्धी साहित्य के प्रकार और हिन्दी का परिदृश्य

बैंकों में हिन्दी का मूलाधार बनाने के लिए यह जानना भी अत्यन्त आवश्यक है कि किस प्रकार का साहित्य अथवा सामग्री बैंकों में होती है। बैंक के समस्त साहित्य को हिन्दी की दृष्टि से अगर विभाजित करें तो मूलत: उन्हें दो भागों में बाँट कर देखा जा सकता है—

1. बैंक की आन्तरिक प्रक्रिया से सम्बद्ध साहित्य

2. ग्राहक-सेवा से सम्बद्ध साहित्य

इन दो भागों में रखकर हम बैंक सम्बन्धी, पत्र, प्रपत्र, परिपत्र प्रलेख, नियम, शर्तें, प्रशिक्षण सामग्री, वचन पत्र, प्रभार सामग्री तथा अनुदेश पुस्तिका आदि सामग्री को विभाजित कर सकते हैं। यथा—

1. बैंकिंग प्रक्रिया से सम्बद्ध साहित्य : स्थायी स्वरूप के फार्म या पत्रादि सामग्री जिसमें बैंकिंग की कार्य-विधि, अनुदेश पुस्तिकाएं तथा अन्य सामग्री उपलब्ध हों, समस्त प्रशिक्षण सामग्री हों, कर्मचारियों की आचार-संहिताएँ हों सेवा-निनिमय आदि उपलब्ध हों। आवर्ती स्वरूप की पत्रादि सामग्री में अर्द्ध-स्थायी एवं नए पत्र-परिपत्र , भारतीय रिजर्व बैंक को भेजे गए विवरण तथा विभिन्न शाखाओं को, क्षेत्रीय एवं केन्द्रीय कार्यालयों को भेजे गए पत्र-परिपत्र आदि आते हैं।

2. ग्राहकों से सम्बद्ध साहित्य : ग्राहकों द्वारा भरे जाने वाले समस्त प्रपत्र (फार्म), दस्तावेज, आवेदन-पत्र, चैक, जमा-पर्चियां, वचन-पत्र आदि। बैंक द्वारा ग्राहकों को भेजे जाने वाले पत्र-प्रपत्र, प्रभार या विज्ञापन सामग्री, ड्राफ्ट, देयादेश, जमा-रसीद, सूचनाएँ आदि।

इतनी सामग्री तो बैंक में उपलब्ध होती ही हैं, जिसे हिंदी में होना चाहिए किंतु आज तक की स्थितियां प्रमाण हैं कि इन दोनों आयामों में से पहले आयाम पर अधिक बल देते हुए ऐसी सम्पूर्ण सामग्री (या साहित्य) को, जो ग्राहक के साथ संपर्क स्थापित करने के लिए जरुरी हैं, अंग्रेजी तथा हिन्दी (दोनों) में एक साथ (द्विभाषिक रूप में) उपलब्ध कराया जाता रहा। आज बैंकिंग में ग्रामीण उद्धार पर काफी बल दिया जा रहा है। उत्तरी भारत के बड़े-बड़े राज्यों के उन सुदूर गाँवों में भी शाखाएँ खोली जा रही हैं, जिन क्षेत्रों में हिन्दी या उसकी बोलियाँ ही बोल-चाल की भाषा के रूप में प्रचलित हैं। ऐसे में बैंकों को अपने ग्राहकों से उनकी भाषा (हिन्दी) में सम्पर्क का प्रयास करना चाहिए। इसी से बैंक अपने ग्राहकों को विश्वास अर्जित कर सकते हैं। इन्हीं प्रयासों से भारतीय आम जनता का बैंकों की सुविधाओं से लाभ उठाने का संकोच दूर होगा, बैंकों का कारोबार सुदृढ़ होगा तथा राष्ट्र को मजबूती मिल सकेगी।

आज बैंकों के आंतरिक कार्यो के हिन्दी के प्रयोग को अनिवार्य बना दिया गया है ताकि धीरे-धीरे हिन्दी भाषा को सही अर्थ में राजभाषा के पद पर प्रतिष्ठित किया जा सके। इसे सुगम बनाने के लिए कर्मचारियों को प्रशिक्षण आदि भी दिए जा रहे हैं, किन्तु इसमें भी संदेह नहीं कि अभी हमें बैंकों में हिन्दी-प्रयोग के लक्ष्य तक पहुँचने के लिए एक लम्बी यात्रा तय करनी हैं।

आज लगभग प्रत्येक बैंक में अनुवाद का कार्य करीब-करीब पूरा किया जा चुका है। परन्तु फिर भी व्यावहारिक कठिनाइयाँ दिन-प्रतिदिन आती ही हैं। आए दिन आज बैंकिंग क्षेत्र में नए-नए विकास हो रहे हैं, नई-नई

3176 HA/99—4B

दिशाओं में कार्य हो रहे हैं, जबकि हिन्दी के प्रयोगमूलक अथवा व्यवहारमूलक क्षेत्रों में शब्दावली या प्रयुक्तियों का कार्य धीमी गति से चल रहा है। अत: बैंक संबंधी किसी भी नई सामग्री को पहले अंग्रेजी में तैयार किया जाता है तथा फिर राजभाषा अधिकारियों अथवा अनुवादकों द्वारा उसे हिन्दी में अनूदित किया जाता है। इस दृष्टि से अगर कहें कि हिन्दी आज प्रयोग के नाम पर अनुवाद-भाषा बनकर रह गई है तो कोई अतिश्योक्ति न होगी। किसी भी राजभाषा के लिए यह अच्छी स्थिति नहीं कि उसमें मूलत: सोचा या मौलिकता ही न जाए और उसे सभी कुछ अनुवाद के धरातल पर ही उपलब्ध हो।

बैंक की प्रणाली का पश्चिमी-पृष्ठभूमि पर चलना भी इसका बहुत बड़ा कारण है कि अंग्रेजी के साथ हिन्दी चिपका भर दी है। दशकों से चली आ रही इस अंग्रेजी परम्परा का मोह-जाल ही ऐसा है कि बैंक में भर्ती होने वाला कोई भी कर्मचारी अनायास ही इसे आत्मसात कर लेता है। वह इस परम्परा को निखारने या संवारने में सहायक भले ही न हो पर उसे बनाये रखने में तो उसका हाथ होता ही है। पकी-पकायी यह परम्परा उसके लिए अत्यन्त सुविधाजनक होती है और सुरक्षा-कवच भी बनी रहती है। इस लीक पर चलने में उसे न तो अधिक प्रयास करने पड़ते हैं और न ही परिश्रम। ऐसे में हिन्दी वैकल्पिक हो जाती है और अंग्रेजी को वरीयता मिलती रहती है। अत: बैंकिंग क्षेत्र में अनुवादकों तथा राजभाषा अधिकारियों की संभावनाओं पर, अनुवाद की आवश्यकता, अनिवार्यता, मात्रा तथा व्यापकता के परिप्रेक्ष्य में आज पुन: विचार करना अपेक्षित है।

जैसी कि चर्चा की जा चुकी है, बैंकिंग क्षेत्र का समस्त साहित्य स्थूलत: दो तरह का होता है—(1)बैंकिंग प्रक्रिया से सम्बद्ध साहित्य और (2) ग्राहकों से सम्बद्ध साहित्य। इन दोनों प्रकार की सामग्रियों को हिंदी में उपलब्ध कराने के लिए यह महसूस किया गया कि बैंकों के अनुवाद हेतु :

1. केंद्रीय बैंक का होना आवश्यक है;

2. राजभाषा अधिकारियों, हिंदी अनुवादकों, हिंदी सहायकों, आशुलिपिकों, टंककों, प्रयोगशालाओं तथा प्रशिक्षण संस्थाओं का होना आवश्यक है ;

3. शब्दावलियों एवं अन्य संदर्भ साहित्य की उपलब्धता आवश्यक है।

4. अनुवाद कार्य में प्रबंधकों के सहयोग एवं प्रोत्साहन की आवश्यकता है।

जब तक बैंकों का समस्त कार्य हिन्दी में प्रारम्भ नहीं हो जाता और बैंकिंग क्षेत्र में कार्यरत सभी सदस्य हिन्दी में प्रवीणता प्राप्त कर स्वयं हिन्दी में मूल रूप से कार्य नहीं करने लगते, तब तक हिन्दी अनुवाद की भाषा बनी रहेगी। सरकार को इस दिशा में पूरी गम्भीरता से विचार करना होगा। अन्यथा हिन्दी का स्तर ऊँचा नहीं उठ सकेगा। हिन्दी को अनुवाद की भाषा के स्तर से हटाकर राजभाषा के पद पर बैठाने के लिए हिन्दी को जन-जन की भाषा बनाना होगा। सरल तथा सुबोध शब्दावली का प्रयोग करते हुए जन-सामान्य के मस्तिष्क से हिन्दी के प्रति बनी संकोचपूर्ण धारणा को निकाल बाहर करना होगा। दस्तावेज़ों में एकरूपता लानी होगी। भारतीय रिजर्व बैंक को मूल रूप से हिन्दी में सोचना और लिखने को प्रोत्साहित करना होगा।

बैंकों में क्षेत्रीय भाषाएं

बैंकों में कार्य करने वाले कर्मचारियों, अधिकारियों तथा बैंकों से सुविधा उठानेवाले ग्राहकों के परिप्रेक्ष्य में अगर हम क्षेत्रीय भाषाओं की भूमिका पर विचार करें तो स्पष्ट होता है कि इन भाषाओं का भी ठोस योगदान रहा है। सरकार की राजभाषा नीति में भी क्षेत्रीय भाषाओं की भूमिका पर महत्वपूर्ण बल दिया जाता रहा है। वास्तव में हिन्दी की उन्नति में सभी क्षेत्रीय भाषाओं की महती भूमिका रही है। ये सभी भाषाएं मिलकर थोपी गई अंग्रेजी हटाने के विषय में तो हिन्दी का साथ देती ही हैं साथ ही हिन्दी को राजभाषा एवं राष्ट्रभाषा के रूप में स्थापित करने के लिए सक्रिय भी दिखाई पड़ती हैं। हिन्दी की शोभा और आभा का कारणभूत तत्व इन क्षेत्रीय भाषाओं का विकास ही है। हिन्दी को आपसी व्यवहार के लिए अखिल भारतीय माध्यम तभी बनाया जा सकता है जब हम सभी क्षेत्रीय भाषाओं के प्रति रुचि तथा सम्मान के माहौल को सदैव बरकरार रख सकेंगे। बैंकों में भी इस दिशा में सक्रिय कार्य किए जा रहे हैं। ग्राहक की भाषा में अगर बैंक का कार्य किया जाए तो कहीं अधिक प्रगति की जा सकती है। विभिन्न राज्यों में, ग्रामीण इलाकों में, तथा अंचलों में बैंकिंग व्यवहार से सम्बद्ध समस्त सामग्री (पत्र, परिपत्र, चैक-बुक, प्रचार सामग्री, पास बुक आदि) को सम्बद्ध क्षेत्रीय भाषा में उपलब्ध कराया जाना अत्यंत उपयोगी सिद्ध होगा। इसके लिए बैंक के कर्मचारी एवं अधिकारियों को क्षेत्र विशेष की भाषा का अच्छा ज्ञान कराया जाना चाहिए ताकि बैंकों का व्यवसाय बढ़ सके और राष्ट्रीय पूँजी का सदुपयोग किया जा सके।

आज भी बैंकों में हिन्दी और विविध क्षेत्रीय भाषाओं के विकास की अनेक सम्भावनाएं शेष हैं। भाषायी संकीर्णता से हटकर ही हम इस महान उद्देश्य की प्राप्ति में जुट सकते हैं। देश की आर्थिक स्थिति को इस वृहद् उद्योग की मज़बूती एवं विकास से ही सुदृढ़ किया जा सकता है।

बैंक और सरकार की राजभाषा नीति

भारतीय संविधान में किए गए विभिन्न प्रावधानों तथा राजभाषा अधिनियम एवं नियमों के अनुसार भारत सरकार के सभी कार्यालयों में हिन्दी के अधिकाधिक प्रयोग के लिए आवश्यकतानुसार समय-समय पर अनेक आदेश तथा अनुदेश जारी किए जाते रहे हैं। सरकारी कार्यालयों एवं बैंकों में कार्यरत सभी कर्मचारियों एवं अधिकारियों का यह नैतिक दायित्व भी है कि वे इनका पालन करते हुए स्वेच्छा से हिन्दी-प्रयोग पर बल दें।

संविधान के अनुच्छेद 343 में कहा गया है कि

क. संघ की राजभाषा और लिपि देवनागरी होगी, संघ में राजकीय प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त अंकों का रूप अन्तर्राष्ट्रीय होगा।

ख. संविधान के प्रारम्भ में 15 वर्ष के लिए अंग्रेजी का प्रयोग जारी रहेगा।

या कार्यालय के प्रमुख, हिन्दी अधिकारी, अनुवादक एवं अन्य सदस्य शामिल हों। इन समितियों की बैठक तीन माह में एक बार अवश्य की जाए।

13. कर्मचारियों में हिन्दी के प्रति रुचि पैदा करने तथा हिन्दी के ज्ञानार्जन को प्रोत्साहित करने के लिए बैंक के प्रशासनिक कार्यालयों में विशाल हिन्दी पुस्तकालयों की स्थापना की जाए।

14. बैंकों के पत्र-पत्रिकादि का प्रकाशन हिन्दी में भी किया जाए। अंग्रेजी और हिन्दी में भी यह प्रकाशन किए जा सकते हैं। बैंक की गृह-पत्रिकाओं में भी हिन्दी की रचनाओं का एक खंड अवश्य होना चाहिए।

15. बैंक के टाइपिस्ट तथा स्टेनोग्राफर को हिन्दी टंकण एवं आशुलिपि उत्तीर्ण कर लेने पर प्रोत्साहन एवं पुरस्कार भी दिए जाएं। हिन्दी टाइपराइटर भी अधिक से अधिक खरीदे जाएं।

16. विभागीय परीक्षाओं में हिन्दी माध्यम की छूट दी जाए। परीक्षाओं की तैयारी हेतु समय-समय पर हिन्दी कार्यशालाओं का आयोजन किया जाए।

17. लिफाफे तथा तार आदि पर हिन्दी में भी पते होने चाहिएं।

18. प्रत्येक बैंक/शाखाओं में एक-एक हिन्दी अधिकारी अवश्य होने चाहिए।

19. हिन्दी में मांग-ड्राफ्ट जारी करने की छूट होनी चाहिए।

20. हिन्दी में समग्र कार्य करने वाली शाखाओं को रेखांकित कर प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

21. बैंकों में हिन्दी के प्रयोग सम्बन्धी हिदायतों का ठीक रूप से पालन हो रहा है या नहीं, समय-समय पर इसका निरीक्षण किया जाना चाहिए।

बैंकों में हिन्दी प्रयोग : असहजता का संदर्भ

आज बैंक सम्बन्धी अधिकांश कार्य राजभाषा हिन्दी में हो रहा है। विशाल शब्द भण्डार की भी कमी नहीं है। हिन्दी अधिकारी तथा अनुवादक, आशुलिपिक तथा टंकक भी वहां उपलब्ध हैं। हिन्दी कार्यान्वयन समितियां तथा कार्य-योजनाएं भी मौजूद हैं। किन्तु फिर भी कई कठिनाइयां देखी जा रहीं हैं। बैंको में प्रयोग होने वाली हिन्दी सहज नहीं जान पड़ती। कई कारणों से यह हिन्दी, अनुवाद की भाषा बन कर रह गई है। सहज स्वाभाविकता का उसमें अभाव दिखाई पड़ता है। हमारी राजभाषा असहज सी जान पड़ती है। आखिर क्यों? इसके कुछ कारण हैं जिन्हें इस प्रकार दूर किया जा सकता हैं:

क. बैंक में कार्यरत अनुवादक या हिन्दी अधिकारी वाणिज्य तथा अर्थशास्त्र विषय के ज्ञाता नहीं होते तथा अर्थशास्त्र एवं वाणिज्य विषय के जानने वाले हिन्दी और अंग्रेजी भाषाओं पर समान अधिकार नहीं रखते। परिणामतः भाषा जानने वाले हिंदी अधिकारी/अनुवादक शब्द की संकल्पना पर बल न देकर भाषिक संरचना पर बल देते है तथा विषय जानने वाले भाषिक संरचना का ध्यान नहीं रख पाते। अतः विषय एवं दोनों भाषाओं पर अधिकार रखने वाले तथा हिन्दी में सोचने और शब्द निर्माण करने वाले लोगों का चयन किया जाना चाहिए।

ख. बैंकों का काम हिन्दी में करने वाले कर्मचारियों और अधिकारियों को अल्पकालिक तथा औपचारिक प्रशिक्षण न देकर लम्बे तथा गहन प्रशिक्षण दिए जाने चाहिए। समय-समय पर कार्यशालाएं आयोजित की जाएं। प्रतियोगी परीक्षाएँ आयोजित करते हुए कर्मचारियों को पुरस्कृत किया जाए। हिन्दी में महत्वपूर्ण कार्य करने वालों को पदोन्नति तथा प्रोत्साहन दिए जाएं। उन्हें वित्तीय लाभांश अथवा अतिरिक्त अनुदान दिए जाए। उनके अभाव में भी हिन्दी-कार्य की गति अत्यंत धीमी है।

ग. हिन्दी अधिकारियों तथा कर्मचारियों को योजनाबद्ध कार्यक्रम दिए जाएं तथा उनकी प्रगति का मूल्यांकन कराया जाए। शीघ्रातिशीघ्र होने वाले स्थानांतरणों से भी हिन्दी के विकास और उसकी गति में बाधा उत्पन्न होती है।

घ. हिन्दी को अधुनातन अपेक्षाओं की शब्दावली से जोड़ा जाता रहे। अद्यतन विकास की जानकारी हेतु हिन्दी अधिकारियों और अनुवादकों को समय-समय पर प्रशिक्षण देते हुए तकनीकी एवं इलैक्ट्रोनिक मीडिया से जोड़ा जाए। कम्प्यूटर, टैलीप्रिंटर, विद्युतीय टाइपराइटर आदि अधुनातन उपकरणों से हिन्दी-प्रयोग को जोड़कर इस चुनौती का सामना किया जा सकता है।

ङ. सरकारी दृष्टिकोण हिन्दी के नाम पर अधिक पैसा खर्च न करने का रहा है। साथ ही जो खर्च किया जाता है उसका दुरुपयोग अधिक होता है। इस दृष्टिकोण को बदलकर सामयिक हिन्दी उपकरणों से संस्थाओं को सुसज्जित किया जाए।

च. बैंकों से सम्बन्धित मानक पारिभाषिक शब्दावली, पदनाम, संक्षिप्ताक्षर तथा प्रयुक्तियां आदि तैयार कर सभी जगह एकरूपता बनाने के गंभीर प्रयास किए जाएं।

छ. भारत की आम जनता की अपेक्षानुसार, बैंक सम्बन्धी शब्दों का नव-निर्माण किया जाए ताकि कठिन, अप्रचलित और असहज शब्दों की पीड़ा से मुक्ति मिल सके।

इस प्रकार हम देखते हैं कि आज विज्ञान, प्रौद्योगिकी, शोध तथा प्रयोग के इस युग में वाणिज्य, व्यापार अर्थव्यवस्था तथा संचार माध्यमों ने भी नई क्रांति की है। भारत में अनेक विदेशी बैंक भी अब अधिक से अधिक सुविधाएं लेकर वित्तीय बाजार में उतर रहे हैं। प्रतियोगिता और दौड़ के इस युग में बहु-उद्देशीय कम्पनियां, व्यापारिक संस्थाएँ तथा विभिन्न उपक्रम भी अब भारतीय परिवेश की नब्ज को, यहाँ के बाजार और

उपभोक्ताओं के मनोविज्ञान को समझते हुए आगे बढ़ रहे हैं। वे जान गए हैं कि यहां अगर व्यवहार करना है तो यहां की भाषा हिन्दी को व्यवहार में, कामकाज में और सम्पर्क सम्बन्ध में आना अनिवार्य है। केवल, विज्ञान, प्रचार-सामग्री, उत्पाद-फार्मूले, पैकिंग, उपयोग सम्बन्धी निर्देश और यहां तक कि 'ड्रग्स' की कम्पनी या संस्थान के नाम और पतों को अंग्रेजी के साथ हिन्दी या केवल हिन्दी में दिए जाने लगे हैं। केवल अंग्रेजी ही अब विज्ञापन या सम्मोहन की भाषा नहीं रही है। इधर कुछ समय से हिन्दी को भी फैशन और विज्ञापन में लाने के सक्रिय प्रयास चल रहे हैं। यह ठीक है कि इसमें संचार माध्यमों की विशिष्ट भूमिका है। किन्तु इसमें भी संदेह नहीं कि जनता के लिए जनता की भाषा में काम करते हुए ही विश्व के बहुत बड़े व्यापार केन्द्र अर्थात् भारतीय बाजार और वित्त व्यवस्था को काबिज करने का मनोविज्ञान अब बैंक भी समझ रहे हैं। संभवत: पहले किए गए प्रमाण आरोपित अथवा बाध्यता लगते रहे हों किन्तु अब जमा पूंजी एकत्रित करने ओर बढ़ाने की दौड़ इस कार्य को निश्चित ही सरल करेगी। जाने अनजाने में ही सही, बैंकों में इस बहाने घर कर जाने और घर कर जाने का सपना देखने वाली भाषा 'हिन्दी की' सहजता-सरलता का मार्ग अब शीघ्र प्रशस्त हो सकेगा, ऐसी आशा अब बंधने लगी है।

विज्ञापन, निविदा, परिपत्र, कार्यालयी आदेश, प्रेस विज्ञप्तियां, सूचना(एं); संविदा, करार, लाइसेंस, अनापत्ति-प्रमाणपत्र, परमिट लेखन-सामग्री, पत्रशीर्ष, प्रचार सामग्री, कोड, नियम, निर्देश, चैकबुक, पासबुक, पुस्तकें, प्रतियोगी-परीक्षाओं की सामग्री, पदोन्नति के लिए तैयार की गई सामग्री, वार्षिक प्रतिवेदन, रिपोर्ट तथा सभी प्रकार के कार्य आदि को अब हिन्दी में अनूदित किया जाने लगा है। राजभाषा अधिकारी, निदेशक (राजभाषा), उपनिदेशक (राजभाषा), सहायक हिन्दी अधिकारी, अनुवादक (कनिष्ठ तथा वरिष्ठ), हिन्दी सहायक, हिन्दी टाइपिस्ट, हिन्दी आशुलिपिक तथा हिन्दी प्रभारी एवम् कार्यान्वयन अधिकारी आदि पदों पर अब नियुक्तियां होने लगी हैं। द्विभाषिक साहित्य तथा पारिभाषिक शब्दावली अब तेज़ी से बन रही है।

बैंकों में हिन्दी प्रशिक्षण, हिन्दी कार्यशालाएं, प्रतियोगिताएं एवं प्रोत्साहन परीक्षाएँ, विचार गोष्ठियां, वाद-विवाद प्रतियोगिताएं तथा अन्य हिन्दी प्रचार-प्रसार सम्बन्धी गतिविधियां सुचारू रूप से अब चलने लगी हैं। मासिक अथवा त्रैमासिक हिन्दी पत्रिकाएं भी अब लगभग प्रत्येक बैंक से प्रकाशित हो रही हैं। यही नहीं, जन सम्पर्क अधिकारी तथा विधि परामर्शदाता/अधिकारी भी अब ग्राहक या उपभोक्ता की अपेक्षानुसार हिन्दी में कार्य करने लगे हैं।

अनुवाद के संदर्भ में यह बात एकदम स्पष्ट है कि विषय और भाषा एक-दूसरे के पूरक होते हैं। भाषा के बिना विषय का और विषय के बिना भाषा का विवरण अवरुद्ध हो जाता है। अत: बैंकिंग के विकास के लिए तथा देश की अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ता प्रदान करने के लिए यह जरूरी हो जाता है कि हम राजभाषा हिन्दी को कार्यान्वित कर और शक्ति प्रदान करें। आम आदमी को बैंकिंग संस्कृति से जोड़ने पर ही यह संभव होगा। लेकिन यह तभी हो सकेगा जब भाषा जन-गण की होगी। बैंकिंग के संस्कार भी संस्कारों की भाषा हिन्दी से ही डाले जा सकेंगे। जन साधारण के मनो-मस्तिष्क पर जो भाषा आच्छादित हो सके, उसे अब हर हालत में अपनाना और चलाना होगा। हिन्दी भाषा तथा राष्ट्रीयता के प्रति अपने दायित्व का निर्वाह करने का इससे अधिक पुण्यकर्म कुछ नहीं हो सकता। अब नीतियों की ओर देखने का नहीं, कार्यान्वयन की नीति अपनाने का समय आ गया है।

"यह सच है कि कोई भी देश अपनी मातृभाषा के द्वारा ही आगे बढ़ सकता है । हम दूसरी भाषा सीख सकते हैं बोल सकते हैं लेकिन नए विचार उससे पैदा नहीं होता । नए विचार केवल अपनी मातृभाषा के द्वारा ही निकल सकते हैं । इसलिए हमें भारत की सभी भाषाओं को आगे बढ़ाना है, प्रोत्साहन देना है और हिन्दी का तो एक विशेष स्थान है ही । हम चाहते हैं कि जल्दी से जल्दी भारत के सभी लोग अगर हिन्दी न बोल सकें तो कम से कम समझ तो सकें । मैं समझती हूँ कि यह काम आगे बढ़ रहा है ।

—श्रीमती इन्दिरा गांधी

हम और हमारी राष्ट्रभाषा

—उत्तम कुमार चटर्जी

राष्ट्रभाषा हिन्दी मात्र एक भारतीय भाषा ही नहीं है, अपितु सारे राष्ट्र की एकता एवं अखण्डता की आधारशिला है । स्वतंत्रता आन्दोलन के समय से आज तक हिन्दी अपने इसी दायित्व को पूरा करने में निरन्तर गतिमान है । हमारी राष्ट्रीय और सामाजिक एकता छिन्न-भिन्न होती जा रही है । ऐसी परिस्थिति में एक सशक्त राष्ट्रीय भाषा ही देश की जनता को जागृत कर सकती है । अलग-अलग धर्मों और सम्प्रदायों के लोगों में समाज और देश के प्रति उनके दिलों में संवेदनशीलता को जगाने में एक सभी के समझनेवाली राष्ट्रीय संपर्क भाषा ही काफी है । वह भाषा सिर्फ हिन्दी है । समाज सेवा और देश सेवा के नाम पर आज कई नेता और समाज-सेवियों के उद्‌गार और भाषाओं को हम रोज सुनते हैं । मगर उनकी सफलता तभी सार्थक सिद्ध हो सकती है, जब वे जनता की ही भाषा में, जनता को एक बड़े वर्ग द्वारा बालने वाली भाषा में अपनी भावनाओं को व्यक्त करेंगे । हिन्दी एक बहुत ही नम्र और अनाक्रामक भाषा है । अगर हिन्दी की जगह कोई भी भाषा राजभाषा या संपर्क भाषा बनी होती तो वह कितनी आक्रामक साबित हुई होती इसका अन्दाज लगाना मुश्किल है । लेकिन हिन्दी के साथ ऐसा नहीं क्योंकि इसका जन्म सामन्तवाद और श्रेष्ठता के आधार पर नहीं हुआ । यह लोक भाषाओं से बनी है और प्रकृति से सहिष्णु है । आधिपत्य करना हिन्दी की मानसिकता का हिस्सा नहीं। इसके बावजूद जब इस भाषा का विरोध होता है तो आश्चर्य होता है । इस भाषा के अंग्रेजी की तरह आर्थिक और प्रशासनिक हित भी नहीं क्योंकि यह साम्राज्यवाद या सामंत का उपकरण कभी नहीं थी और न हो पाएगी ।

हमारे लिए यह परम सौभाग्य और गर्व की बात है कि भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश है, और हमारा संविधान नैतिक विशिष्टता से भरपूर है। इसका श्रेय हमारे संविधान निर्माताओं को जाता है। विश्व के अन्य लोकतांत्रिक देशों के साथ भारत की लोकतांत्रिक प्रणाली की तुलना करने पर हमें खुशी और अभिमान होगा । कारण है कि हमारे देश में कई धर्मों, भाषाओं, सम्प्रदायों के लोग सदियों से मैत्रिभाव के साथ रहते आए हैं। सभी मतावलंबियों के बीच भावनात्मक एकता सद्‌भाव को बनाए रखने में सभी के जाननेवाली एक लोकप्रिय भाषा की विशेष भूमिका रहती है । इस भूमिका में भारत की प्रमुख भाषा देवनागरी लिपि में "हिन्दी" है। इस तरह समाज और भारतीय संस्कृति अनेकता में एकता का प्रतीक है । इसी वजह से भारत दुनिया का एक विशिष्ट, लोकतांत्रिक देश बना हुआ है ।

भारत एक विशाल देश है । हिन्दी सभी भारतीय भाषाओं में प्रमुख भाषा है । करोड़ों लोगों में भावनात्मक एकता बनाने की क्षमता रखती है । हिन्दी के अलावा इस देश में कई भाषाएं हैं । हालांकि इनका संबंध किसी प्रान्त विशेष से है, मगर सभी भाषाओं की विशेषता है कि उनका संबंध भारतीय संस्कृति से जुड़ा हुआ है । हिन्दी के साथ सभी प्रांतीय भाषाओं का भावात्मक स्वरूप संस्कृत का है । संस्कृत को भारतीय भाषाओं की जननी कहा जाए तो यह अतिश्योक्ति नहीं होगी । सभी प्रान्तीय भाषाओं में संस्कृत भाषा का शाब्दिक प्रभाव पाया जाता है । इस महान भाषा का प्रभाव हिन्दी भाषा में ज्यादा से ज्यादा होने के बावजूद हम हिन्दी के स्वरूप को नहीं पहचान सके हैं । समाधान की बात यह है कि हिन्दी भाषा की नींव भारतीय जनता के बीच में मजबूत जरूर है, लेकिन हमें समाज से, देश से भावनात्मक संबंध बनाए रखने हों तो हमारे देश की सभी प्रांतीय भाषाओं के साथ-साथ जनता और प्रशासन के बीच एक संपर्क भाषा के रूप में हमें राजभाषा हिन्दी को मान्यता देनी ही होगी । तभी हमारे देश की उन्नति होगी और जनता की भावनाओं को, सरकार की नीतियों और कार्यप्रणाली को आम जनता महसूस कर पाएगी । कुछ लोग सोचते हैं कि राजभाषा या राष्ट्रीय संपर्क भाषा हिन्दी ही क्यों । अन्य प्रांतीय भाषाएं राजभाषा क्यों नहीं बन सकती, ऐसा सोचते हैं । इस तरह के विचारों के फलस्वरूप कुछ प्रान्तों में काफी मतभेद रहा है और कई बार यह मतभेद ईर्ष्या, और झगड़ा-फसाद का कारण बन चुका है । इसके बारे में मुझे एक कविता की कड़ी याद आ रही है—

भाषा नहीं सिखाती आपस में बैर रखना।
हिन्दी हैं हम वतन है, हिन्दोस्तान हमारा।

अंग्रेजी, शासन की भाषा है, नीति निर्धारण की भाषा है, राजनायिकों के बीच संवाद की भाषा है, विज्ञान और प्रौद्योगिकी की भाषा है, कृषि में लाई जाने वाली उच्च टेकनीक की भाषा है । खादों और कीट नाशकों की भाषा है, दंड विधान की भाषा है, कचहरी के फैसलों की भाषा है, अस्पतालों की भाषा है, बच्चों के पब्लिक स्कूलों की भाषा है, संसद के प्रभावी लोगों की भाषा है, कानून की भाषा है—गरज कि कौन-सा ऐसा

क्षेत्र है जिसकी भाषा अंग्रेजी न हो। अंग्रेजी अगर किसी वर्ग की भाषा नहीं है तो वह इस देश के पंचानबें प्रतिशत से अट्ठानवें प्रतिशत उन लोगों की भाषा नहीं है जो अनपढ़ है या जो अपनी मातृभाषा ही लिख या बोल सकते हैं। ये पंचानबें प्रतिशत हिन्दी के ही लोग नहीं, सभी भारतीय भाषाओं से जुड़े लोग हैं। अपनी भाषा के साथ ऐसा मजाक शायद ही किसी ने किया हो जैसा इस देश के बहुसंख्यक लोगों की भाषा के साथ किया गया। बेहतर था कि उस समय हिन्दी को संपर्क भाषा या राजभाषा का नाम न दिया गया होता। कम से कम हिन्दी जैसी सामान्य आदमी की भाषा को इस संवैधानिक तथाकथित विशिष्टता के कारण इतना विरोध तो न सहना पड़ता। हिन्दी अपने ही देश की दूसरी भाषाओं की ईर्ष्या और घृणा की शिकार भी हो गई और अंग्रेजी का वर्चस्व भी बना रहा। अंग्रेजी देश के लोगों को दो वर्गों में बांट रहीं है। एक वे जो सत्ता में रहने के लिए बने हैं उनकी भाषा अंग्रेजी है। जब भी उन्हें दूसरों पर हुकूमत या रौब जमाना होता है तो वे उसी भाषा का प्रयोग करते हैं जिससे दूसरा सामान्य व्यक्ति हीनता के बोझ से दब जाए। दूसरे वे लोग जो गांवों में रहते हैं या शहरों में भी रहते हैं उन्हें अपने आर्थिक कारणों से बच्चों को पब्लिक स्कूलों में पढ़ाने का मौका मिलना संभव नहीं। पब्लिक स्कूलों में होने वाला पांच सौ से हजार रुपये माह का खर्चा उठाना उनके लिए संभव नहीं। अगर उतना खर्चा बर्दाश्त कर भी लें तो वे उन्हें उस तरह का वातावरण नहीं दे सकते। उनमें और अधिक हीनता की भावना जड़ जमाती है। वही बाद में चलकर माता-पिता के प्रति घृणा में बदल जाती है। उन्हें लगता है कि हम ऐसे दरिद्र माता-पिताओं के यहां पैदा हुए ही क्यों ?

सारे देश में हिन्दी भाषा को लोकप्रिय बनाने के लिए प्रशासन को चाहिए कि हिन्दी भाषा को सभी प्रांतीय शिक्षा विभागों को सलाह देकर स्कूलों में और औद्योगिक प्रशिक्षण केन्द्रों में इसकी पढ़ाई को अनिवार्य कर दिया जाए तो हिन्दी के प्रचार-प्रसार में दुगुनी वृद्धि होगी और युवावर्ग मजबूर होकर हिन्दी अपनाकर अपनी उन्नति कर पाएगा। देश के सभी राज्यों और केन्द्र सरकार की सेवाओं में सभी पदों को भरते समय अगर सरकार उम्मीदवारों को हिन्दी भाषा का ज्ञान होना अनिवार्य कर दे तो सभी सरकारी विभागों का कामकाज रचनात्मक ढंग से होगा। सफलता देश वासियों के चरण छूती रहेगी।

सरकारी सेवा के इच्छुक उम्मीदवार मजबूर होकर दिलोजान से हिन्दी भाषा सीखने पर बाद में वे अपने आपको सफल पाएंगे। उनमें एक नई आशा की किरण दिखाई देगी। सभी सरकारी कर्मचारियों में जब राजभाषा हिन्दी के प्रति अभियान की स्थापना होने पर वे प्रशासन के कामकाज के प्रति समर्पित कर्मचारी हो जाएंगे। राष्ट्रीय भावनात्मक एकता को बनाए रखने में भी हिन्दी भाषा की विशेष भूमिका हो सकती है। आज उदाहरण के लिए हम भारत के सामाजिक और राष्ट्रीय हालातों पर ध्यान दें तो हम पाएंगे कि संपर्क भाषा के रूप में हिन्दी भाषा सामाजिक उन्नति कर सकती है। आज समाज में व्याप्त रूढ़िगत अंधविश्वासों, सामाजिक कुप्रथाओं जैसे कि दहेज प्रथा, बाल विवाह, सती प्रथा जैसी कुप्रथाओं को हिन्दी के विशेष प्रचार द्वारा कड़ाई से रोका जा सकता है। देश में ज्यादा से ज्यादा जनता इस भाषा को समझती है जिसके कारण यह संभव है। कृषि और उद्योग के क्षेत्रों में जहां पर आज लाखों की संख्या में युवाशक्ति अन्य प्रान्तों में जाकर कार्य कर रही है अगर उनमें हिन्दी भाषा को कारगर ढ़ग से इस्तेमाल किया जाए तो कर्मचारियों में कार्यक्षमता काफी बढ़ सकती है। साथ ही राजभाषा हिन्दी के प्रति लोगों की निष्ठा जागृत होगी। हिन्दी भाषा का ज्ञान होना अनिवार्य कर दें तो सभी सरकारी विभागों का कामकाज रचनात्मक ढ़ग से होगा।

साल में एक बार संसद में हिन्दी को लेकर जरूर शुक्ल-पक्ष आता है। चन्द्रमा तो जब आकाश में निकलता है तभी समुद्र में ज्वार उठता है परन्तु हमारी संसद में तो हिन्दी का नाम लिया नहीं कि आक्रोश की लहरें आसमान को छूने लगती हैं। छोटे-मोटे ज्वार तो आते ही रहते हैं परन्तु बड़ा ज्वार वर्ष में एक बार आता है। यह कैसा देश है जहां विदेशी भाषा पूंजी और अपनी भाषाएं दुतकारी जाती हैं। दक्षिण भारत के लिए हिन्दी अब अपरिचित भाषा नहीं रही, अपितु दक्षिण के लोग भी राष्ट्र भाषा के रूप में हिन्दी को अपनी भाषा समझते हैं और इससे गौरवान्वित होते हैं।

हमारे सभी सशस्त्र बलों में सारे अधिकारियों और जवानों में राजभाषा हिन्दी के विकास को विकल्प के रूप में लेना चाहिए। इसमें संदेह नहीं कि जब हिन्दी का बोलबाला रहेगा तो सभी राज्यों की जनता की सुरक्षा जो सशस्त्र बलों, पुलिस बलों की जिम्मेदारी है उसे निभाने में मदद मिलेगी। साथ ही देश के सुरक्षा बलों के बीच आपसी एकता को मजबूती आएगी जिससे देश की सुरक्षा और भावनात्मक एकता सुनिश्चित हो जाएगी। इस तरह राजभाषा हिन्दी देश को सुख, शान्ति और समृद्धि की ओर ले जाने वाली एक सक्षम भाषा है। देशवासियों को चाहिए कि वे अपने को जागृत कर सामाजिक और राष्ट्रीय उन्नति को ध्यान में रखते हुए अपने को राजभाषा के प्रति समर्पित करें तभी भारत अपनी संस्कृति रूपी पताका को विश्व के सामने लहराने में सक्षम होगा।

"वर्तमान जनभाषा आन्दोलन में दरअसल लड़ाई अंग्रेजी और जनभाषाओं के बीच है, हिन्दी और अंग्रेजी के बीच नहीं है। परन्तु जो लोग अंग्रेजी चलाना चाहते हैं, वे प्रचार करते हैं कि अंग्रेजी हटाने के लिये आन्दोलन करने वाले तो हिन्दी लादना चाहते हैं"। आज भाषा के जनतन्त्र की मांग है कि आन्ध्र में तेलुगु, कश्मीर में कश्मीरी, केरल में मलयालम, तमिलनाडु में तमिल चले, न कि हिन्दी। 1967-68 के बाद जैसा भाषा आन्दोलन आज तक सामने नहीं आया तो इस लिये कि हिन्दी वालों को यह आत्म-विश्वास है कि हिन्दीतर लोग स्वंय ही इसे पूरा कर अंग्रेजी की अनिवार्यता समाप्त कर सकते हैं। भारतीय जनभाषाओं को एक साथ मिलकर साँझी लड़ाई-लड़नी होगी तभी अंग्रेजी को हटाने का विकल्प बन सकता है। डॉ राममनोहर लोहिया ने कहा था कि "वे लोग बेवकूफ हैं जो समझते हैं कि अंग्रेजी के रहते हुए जनतन्त्र भी आ सकता है। हम तो समझते हैं कि अंग्रेजी के होते यहां ईमानदारी आना भी असंभव है। थोड़े से लोग इस अंग्रेजी के जादू द्वारा करोड़ों को धोखा देते रहेंगे।" राजभाषा हिन्दी से देश को लाभ ही लाभ हैं, हानि का तो प्रश्न नहीं है। हां, हानि कुछ लोगों के विचार में हो सकती है जो देश की सुरक्षा एकता और अखण्डता में विश्वास नहीं रखते। समाज से, देश से उन्हें कोई सरोकार नहीं रहता। वह लोग सिर्फ अपने ही स्वार्थ की पूर्ति में लगे रहते हैं। संपर्क भाषा के रूप में हिन्दी भाषा को अगर हम दिल से अपनाएंगे तो हमें जीवन के हर क्षेत्र में सफलता की मंजिल नजदीक आती रहेगी। क्योंकि हम जो भी कार्य

3176 HA/99--5A

व्यक्तिगतरूप से सामाजिक या राष्ट्रीय हितों को ध्यान में रखते हुए करेंगे उसमें कार्यसिद्ध की काफी संभावना रहती हे। इसलिए कि हमें एक राष्ट्रीय संपर्क भाषा का ज्ञान होने की वजह से जनता और प्रशासन के बीच विचारों का आदान-प्रदान सही ढंग से होता रहता है। इससे खास फायदा यह होता है कि प्रशासन को जनता की समस्याओं को समझने में काफी सहायता मिलती है। इस देश की सरकार प्रजातांत्रिक शासन प्रणाली की होने की वजह से जनता की ही भाषा में व्यवहार किया जाए तो पूरे देश की उन्नति के लिए लाभदायक बात होगी। अगर स्वभाव और संवेदना के अनुसार भाषा या भाषाओं का विकास नहीं होता या हुआ या मातृभाषा से बहुत देर तक बच्चों को वंचित रखा गया या उनका रियाज मातृभाषा या भारतीय भाषाओं की जगह विदेशी भाषा में ही जारी रहा तो उसी के अनुसार जिव्हा और अन्य वाक्-अंगों में परिवर्तन आ जाता है। यह गवेषणा का विषय है हम जिन ध्वनियों को उच्चारित करने वाले अंगों का प्रयोग छोड़ते जाएंगे वही अंग निष्क्रिय होते जाएंगे। भाषा का स्वभाव और वातावरण से बहुत गहरा संबंध होता है। हमारी भाषा की अधिकतर ध्वनियां हमारे वातावरण से उत्पन्न हुई हैं। अगर हम अपनी मातृभाषा में भी महारत रखें और दूसरी भाषाएं सीखते जाएं तो हमारी उच्चारण क्षमताएं यथावत रहेंगी। बल्कि उनका विकास होगा। भारत गांवों का देश है, किसानों का देश है। सरकार देशहित में अगर हिन्दी को ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षित किसानों के लिए हिन्दी शिक्षा पर बल देगी तो निश्चय ही किसानों में एक नई जागृति आएगी। उन्हें अपने क्षेत्र से बाहर अन्य राज्यों में कृषि-अनुसंधान और सूचनाओं को जानने का मौका मिलने पर कृषि क्षेत्र में नया परिवर्तन आएगा जिससे किसानों की उन्नति होगी। बेरोजगार ग्रामीण युवाओं में राजभाषा के प्रसार से कृषि और उद्योग के क्षेत्रों में वे अपना योगदान दे सकेंगे क्योंकि ग्रामीण युवावर्ग में प्रादेशिक भाषा का ही अब तक बोलबाला रहा है। उनमें जब राजभाषा हिन्दी का ज्ञान हो जाने पर पूरे देश के प्रति उनमें अपनी कृषि और अन्य उद्योगों की जानकारी हो जाएगी। इस तरह ग्रामीण युवाओं में एक नई चेतना को जगाने में राजभाषा हिन्दी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। पूरे देश में चल रही प्रौढ़ शिक्षा प्रणाली में हिन्दी भाषा को प्रधानता दी जाए तो युवावर्ग में निश्चय ही जागृति आएगी।

हिन्दुस्तान में भाषा की समस्या और अंग्रेजी के नाम पर आम लोगों का जो शोषण हो रहा है, उसके पीछे एक लंबा इतिहास है। हिन्दुस्तानी समाज में हमेशा से ही ऐसे लोग और वर्ग रहे हैं, जिन्होंने अपने को अन्य लोगों से भिन्न रखकर अलग पहचान बनाने की कोशिशें की हैं। इस उद्देश्य के लिए भाषा और जाति का भरपूर उपयोग किया गया। प्राचीन काल में संस्कृत भाषा शासक एवं उच्चवर्ग की भाषा बनी रही। मध्यकालीन हिन्दुस्तान में फारसी और अंग्रेजी शासन के समय से आज तक अंग्रेजी। ऐसे कई किस्म के स्कूल, कालेज और विश्वविद्यालय हैं, जहां पर अलग-अलग किस्म की शिक्षा दी जाती है। बड़े समृद्ध लोगों के लिये अंग्रेजी माध्यम के फैशनेबुल स्कूल हैं जहां पर हर किस्म की सुविधा उपलब्ध है। दूसरी ओर अधिकांश बच्चों के लिए विभिन्न देशी भाषाओं में चलाये जाने वाले स्कूल हैं।

भाषा के माध्यम से होने वाले इस तरह के शोषण को देखकर ही महात्मा गांधी ने स्वतंत्रता के उपरांत बीबीसी से अपनी पहली भेंट में कहा कि "जाकर कह दो सारे संसार से की गांधी केवल हिन्दी जानता है और कुछ नहीं जानता।"

हिन्दी भाषा भारतीय संस्कृति की विरासत है। हिन्दी में वह क्षमता है कि वह अन्य प्रादेशिक भाषाओं की संस्कृति को भी आत्मसात कर सकती है। अपनी प्रादेशिक भाषाओं के साथ-साथ अगर हम राजभाषा हिन्दी का भी समुचित विकास करें तो हम आसानी से देश को एकता के सूत्र में पिरो सकते हैं। हमारे देश में एक भ्रांत धारणा है कि राष्ट्रभाषा और प्रादेशिक भाषाओं की अपेक्षा विदेशी भाषा में कामकाज चलाने और बातचीत करने से हमारी प्रतिष्ठा बढ़ती है। "हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा है।" हमारे शासन की राज भाषा है। हिन्दी साधना एवं अभ्यास के रहते आसानी के साथ सभी को अवगत होने वाली भाषा है। कोई कारण नहीं कि यदि हम इसमें लिखने, सोचने और बातचीत करने का प्रयास करें, हम उस पर अधिकार नहीं कर सकते।

अब सबसे बड़ा प्रश्न हो गया है, राज-काज की भाषा के रूप में हिन्दी को स्थान दिलाने का अत: सबसे पहले और सबसे अधिक प्रयत्न इस दिशा में होना चाहिए। आजादी के बाद सबसे पहले बिहार, उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश की सरकारों ने 1950 ई. में एक विधेयक द्वारा निर्णय किया कि सात वर्षों के अन्दर वह अपने सारे राज-काज हिन्दी में करने लगेगी, ऐसा नहीं हो सका और उसे फिर तीन वर्ष का समय इसके लिए लेना पड़ा। अन्य हिन्दी प्रदेशों में भी इससे अच्छी स्थिति नहीं है। यदि 1960 ई. तक भी हिन्दी राज्यों में इस महत्वपूर्ण काम को पूरा कर लेते तो फिर हमें आज दक्षिण वालों का विरोध न सहना पड़ता।

अतएवं हिन्दी-भाषीयों को हिन्दी के लिए आंदोलन करना है, तो हिन्दी राज्यों में ही एक ऐसा वातावरण बनाना है कि सभी हिन्दी राज्यों के संपूर्ण राज-काज हिन्दी में होने लगें। इसके लिए दृढ़ इच्छा शक्ति की जरूरत है । समय-समय पर रेल व बसों में यात्रा करते समय देखने में आता है कि, हिन्दी भाषी मंत्री, अधिकारी और विशिष्ट नेतागण भी हिन्दी लिखने व बोलने में अपना गौरव अनुभव नहीं करते हैं, वे लोग इस कुप्रवृत्ति को तुरन्त छोड़ दें। इसके लिए प्रदर्शन किए जाएं कचहरियों, सचिवालय विधानसभाओं के निकट हजारों लाखों की संख्या में एकत्र होकर हिन्दी प्रेमी व जनसाधारण यह बता दें कि वे अंग्रेजी को अपने राज-काज में चालू रखा जाना कदापि बर्दाश्त नहीं कर सकते, इतना ही नहीं बल्कि मंत्री, सांसद व विधायकों के निर्वाचन क्षेत्र में मतदाताओं की बड़ी-बड़ी जनसभाएं करके उन्हें निर्देश दिया जाए कि वे अंग्रेजी के मोह को तुरन्त छोड़े हिन्दी को अपनाएं। हिन्दी एकता व अखंडता को बनाए रखने के लिए अनिवार्य शर्त है। अन्त में हमें पूर्ण विश्वास है कि हिन्दीतर जब भी अपने मन से हिन्दी को अपनाने में पीछे नहीं रहेंगे तथा वास्तविक रूप से संपूर्ण भारत की राष्ट्र-भाषा हिन्दी बनकर रहेगी।

"हमारे देश में विभिन्न प्रांतों की जनता के बीच समन्वय एवं संपर्क करने के लिए संपर्क भाषा के रूप में हिन्दी सीखना हमारे लिए अत्यन्त आवश्यक है। यही सारे भारत को एक करने वाली शक्तिवान एवं सक्षम भाषा है।"

आजादी से पूर्व भी कोशिशें हुई थीं। महात्मा गांधी ने कांग्रेस के अधिवेशन तथा कार्यप्रणाली में हिन्दी का प्रयोग शुरू करवाया जो उनके पहले नहीं था, उनके पहले अंग्रेजी में कार्य होता था। जिससे कांग्रेस जन का संगठन बन गई। इसी तरह सुभाषचन्द्र बोस ने फौज में चल रही अंग्रेजी परंपराओं को तोड़कर आजाद हिन्द फौज के सभी कामकाज हिंदुस्तानी में करवाना आरम्भ किया था। आज भारत दो हिस्सों में बंटा हुआ है, जिसका एक हिस्सा अंग्रेजी पढ़े लिखे लोगों का है और दूसरा हिस्सा जन भाषाओं को जानने वालों का है। जो लोग व्यवस्था परिवर्तन और समृद्धि की बात करते हैं और अंग्रेजी को भी कायम रखना चाहते हैं, वे अपने आपकों तथा दूसरों को धोखा दे रहे हैं। चाहे वे कितने ही परिवर्तनशील हों लेकिन अंग्रेजी को देश के कामकाज और माध्यम के रूप में रखकर समाज परिवर्तन नहीं किया जा सकता। दुनिया में कोई भी देश बिना अपनी निजी भाषा के प्रगति नहीं कर पाया है। जापान, चीन या रूस, किसी भी देश को ले लो वह देश हर दृष्टि से प्रगति के पथ पर अग्रसर है जो अपनी ही भाषा को महत्व देते हैं।

अब हमें आजाद हुए 50 वर्ष बीत चुके हैं किन्तु दुःख है इन वर्षों में हिन्दी भाषी राज्यों में हिन्दी भाषियों ने हिन्दी के लिए क्या किया। हिन्दी भारत की राष्ट्र भाषा है, इसकी लिपि सरल व सुबोध है। इसके अतिरिक्त संपूर्ण देश में बोली व समझी जाने वाली एक मात्र भाषा हिन्दी है। इसी कारण सभी प्रांतों के नेता सर्व सम्मति से हिन्दी को ही राष्ट्रभाषा मानते हैं। किन्तु हिन्दी को सिर्फ दफ्तरी भाषा मानकर नहीं चलना चाहिए। दफ्तरी भाषा के पद पर हिन्दी को प्रतिष्ठित किये जाने को ही हिन्दी भाषियों ने अपनी विजयश्री मान लिया तथापि वे अब फूले नहीं समा रहे हैं, वे अपना कर्तव्य भूल गये जबकि उन्हें जो अपने घर में करना चाहिए नहीं किया और वे हिन्दी की दिग्विजय की कल्पना में विभोर हो गए।

हिन्दी हमारी अस्मिता की भाषा है, लोक-चेतना की भाषा है। मध्यकाल से ही यह सामंजस्य की भाषा रहने के साथ-साथ लोक चेतना से संबद्ध रही है। किसी भी लोकशाही में लोक चेतना से जुड़ी भाषा की हिन्दी से जुड़ी संबद्ध भाषा की लंबे समय तक उपेक्षा नहीं की जा सकती। हिन्दी में अद्‌भुत सामर्थ्य है जरूरत है राष्ट्रीय परंपरा सोच से परिपूर्ण मानसिकता का माहौल तैयार करने बहुजन सोच को उचित मोड़ देने की।

हिन्दी ... माता का दूध

एक बार श्री काका साहब कालेलकर ने गांधीजी से कहा कि अपने जमाने में मराठी की उत्तम सेवा करने वाले महाराष्ट्रीय देशभक्त श्री विष्णु शास्त्री चिपलूणकर अंग्रेजी के बड़े भक्त थे. वे कहते थे - अंग्रेजी तो शेरनी का दूध है

गांधीजी ने तुरन्त कहा, "दुरुस्त है, शेरनी के बच्चे को ही शेरनी का दूध हजम होगा और लाभ करेगा. आदमी के लिए अपनी माता का दूध ही अच्छा है, हम अपने को शेर नहीं बनाना चाहते । हमारी संस्कृति की जो विरासत है वह हमें संस्कृत, हिन्दी, गुजराती, इत्यादि देशी भाषाओं के द्वारा ही मिल सकती है"।

गांधीजी ने फिर कहा, "हमारे साहित्य में अगर कोई कमी है तो उसे दूर करने में ही हमारा पुरुषार्थ है । अंग्रेजों ने पुरुषार्थ के साथ अपना साहित्य बढ़ाया इसलिए अगर हम अंग्रेजी को ही अपनी मातृभाषा बनायेंगे तो वह आत्मनाश ही होगा. सांस्कृतिक आत्महत्या होगी "

भाषा

मन के विचार और भाव, शब्दों में प्रकट करने की साधना शिक्षा का एक प्रधान अंग है। स्वस्थ प्राण या मन का लक्षण ही है - भीतर और बाहर की देने-लेने की प्रक्रिया का सामंजस्य साधन। विदेशी भाषा ही अगर प्रकाश-चर्चा (भाव प्रकट करने की चर्चा) का प्रधान अवलम्ब हो, तो वह एक तरह से नकली चेहरे के भीतर से भाव प्रकाश का अभ्यास ही साबित होता है । नकली चेहरा लगाकर किया गया अभिनय मैंने देखा है । उसमें साचे में ढले भाव को एक बंधी हुई सीमा के भीतर अविचल करके दिखाया जाता है, उसके बाहर जाने की स्वाधीनता उसमें नहीं दी जाती, विदेशी भाषा के आवरण की ओट में भाव प्रकट करने की चर्चा जाति की है।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर

गुरु नानक देव जी का दैवीजीवन और अमर संदेश

—नरेन्द्र कुमार शर्मा

गुरु नानक देव जी (1469 से 1539 ई.) ने अपनी सत्रह वर्ष की विश्व यात्रा के समग्र इतने महान् कार्य किए और मनुष्यता का प्रत्येक पक्ष से उन्नत करने के लिए इस प्रकार का मौलिक, बलवान और कायाकल्प करने वाला अनुभव अपनी वाणी द्वारा प्रस्तुत किया है कि इतिहास के कैनवस पर उनके हस्ताक्षर दिन प्रतिदिन और भी अमिट होते जाते हैं।

गुरु नानक देव जी के जीवन की प्रमुख घटनाओं के संबंध में जानने के लिए सबसे पुरातन रागियों में से कुछ जन्म साखियां हैं या फिर भाई गुरुदास जी की प्रथम वार में 23वीं पउड़ी से लेकर 45वीं पउड़ी तक रचनाओं को सम्मिलित किया जाता है। महिमा प्रकाश गुरुप्रताप सूरज ग्रंथ और ज्ञान रत्नावली को भी पुरानी यानि प्राचीन रचनाओं में ही गिना जा सकता है। कई आधुनिक देशी और विदेशी इतिहासकारों ने भले ही संबंधित साखियों की व्याख्या अपनी श्रद्धा युक्त और इसके विपरीत तार्किक रुचि के अनुसार भिन्न-भिन्न रूप से की है। परन्तु गुरुनानक देव जी के महान् व्यक्तित्व के संबंध में इतिहासकारों का मत है कि गुरु जी अपने समय के भारत में सबसे बड़े चिंतक थे और उनकी लोकप्रियता सिक्खों के अतिरिक्त हिंदुओं, मुसलमानों और अन्य धर्मों के अनुयायियों में भी अथाह थी।

बचपन में संस्कृत पढ़ाने वाले पंडित और फारसी पढ़ाने वाले मौलवी को अपनी तीक्ष्ण-बुद्धि से आश्चर्यचकित करने वाले गुरुनानक देव जी के संबंध में रस्मी यज्ञोपवीत न पहनने, वाणिज्य के लिए पिता से मिली सारी राशि भूखे और नंगे साधुओं को लुटाने आदि के संबंध में अनेक साखियां सदियों से दोहरायी जा रही हैं। उन्नीसवीं सदी के विगत पचास वर्षों में और बीसवीं सदी के पहले पचास वर्षों में कई जगत प्रसिद्ध विदेशी और देशी इतिहासकारों ने वैज्ञानिक दृष्टि से गुरु जी के साथ संबंधित प्रसंगों की व्याख्या की है। गुरु जी के श्रद्धालुओं और प्रशंसकों द्वारा उनके जीवन से संबंधित किए गए चमत्कारों को आंखों से ओझल करके भी वैज्ञानिक दृष्टि के इतिहासकार गुरु नानकदेव जी को अपने समय का महान् युग पुरुष ही दर्शाते हैं। कई युग-पुरुष इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठों तक ही सीमित रहते हैं पर गुरु नानक देव जैसा महान् युग-पुरुष पांच सदियों से निरंतर अपने करोड़ों अनुयायियों के अतिरिक्त दुनियां भर के अनेक धर्मों और संप्रदायों के अगुवाओं के लिए प्रेरणा स्त्रोत बना आ रहा है।

यहां तत्कालीन युग के प्रसिद्ध दार्शनिक रजनीश का उदाहरण देना उचित होगा। उनके पुरातन जन्म साखी द्वारा सदियों से प्रचलित गुरु नानक देव जी के जीवन के साथ संबंधित साखी 'वेयी प्रवेश' से प्रेरित हो कर पूरे 561 पृष्ठों का वृहत ग्रंथ लिखा है 'ओउम सतिनाम'। यह ग्रंथ उसके कैसिटों द्वारा ओशो रजनीश मिशन ने प्रकाशित किया था जिसके कई संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं। भले ही उस ग्रंथ में गुरु नानक देव रचित 'जपुजी' साहिब के संबंध में ओशो रजनीश के प्रवचन हैं। परन्तु संपूर्ण पुस्तक 'वेयी नदी' वाली साखी से प्रेरित होती है क्योंकि संबंधित साखी गुरु जी को नाम रूपी अमृत का प्याला सच खंड में से प्राप्त होता है यह दर्शाती है। ओशो रजनीश ने गुरु जी द्वारा नाम की प्राप्ति का महत्व दर्शाने के लिए जो प्रवचन कैसिटों या संबंधित पुस्तक द्वारा प्रस्तुत किए हैं वे आधुनिक युग की परिस्थतियों के अनुसार अत्यंत उपयोगी हैं। दार्शनिक या तार्किक वृत्ति के लोग और श्रद्धा भाव वाले साधारण मनुष्य भी 'जपुजी साहिब' के साथ संबंधित पुस्तक से एक जैसे प्रभावित हो कर गुरु नानक देव जी की महानता के कायल हो जाते हैं।

गुरु नानक देव जी के जीवन के साथ संबंधित सैकड़ों साखियां मनुष्य को दैवी रंगत में रंगने और मनुष्यता की सेवा के लिए प्रेरित करने में सहायक होती हैं। मोदी खाना, सज्जण ठग, बसता रहे, उजड़ जाए, भाई लालों और मलक भागो आदि किस किस साखी का इस छोटे से लेख में वर्णन किया जाए। मक्के और जगन्नाथपुरी की साखियां भी बहुत महत्वपूर्ण हैं। परन्तु यहां केवल एक अन्य साखी प्रस्तुत करके गुरु जी द्वारा रचित वाणी की विशेषताएं दर्शायी जाएंगी। एक पुरातन साखी के अनुसार गुरु जती के ज्योति-ज्योति समाने के कुछ समय पहले एक बार जब भाई लहिणा गुरु जी के चरणों में उपस्थित होने के लिए पहुंचे तो यह विदित हुआ कि गुरु जी खेतों में खेती बाड़ी कर रहे थे। जब भाई लहिणा खेतों में पहुचे तो उसने देखा कि गुरु नानक देव मिट्टी और पानी के साथ धो-धोकर निकालकर घास की गांठ बांधकर अपने सिर पर उठाने के लिए तैयार खड़े थे। भाई लहिणे के काफी अनुरोध करने पर वह गांठ गुरु जी ने भाई लहिणे के सिर पर रख दी। जब लहिणा जी के कपड़े कीचड़ से भर गए यानि लथ-पथ हो गये तो माता सुलक्षणी (गुरु जी की सुपत्नी) के शिकायत करने पर और गुरु जी ने उन्हें यह कह कर शांत कर दिया कि भाई लहिणा

हिन्दी शिक्षण योजना, गृह मंत्रालय

सेवा और श्रम करके आया है इसलिए उसके कपड़ों को कीचड़ नहीं लगा वरन् केसर लगा है। इस साखी का दूसरा पक्ष भी है और वह उससे भी अधिक महत्व रखता है। गुरु जी समग्र दुनियां की यात्रा करके और अनेक धर्मों के अगुवों और प्रभु ज्ञान और मनुष्यता की सेवा के संबंध में सहज स्वभाव अंकित करने के उपरांत जब अपनी आयु के अंतिम वर्षों में 'करतारपुर' आकर बस गए तो उन्होंने अमली जीवन के माध्यम से गृहस्थ धर्म और हाथ से श्रम करने की महानता को दृढ़ करवाया 'गिरही माहि उदासी' ही गुरु नानक देव जी के धर्म का मुख्य उद्देश्य है।

गुरु नानक देव रचित वाणी 17 रागों में है और आकार के पक्ष से गुरु ग्रंथ साहिब में गुरु अर्जुनदेव की वाणी के पश्चात् गुरु नानक देव जी वाणी वृहदाकार वाली है। भाई गुरदास की प्रथम वार की 33वीं पउड़ी द्वारा यह सिद्ध हो जाता है कि गुरु नानक देव अपनी रचित (शायद और भक्तों की भी) वाणी एक पोथी में संभाल कर प्रत्येक क्षण अपने साथ रखते थे। 'मक्के वाली साखी' के संबंध में भाई गुरदास अपने ऊपर संकेत की गई पउड़ी में लिखते हैं कि गुरु साहिब के पास (रुमाल में लपेट) पोथी देखकर मुस्लिम हाजीयों ने प्रश्न किया कि अपनी पोथी खोलकर बताएं कि प्रभु की दरगाह में हिंदू आज्ञा में से बड़े हैं या मुसलमान। उनके प्रश्न का उत्तर गुरु साहिब ने यह दिया कि प्रभु की दरगाह में शुभ अमलों से केवल दोनों धर्मों के अनुयायी होंगे :

पुछणि फोलि किताब नो
हिंदू वडा कि मुसलमनोयी।
बाबा आखे हाजीयां
शुभ अमलां बाझें दोंवे रोयी।

गुरु नानक देव जी की निम्नलिखित रचनाएं अत्यंत लोकप्रिय हैं, वैसे तो उनके अनेक शब्दों का गायन भी प्रतिदिन संसार भर में स्थित गुरुद्वारों, कीर्तन मंडलियों, टी. वी., रेडियो आदि से प्रसारित किया जाता है :

(अ) जपुजी, (आ) सिद्ध गोष्ठी, (इ) आसा की वार, (ई) माझ की वार, (उ) बारहमाह तुखारी, (ऊ) मल्हार की वार, (ए) दक्खिनी ओअंकार आदि।

गुरुजी की उपर्युक्त रचनाएं सिक्ख धर्म के दर्शन का आधार हैं। जपु जी साहिब' को प्रारंभ में उच्चरित किए गए 'मूलमंत्र' और समग्र 'जपुजी' को गुरु ग्रंथ साहिब की विचार धारा का आधार स्वीकार किया जाता है। इस लोकप्रिय रचना के अब तक एक सौ से अधिक टीकाएं और अनुवाद (अन्य भाषाओं में) किए जा चुके हैं। जिस प्रकार ओशो रजनीश, सतिनायु शब्द से प्रेरित होकर इतना बड़ा ग्रंथ लिखा गया। उसी प्रकार आचार्य विनोबा भावे मूल मंत्र के दो शब्दों 'निर्भऊ निरवैर' प्राप्ति के लिए साधना के आठों अंगों को दर्शाने वाली महत्वपूर्ण पउड़ी स्वीकार करते हैं। वे 'जपुजी' को उपनिषद का स्तर देते हुए उस में समाहित ब्रह्म ज्ञान को सत्कार देते हैं।

'आसा की वार' का कीर्तन लाखों परिवार अमृत समय दरबार साहिब से श्रवण करते हैं। इस रचना द्वारा परमार्थिक के साथ ही व्यावहारिक जीवन के लिए भी भरपूर अगुवायी प्राप्त होती है । राग और छंद की चाल भी हृदय को आश्चर्य चकित कर देती है। गुरु जी ने समग्र सृष्टि को 'जपुजी' और 'आसा की वार' की कई पउड़ियों के माध्यम से प्रभु के आदेशानुसार अथवा प्रभु की प्राप्ति के लिए चलते हुए दर्शाया है। एकेश्वर वाद और एक ही परमात्मा का आदेश और रजा ही स्वीकार करने के बिना न तो 'जपुजी' के आंतरिक अर्थों की समझ आ सकती है और न ही 'आसा की वार' की।

'सिद्ध गोष्ठी' सूत्र बद्ध शैली में लिखी हुई सिक्ख दर्शन को सैद्धांतिक रूप में वर्णित करने वाली अद्वितीय रचना है इस के द्वारा यह निश्चित किया गया है कि 'शब्द' गुरू है और 'एकाग्र सुरति' (इकागर) सच्चा सिक्ख है। क्योंकि सिक्ख धर्म में गुरू गोविंद सिंह के पश्चात् किसी देहधारी महापुरुष के विपरीत केवल ग्रंथ साहिब को ही गुरू का स्तर प्राप्त है। इसलिए कई संत महात्मा जिनकी कौम अथवा सतसंगियों में सिक्खों की अच्छी गिनती समझी जाती है अपने द्वारा आयोजित होने वाले रूहानी समागमों को 'शब्द समागम' का नाम देते हैं। सिक्ख संगति में लोकप्रिय कई संतों ने 'शब्द गुरू' के विषय पर विगत कई वर्षों में शब्द समागम भी करवाए हैं। यह सब 'सिद्ध गोष्ठी' द्वारा दृढ़ करवाए गए 'शब्द गुरू' सिद्धांत के फलस्वरूप हो रहा है। पर यहां एक सच्चा सिक्ख बनने का संबंध है क्या 'सुरति धुन चेला' का वाक्यांश भी सब सिक्खों को प्रतिक्षण याद रहता है।

ब्रह्म, जीव और सृष्टि रचना के अतिरिक्त गुरू नानक देव जी की वाणी का महत्व समकालीन देशवासियों के सामाजिक, ऐतिहासिक, राजनैतिक और भाईचारक जीवन की अधोगति को दर्शा कर उनमें व्यापक बुराइयों को दूर करना है। उदाहरणतया गुरू नानक देव जी के समय में भारतीय समाज जाति-विभाजन के कारण दबी हुई और प्रताड़ित श्रेणियों को अत्यंत घृणा की दृष्टि से देखता था और अत्याचार करता था। गुरू नानक देव जी ने जाति-पांति के अभिमानी ब्राह्मणों को चेतावनी दी कि प्रभु के द्वार पर जाति नहीं जानी जाती वरन अच्छे व्यवहार से ही सम्मान होना है। गुरू जी ने अपने आप को नीचों के अंदर नीच जाति का ही नहीं कहा वरन् 'नीची हूं अति नीच' कह कर अपने आपको नीची जाति के लोगों में सम्मिलित करने का साहस किया।

दलित जाति की भांति स्त्री की स्थिति भी तब अत्यंत कृपा के योग्य थी। गुरू नानक देव जी ने अत्यंत जोरदार तुकों के माध्यम से कहा कि जो स्त्री राजाओं को जन्म देती है, उसे मंद भाग्य कहना किसी प्रकार से भी उचित नहीं है।

भले ही कबीर जी ने भी दलित जाति के पक्ष में अत्यंत ऊंची आवाज बुलंद की थी परन्तु कबीर की वाणी में उस समय की राजसी अधोगति का वर्णन नहीं मिलता। इसलिए मुहम्मद, लतीफ, कनिंघम, डा० तारा चंद आदि अनेक देशी और विदेशी इतिहासकारों ने गुरू नानक देव की वाणी में सामाजिक और राजनैतिक चेतना की सराहना की है।

अपनी समकालीन राजनीति के अत्याचारों और उन अत्याचारों को सहन करने वाली भारतीय जनता को संबोधित करके गुरू जी ने अद्वितीय साहस का परिचय दिया है। जैसे :—

अ. लबु पापु दुयि राजा महता कुडु होया सिकदार।
अंधी रयति गिआन विहुणी भाहि भरे मुरदारू।

आ. कलि काती राजे कासायी धरमु पंख करि ऊडरिया।
कूडु अमावस सचु चंद्रमा दीसै नाही कर चड़िया।

ई. राजे सीह मुकदम कुत्ते। जायि जागायिनि बैठे सुत्ते।

इतिहासकारों के अनुसार बाबर ने भारत पर पांच आक्रमण किए। हिंदुस्तान के सभी भक्त कवियों और पंद्रहवी सदी के शेष कवियों की तुलना में गुरू नानक देव जी केवल एक महान कवि हैं, जिन्होंने बाबर के आक्रमण के विरुद्ध उसकी पंजाब में उपस्थिति के समय आवाज उठायी थी। (सचु की वाणी नानक आखै सचु सुणयिसी बच की बेला) 'हिंदुस्तान' शब्द का प्रयोग भी अपनी वाणी में सबसे पहले गुरू नानक देव जी ने किया है। हिन्दुस्तान का केवल नाम ही नहीं लिया वरन् गुरू नानक देव के हृदय ने बाबर के हिंदुस्तान पर हुए आक्रमण के करूणा रौद्र और करुणा के भावों में डूब कर क्रंदन किया है। जैसे :

अ. 'खुरासान खमसाना कीया हिंदुस्तान डरायिया।
आपे दोसु न देयी करता जमु करि मुगलु चढ़ायिया।
ऐतीमार पयी कुरलाणे तैं की दरदु न आयिया।'

ऐतिहासिक पक्ष से भी और देश भक्ति के पक्ष से भी निम्नलिखित दो तथ्य अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। गुरू जी ने बाबर फौज को 'पाप की जंव' कहने के उपरांत उसके सैनिकों द्वारा जहां हिन्दू स्त्रियों को काटने और पतिहीन करने का वर्णन किया है वहां मुसलमान औरतों के बुरके पहनने के स्थान पर फाड़ने की ओर संकेत भी किया है। अन्य शब्दों में गुरू जी ने एक बड़ी सच्चाई से परदा उठाया है कि आक्रमणकारी और डाकू का कोई धर्म नहीं होता। बाबर इस्लाम को मानता था परन्तु भारत पर आक्रमण के समय उसने इस्लाम धर्म को स्वीकार करने वाली औरतों को उसी प्रकार पतिविहीन कर दिया जिस प्रकार हिन्दू औरतों को। दूसरे गुरू जी ने एक देश भक्त कवि की भांति बाबर के समय हिंदुस्तान के तख्त पर बैठे लोदी शासकों को लानत दी कि उनके रंग तमाशों के चाव में अपनी सुरति गुआ के लिए और हिंदुस्तान जैसे हीरे को (बिना उसकी रक्षा करने के) बाबर के कुत्ते फौजियों के आगे फेंक दिया।

अंत में गुरू नानक देव जी की वाणी के एक अन्य पक्ष की ओर संकेत करना अयोग्य नहीं होगा कि गुरू नानक देव का किसी भी धर्म या वर्ग के साथ वैर भाव नहीं था, वरन् भिन्न-भिन्न धर्मों या वर्गों में व्यापक बुराइयों को दूर करके उनके साथ संबंधित रस्मों, चिह्नों, कथाओं आदि का ज्ञान करवाना था। उदाहरणतया उन मुसलमानों को कहा कि 'मेहर की मस्जिद बनाओ और क्वचन का आसन नीचे बिछाकर हक हलाल के कुरान में से आयितें पढें अथवा नमाज़ अदा करें।' इसी प्रकार योगमत वाले भूले-भटके योगियों को समझाया कि जटाएं बढ़ाने से या गंजा सिर करवाने से योग नहीं मिलता न ही शरीर पर भभूत लगाने से। वरन् माया में रहते हुए माया से निर्लेप होने के साथ योग प्राप्त होता है। (अंजनु महि निरंजन रहीऐ, जोगु जुगति इव पायीऐ)।

गुरू नानक देव जी का जीवन, ध्येय और संदेश समग्र मनुष्यता को एक ही सर्वव्यापक प्रभु के नाम में रंग कर सच्चाई और संयम का जीवन व्यतीत करने के लिए प्रेरित करना है।

"राष्ट्रभाषा की उपेक्षा से
देश का भविष्य
अन्धकारमय हो जायेगा।"

- महादेवी

नाभिकीय विखंडन—एक स्थूल दृष्टि

—ए०एस० पाण्डेय

वैशेपिक दर्शन के जन्मदाता ऋषि कणादि ने बहुत ही पहले यह मान्यता प्रस्तुत की थी कि पदार्थ (या कोई तत्व) छोटे-छोटे कणों से मिल-कर बना है और यदि किसी तत्व के एक छोटे से परिमाण को लेकर निरन्तर छोटे-छोटे टुकड़ों में विभाजित करते चले जाएं तो निस्संदेह एक ऐसी आत्यान्तिक अवस्था आएगी जिसके आगे फिर उस तत्व को और सूक्ष्म कणों में विभाजित नहीं किया जा सकता। यह कण जो अब और अधिक विभाजित होने से इनकार कर देता है उसे "परमाणु" कहते हैं। अब थोड़ा एक बात और सामने आती है, उस पर भी गौर कर लें—हम अपनी आंखों से छोटी-छोटी चीजें देख सकते हैं परन्तु एक स्थिति ऐसी भी आती है कि निश्चित छोटाई से आगे हम नहीं देख सकते। तो क्या वह चीज अस्तित्व में है ही नहीं ? यह तो सत्य नहीं है। यह बात एक और उदाहरण से स्पष्ट हो जाएगी। एक बहरा व्यक्ति एक निश्चित तीक्ष्णता के नीचे की ध्वनि नहीं सुन सकता परन्तु पास ही बैठा दूसरा व्यक्ति उसे सुन लेता है। अस्तु हमारी इन्द्रियां ही किसी वस्तु के अस्तित्व का आत्यन्तिक प्रमाणन नहीं कर सकतीं।

अब पुन: परमाणु पर आयें। परमाणु किसी तत्व का वह छोटे-से-छोटा कण है जो स्वतंत्र रूप से स्थिर रह सकता है और जैसा कि ऊपर कह आए हैं, उसे आगे और नहीं विभाजित किया जा सकता। अभी जो हम ऊपर "स्वतंत्र रूप" की चर्चा कर आये हैं, जरा उस पर भी नजर डाल लें। यदि परमाणु किसी पदार्थ का वह छोटे-से-छोटा कण है जो स्वतंत्र रूप से स्थिर रह सकता है तो अब यदि हम 'स्वतंत्रता' की इस शर्त को निकाल दें तो क्या और छोटा कण है जो कि भले ही 'स्वतंत्र रूप' से स्थिर न रह सकता हो—पर क्या अस्तित्व में है ? उत्तर है—हां और इन अस्वतंत्र कणों का अध्ययन हम "परमाणु" की संरचना का अध्ययन करते समय कर सकते हैं।

अब आइए परमाणु की संरचना पर विचार करें। प्रत्येक परमाणु के अन्दर एक "नाभिक" होता है। जिसका स्वतंत्र रूप से स्थिर रहना असंभव है। इस नाभिक के अन्दर "प्रोटान", जिसका कि वैद्युत-चार्ज धनात्मक होता है, मौजूद रहते हैं, साथ ही "प्रोटान" की संख्या के बराबर ही एक और सूक्ष्म कण "न्यूट्रान" भी होते हैं, जो कि वैद्युत-चार्ज की दृष्टि से उदासीन होते हैं। चूंकि नाभिक न्यूट्रान एवं प्रोटान से मिलकर ही बना है, अतएव उस नाभिक का वैद्युत-चार्ज धनात्मक होगा। अपने इसी वैद्युत-चार्ज के कारण नाभिक स्वतंत्र रूप से स्थिर नहीं रह सकता। नाभिक ही किसी तत्व के परमाणु के भारी/हल्के होने के लिए भी जिम्मेदार हैं। क्योंकि परमाणु का भार लगभग नाभिक के भार के आस-पास ही होता है।

जब नाभिक धनावेश के कारण स्वतंत्र रूप से स्थिर नहीं रह सकता और परमाणु स्वतंत्र रूप से स्थिर रह सकता है तो इसका तात्पर्य यह हुआ कि कोई ऋणात्मक चार्ज वाला कण भी परमाणु में मौजूद है जो कि नाभिक की धनात्मकता को अपनी ऋणात्मकता से समाप्त कर देता है और परमाणु आवेशहीन होकर स्वतंत्र रूप से स्थिर रहता है। परमाणु के अंदर ही नाभिक के चारों ओर घूमने वाले ये ऋणात्मक चार्जधारी कण "इलेक्ट्रान" कहलाते हैं। यद्यपि इन्हें भारहीन (प्रोटीन एवं न्यूट्रान) की तुलना में कहा जा सकता है तथापि अस्तित्व होने के नाते इनका भी नगण्य-सा परन्तु कुछ भार तो है ही, जिसका पता वैज्ञानिक पहले ही लगा चुके हैं।

अब एक बात और आती है कि 'परमाणु' की अखंडता और इस प्रकार किसी तत्व की (विशेषकर ठोस की) दृढ़ता का कारण क्या है ? इसके लिए हमें परमाणु—संरचना पर फिर से एक दृष्टि डालनी होगी। "इलेक्ट्रान" जो कि नाभिक के चारों ओर चक्कर लगाते हैं, इनकी भी वृत्ताकार (लगभग) कई कक्षाएं (आरबिट) होती हैं। किसी में कुछ संख्या में और किसी कक्षा में कुछेक संख्या में इलेक्ट्रान चक्कर लगाते रहते हैं और केन्द्रापसारी बल, जिसकी दिशा बाहर की ओर होती है, के कारण ये इलेक्ट्रान नाभिक में धनावेश से आकर्षित होकर गिरने से बचे रहते हैं। यद्यपि नाभिक और इलेक्ट्रान के घूमने की विभिन्न कक्षाओं के बीच कुछ रिक्त स्थान भी होता है परन्तु इससे परमाणु की दृढ़ता, एकजुटता में किसी प्रकार की खामी नहीं आती।

अब हमें अपने प्रतिपाद्य मूल विषय पर आ जाना चाहिए क्योंकि अभी तक हमने ऊर्जा अथवा नाभिकीय ऊर्जा जैसी किसी बात की चर्चा तक नहीं की। विज्ञान का यह सर्वमान्य मूल सिद्धांत है कि "पदार्थ"

उपनिदेशक, कर्मचारी राज्य बीमा निगम, आश्रम मार्ग, अहमदाबाद-14

(मैटर) का कभी नाश नहीं होता तथा 'ऊर्जा' का भी नहीं। अब ऐसा भी कह सकते हैं कि इस अखिल ब्रह्मांड की ऊर्जा तथा पदार्थ बस एक निश्चित मात्रा में हैं—न इन्हें घटाया जा सकता है और न बढ़ाया। परन्तु इस महान् सार्वभौमिक सत्य के साथ एक और बात भी ध्यान देने योग्य है कि पदार्थ का ऊर्जा में तथा ऊर्जा का पदार्थ में परिवर्तन संभव है और यह ऊर्जा—पदार्थ का परस्पर परिवर्तन एक विशेष तरीके से ही होता पाया गया है। खुशी की बात तो यह है कि परिवर्तन एक नियम का पालन करता है जिसकी खोज बीसवीं सदी के महान् वैज्ञानिक आइन्सटीन ने की। नियम को वैज्ञानिक लहजे में यूं लिखते हैं :—$E=mc^2$ जहां E, m मात्रा के पदार्थ के ऊर्जा में परिवर्तन हो जाने से जनित ऊर्जा है और C प्रकाश का वेग है जो कि निर्वात (शून्य) में $3 X10^8$ मीटर प्रति सेकण्ड है। इस साधारण से समीकरण पर ध्यान देने से पता चल जाता है कि 'm' का मान यदि बहुत थोड़ा हो पर 'c' का मान इतना अधिक है, और इसका वेग अर्थात् C^2 तो और भी अधिक होगा, कि थोड़े से पदार्थ से ही बहुत अधिक ऊर्जा पैदा हो जाएगी।

आइए अब फिर नाभिक की रचना पर विचार करें। ऊपर कह आये हैं कि नाभिक पर धनात्मक आवेश होता है और उसकी मात्रा प्रोटान तथा न्यूट्रान से मिलकर बनती है। ऐसा प्रयोगों से स्पष्ट रूप से पाया गया है कि न्यूट्रान और प्रोटान की मात्रा जोड़ने पर जो मात्रा प्राप्त होती है नाभिक की मात्रा उससे कुछ कम होती है, जबकि सिद्धांततः ऐसा होना नहीं चाहिए। यह जो मात्रा की कमी है, वैज्ञानिकों ने इसे मास डिफेक्ट (Mass-Defect) अर्थात् 'मात्रा-दोष' की संज्ञा दी है। अब देखना यह है कि मात्रा की कमी अर्थात् पदार्थ (मैटर) जाता कहां है। यह कहीं न जाकर ऊर्जा के रूप में नाभिक में विद्यमान रहता है और $E=mc^2$ का सिद्धांत यहां पर पूर्णतया लागू होता पाया गया है अर्थात् जितनी पदार्थ की मात्रा कम होती है, उक्त समीकरण के अनुसार नाभिक में उतनी ही ऊर्जा रहती है। इस ऊर्जा को कार्बाइंडिंग ऊर्जा। (Binding Energy) कहते हैं। बाइंडिंग ऊर्जा इसलिए कहते हैं कि यह प्रोटान और न्यूट्रान को आपस में नाभिक की सीमा में बांधे रखने के काम आती है अन्यथा प्रोटान-प्रोटान परस्पर समान आवेश होने के कारण अपकर्षण (Repulsion) से हटने का प्रयास करने में सफल हो सकते हैं और नाभिक का अस्तित्व ही खतरे में पड़ सकता है। उपर्युक्त विवेचन से यह निष्कर्ष निकलता है कि जब भी प्रोटान, न्यूट्रान के संयोग या वियोग से किसी नयी मात्रा के 'नाभिक' का निर्माण होता है तो कुछ नाभिकीय पदार्थ ऊर्जा में बदल जाता है। जब इस ऊर्जा को हम किसी तरह नाभिक से अवमुक्त कर लेते हैं तो यह अवमुक्त ऊर्जा ही 'नाभिकीय ऊर्जा' कहलाती है।

नाभिकीय ऊर्जा यद्यपि सभी प्रकार के परमाणुओं के नाभिकीय में होती है परन्तु कुछ तत्वों के परमाणु आसानी से अपने नाभिक से अधिकाधिक ऊर्जा अवमुक्त करने के आदी होते हैं। इनमें 'यूरेनियम' एक ऐसा तत्व है जो इस काम के लिए विशेष रूप से प्रयुक्त होता है। यूरेनियम का वैज्ञानिक संकेताक्षर 'u' है। 'u' के बायें नीचे प्रोटीन की संख्या तथा दायें ऊपर प्रोटान तथा न्यूटान की संख्या का योग यदि लिखा जाय तो इसका एक रूप "92^{v235}" जैसे संकेताक्षर से दर्शाया जा सकता है।

अंततः हम नाभिकीय विखंडन को अब ठीक से समझ सकते हैं। यदि यूरेनियम तत्व के नाभिक पर बाहर से न्यूट्रान एकत्र करके बरसाया जाय तो यूरेनियम के नाभिक के अंदर खलबली मच जाएगी और नाभिक की संरचना में परिवर्तन होना यकायक प्रारम्भ हो जाएगा। यह संरचना परिवर्तन और कुछ न होकर मात्र ऊर्जा और पदार्थ का ही परिवर्तन होगा और यदि बाहर से नये बरस रहे न्यूट्रान नाभिक द्वारा ग्रहण कर लिए गए तो नाभिक की मात्रा बदल जाएगी। नयी मात्रा के नाभिक से नये परमाणु अर्थात् नये तत्व का जन्म होगा और 'मासडिफैक्ट' के सिद्धांत के अनुसार बहुत ऊर्जा पैदा होगी। संकेताक्षरों में इसे यूं दिखाएंगे :—

$92^{U235+n}—92^{U236}—56^{Ba141}+36^{Kr893+3n+Q}$ (ऊर्जा); जहां 'n' बाहर से यूरेनयिम नाभिक पर बरसाये गये एक न्यूट्रान का संकेताक्षर है तथा 56^{Ba144} और 36^{Kr89} हल्के भार वाले जनित नये बेरियम एवं क्रिप्टान नामक तत्वों के संकेताक्षर हैं और जो 3 न्यूट्रान '3n' से दर्शाए गए हैं वह पुनः नये जन्में तत्वों के नाभिक पर बरस कर और ऊर्जा पैदा करते हैं। इस प्रकार यह प्रक्रिया स्वतः चलती रहती है। ऊपर दर्शाई गई 'Q' मान की ऊर्जा सामान्यतया 200 मेगा इलेक्ट्रान वोल्ट की मापी गई है जो उक्त प्रक्रिया के चलते-चलते तेजी से बढ़ती ही चली जाती है।

यह तो हुई थोड़ी ऊर्जा और मात्र सैद्धांतिक विवेचन वाली बात। प्रयोगों के आधार पर साफ देखा गया है कि यदि केवल एक किलोग्राम मात्रा के पदार्थ का ऊर्जा में परिवर्तन कर दिया जायें तो उससे $9×10^6$ जूल्स (ऊर्जा की इकाई) ऊर्जा उत्पन्न होगी जो वास्तव में बहुत ही अधिक है तथा जिसके रचनात्मक एवं प्रलयंकारी दोनों ही प्रयोग किए जा सकते हैं। चूंकि उक्त नाभिकीय विखंडन की प्रक्रिया एक बार जारी होकर चलती ही रहती है। अतः 'नाभिकीय रिएक्टरों' द्वारा इनका नियंत्रण एवं इच्छानुसार संचालन भी किया जा सकता है। परन्तु इसे अनियंत्रित छोड़कर चलने देना ही परमाणु बम का प्रयोग करना है। 6 अगस्त, 1945 को अमेरिका ने जापान के दो शहरों—हिरोशिमा और नागासाकी पर विखंडन की इसी प्रक्रिया का इस्तेमाल करते हुए सदियों तक न भुला सकने वाला कहर ढ़ाया था। पोखरन में तो हमने मात्र इसका पूर्वाभ्यास ही किया है। आगे चलकर हमें इस अर्जित ज्ञान का कैसा प्रयोग करना पड़ेगा यह तो समय ही बतायेगा।

हमारी राष्ट्र लिपि देवनागरी

—आशीष जायसवाल

किसी भाषा के दो मूल तत्व हैं, उच्चारण और लिपि। लिपि का उद्‌भव मानव की दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के फलस्वरूप हुआ। 'लिपि' बोलने को लिखने में बदलने के आविष्कार का नाम है। सभ्यता के विकास के साथ-साथ ही दूर-दूर बसे मानव समाज के लिए अपनी बात एक दूसरे तक पहुंचाने के लिए मौखिक ध्वनियों को लिखित रूप में देने की आवश्यकता पड़ी, अत: मौखिक भाषा को लिखने का क्रम प्रारम्भ हुआ।

लिपि के माध्यम से हम भाषा के उच्चरित रूप की पहचान कर उसका अर्थ ग्रहण करते हैं और संप्रेषण का विस्तार कर सकते हैं। इसके द्वारा भाषा तथा ज्ञान का प्रचार और प्रसार होता है। अत: मानव विकास के लिए लिपि आवश्यक है।

हिन्दी भाषा की ध्वनियों का प्रतिनिधित्व करने वाले लिपि संकेतों की व्यवस्था देवनागरी लिपि कहलाती है। सभी भाषाओं की एक जैसी लिपि व्यवस्था नहीं है। हिन्दी के अतिरिक्त संस्कृत, मराठी गुजराती, नेपाली, पाली, प्राकृत आदि भाषाएं भी देवनागरी लिपि में लिखी जाती हैं। भारतीय भाषाओं की अधिकांश लिपियों में समानता पाई जाती है।

भारत के संविधान के अनुच्छेद 343 के अनुसार संघ की राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी है। देवनागरी लिपि को राजभाषा की लिपि के रूप में स्वीकार करने के कदाचित अनके कारण रहे हैं। जिनमें दो मुख्य कारण है : (1) हिन्दी सामान्यत: देवनागरी लिपि में लिखी जाती रही है। (2) देवनागरी का प्रयोग भारत के बहुत बड़े भाग में अन्य भाषाओं के लिए भी होता है।

लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक ने जिस प्रकार 'स्वराज्य' हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है—की घोषणा कर राष्ट्र को स्वतंत्रता का मंत्र दिया, उसी प्रकार अपने राष्ट्रलिपि के रूप में नागरी तथा राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी की घोषणा काशी नागरी प्रचारिणी सभा में सन् 1905 ई. में की थी। लोकमान्य तिलक की यह ऐतिहासिक घोषणा भारतीय कांग्रेस के सन् 1905 बनारस अधिवेशन के अवसर पर की गई थी। तिलक की इस विचारपूर्ण और दूरदर्शी घोषणा के महत्व को समझ कर देश के नेताओं ने संविधान सभा में सर्वसम्मति से हिन्दी को राजभाषा के स्थान पर राष्ट्रभाषा और नागरी लिपि को राष्ट्रलिपि स्वीकार किया होता तो आज हिन्दी देश की एकता और अखंडता का सक्षम माध्यम बनती। लोकमान्य तिलक की इस घोषणा के ऐतिहासिक महत्व को आज भी समझा जाय तो भाषा और लिपि संबंध विवाद स्वयंमेंव समाप्त हो जाये। देश की राष्ट्रभाषा-राष्ट्रलिपि तथा नागरी अक्षरों को राष्ट्रीय स्तर पर ग्रहण करने का लोकमान्य तिलक के निर्णय एवं निर्देश को मान कर ही हम भाषिक तथा राष्ट्रीय एकता तथा लक्ष्य की सिद्धि कर सकते हैं।

भारत में अनेक भाषाएं और बोलियां होने के साथ-साथ उनके उद्‌गम भी भिन्न-भिन्न होने के कारण उनकी ध्वनियों में भी बड़ा अन्तर है । मान्यता प्राप्त भाषाओं के दो प्रमुक्ष समुदाय हैं—एक ओर द्रविड़ समुदाय और दूसरी ओर आर्य समुदाय है, दक्षिण भारत में केवल द्रविड़ समुदाय की भाषाएं हैं। आर्य और द्रविड़ भाषाओं के ध्वनि-विन्यास में बहुत अन्तर है, परन्तु फिर भी कुछ विशेष ध्वनियों को छोड़कर वर्णमाला में बहुत कम अन्तर है, क्योंकि भारत की लगभग सभी लिपियों का उद्‌गम ब्राह्मी लिपि है। हमें भारत के लिए सर्वमान्य लिपि की बात करते समय उस पर आने वाली समस्याओं पर भी ध्यान देना होगा।

भाषा की प्रगति मानवीय प्रगति का लेखा है। इन ध्वनियों को कुछ विशेष चिह्नों द्वारा दूसरे मनुष्यों तक पहुंचाना एक और बड़ा चमत्कार है, हजारों वर्षों के प्रयास के बाद ही वह वर्तमान वर्णमाला तक पहुंचा है। भाषायी विविधताएं और एक वर्ण के उच्चारण में दूसरे भाषा-भाषियों के लिए भेद उत्पन्न हो जाता है। एक लिपि के द्वारा यदि ये राज्य भाषाएं एक सूत्र में बंध जाएं तो राष्ट्रीय भावानात्मक एकता के प्रयास में एक सुदृढ़ कड़ी जुड़ जाए। समान लिपि हो जाने के कारण एक समुदाय की भाषाओं को आपस में समझना बहुत सरल हो जायेगा तथा दूसरे समुदाय की भाषाएं भी एक-दूसरे के निकट आनी आरम्भ हो जाएंगी।

भारत की अनेक भाषाओं की लिपियों में देवनागरी लिपि का अपना महत्वपूर्ण स्थान है। देवनागरी लिपि मूलत: भारतीय लिपि है और इसका श्रीगणेश भारत की सबसे प्राचीन लिपि ब्राह्मी से हुआ है। यह लिपि

डी-1ए/115 जनकपुरी, पंखा रोड, नई दिल्ली

3176 HA/99—6A

बहुत कुछ वैज्ञानिक है और दूसरी लिपियों की भांति समुन्नत भी है, क्योंकि वर्णमाला का ध्वनि शास्त्रगत वैज्ञानिक विधान, लिपिबद्धता में त्वरा, लिखित वर्ण और उच्चारण की एकनिष्ठता तथा लिपि-विज्ञान की जितनी परिपक्वता और प्रमाणिकता नागरी लिपि में पाई जाती है, उतनी भारत तो क्या विश्व की किसी और लिपि में नहीं पाई जाती है। नागरी लिपि का महत्व स्पष्ट करते हुए राहुल सांस्कृत्यायन ने कहा है कि "देवनागरी दुनिया की सर्वाधिक वैज्ञानिक लिपि है।" अत: देवनागरी लिपि समस्त भारतीय भाषाओं के लिए अत्यन्त उपयुक्त है।

आज इस लिपि में सुधार लाने की गुँजाइश और लिखावट के रूप में परिवर्तन लाने की ओर विद्वानों का ध्यान आकर्पित हो रहा है। देवनागरी के द्वारा संसार की सभी भाषाओं का स्पष्ट अंकन तो क्या सभी भारतीय भाषाओं का शुद्धता और स्पष्टता के साथ लिखा जाना सम्भव नहीं है, क्योंकि संसार में भारत ही एक ऐसा विचित्र देश है,जहां लगभग संसार के सभी वर्गों की भाषाएं बोली जाती हैं। मान्यता प्राप्त भारतीय भाषाओं में 52 से भी अधिक ध्वनियाँ हैं, जो देवनागरी-लिपि के द्वारा अंकित नहीं की जा सकतीं। राज्य भाषाओं में कुछ ऐसी ध्वनियाँ हैं, जिनके लिए देवनागरी में कोई अक्षर नहीं है। पाँचवीं-छठी सदी ईसा पूर्व पाणिनी ने जो ध्वनि विभाजन किया था, वह वैज्ञानिक होने के साथ-साथ आश्चर्यजनक भी था। उसी परम्परा से जुड़ी हुई देवनागरी लिपि में थोड़ा सा परिवर्तन और सुधार लाकर उसे फिर से वैज्ञानिकता के निकटतम लाया जा सकता है। थोड़े से सुधार के साथ देवनागरी न सिर्फ भारत की भाषाओं के लिए अपितु विश्व भर की भाषाओं के लिए भी संपर्क लिपि बनने की क्षमता रखती है।

प्राचीन काल से ही देवनागरी लिपि समस्त भारत को जोड़ने वाली लिपि रही है। प्राचीन संस्कृत की लिपि होने के नाते देवनागरी इस देश की विशाल सांस्कृतिक परम्परा को स्वीकार करती दिखाई पड़ती है। प्राचीन काल से होकर नागरी का प्रचार केवल उत्तर भारत में ही नहीं बल्कि दक्षिण भारत में भी पर्याप्त मात्रा में हुआ था। जो इस लिपि की प्राचीनता को व्यक्त करने लायक अनेक उदाहरण एवं सबूत प्राप्त हैं। आज स्वतन्त्र भारत के संविधान में भी देवनागरी लिपि लिखित हिन्दी को राजभाषा घोपित किया गया है। देवनागरी केवल संस्कृत या हिन्दी की लिपि नहीं है, अपितु वह समस्त भारत की सांस्कृतिक परम्परा को संवहन करने की क्षमता रखने वाली लिपि है। गांधीजी ने कहा था: "संसार की सभी लिपियों में, मेरी राय में देवनागरी ही सर्वोत्तम है। वह दिलों को जोड़ने का और ज्ञानवर्धन का काम कर सकती है"।

देवनागरी यानी नागरी के अक्षरों की व्यवस्थित संयोजना इसकी वैज्ञानिकता का पुष्टिकरण करती है। अक्षरमाला की ओर देखें तो हमें मालूम पड़ेगा कि इसमें स्वराक्षर और व्यंजनाक्षर का चयन और वर्गीकरण कितने व्यवस्थित रूप से किया गया है। ह्रस्व और दीर्घ स्वर के लिए स्वतन्त्र चिह्नों का प्रयोग होता है। देवनागरी के विषय में विश्व के विद्वानों को मान्य है कि देवनागरी लिपि भाषान्तर्गत प्रयोगों में आने वाले अधिक से अधिक ध्वनि चिन्हों से समृद्ध है। लगभग प्रत्येक ध्वनि के लिए इसके अन्तर्गत अलग-अलग चिन्ह हैं और इसको सीखने पर वर्तनी संबंधी झंझट मिट जाते हैं। इसमें स्पेलिंग (वर्तनी) रटने की आवश्यकता नहीं रहती, इसके लिए शुद्ध उच्चारण ही पर्याप्त है।

नागरी में एक आदर्श लिपि की बहुत सी विशेषताएं मौजूद हैं, यथा एक ध्वनि को व्यक्त करने के लिए केवल एक ही अक्षर, अक्षर का एक ही रूप में लिखना, बोलना, छापना प्रत्येक अक्षर का समान वजन पर एकाक्षरी नाम आदि। नागरी लिपि के अक्षर सुन्दर एवं कलात्मक हैं। अपनी स्वाभाविकता तथा वैज्ञानिकता के कारण इस लिपि की सर्वत्र प्रशंसा हो रही है। महान विद्वान सर विलियम जोन्स का कथन है "देवनागरी अन्य किसी भाषा की तुलना में अधिक व्यवस्थित है। अंग्रेजी की वर्णमाला तथा वर्तनी बहुत ही अवैज्ञानिक तथा किसी रूप में हास्यास्पद भी है।" देवनागरी लिपि सर्वाधिक वैज्ञानिक शुद्ध है तथा सरल व सुन्दर भी है। यह वह लिपि है जिसमें संसार की किसी भी भाषा को रूपाँतरित किया जा सकता है।

भारत की सभी लिपियां गुण सम्पन्न एवं श्रेष्ठ हैं। सभी लिपियों में थोड़े बहुत परिवर्तन के साथ देश की अन्य भाषाओं को लिखा जा सकता है। भारत की सभी भाषाओं का महत्वपूर्ण साहित्य यदि देवनागरी में हो तो लोग उसका अध्ययन सरलतापूर्वक कर सकेंगे। विनोबा जी का कथन है :—

"हिन्दुस्तान की एकता के लिए हिन्दी भाषा जितना काम देगी उससे बहुत ज्यादा काम देवनागरी लिपि देगी। इसलिए मैं चाहता हूं कि हिन्दुस्तान की समस्त भाषाएं देवनागरी लिपि में भी लिखी जाएं। इसका मतलब दूसरी लिपियों का निषेध नहीं है, सभी भाषाएं अपनी-अपनी लिपि में भी लिखी जाएं और देवनागरी लिपि में भी।"

पूरे देश के लिए एक सामान्य लिपि (देवनागरी) की आवश्यकता पर गांधीजी का मन्तव्य सर्वविदित है। मद्रास में 1937 में आयोजित भारतीय साहित्य परिषद में भाषण करते हुए गांधीजी ने यह विचार व्यक्त किया था कि देवनागरी के सिवा अन्य किसी भी लिपि में न तो वह ध्वन्यात्मक क्षमता है और न वैसी पूर्णता। उन्होंने यह भी कहा था कि एक से अधिक लिपियों को जानने का बोझा ढ़ोना व्यर्थ है और इससे सहज ही बचा जा सकता है।

आजकल हम लकीर के फकीर बने हैं, हमारा दृष्टिकोण प्रगतिशील और वैज्ञानिक नहीं रहा। परम्परागत हम अपने लेखन में मातृ पितृ और भ्रातृ आदि शब्द प्रयुक्त करते हैं, परन्तु उच्चारण करते हैं मात्रि, पित्रि और भ्रात्रि आदि। यह स्वर आधुनिक भाषाओं से लुप्त हो चुका है, आजकल हमें इन शब्दों के कर्त्ता—एक वचन रूप का ही मूल रूप में प्रयोग करने हैं, जैसे माता, पिता, भ्राता। देवनागरी के 11 स्वरों में कुछ ह्रस्व और कुछ दीर्घ हैं। उनमें ऋ का उच्चारण अब नहीं होता। अत: ऋ स्वर को हम त्याग कर उसका अंकन हम अरि, अरि या अर के द्वारा कर सकते हैं, टंकन की मशीन में चिह्नों की भरमार को रोकने और टंकन पटल (Key-Board) को छोटा करने के लिए हम ँ या ं वा ः आदि विशिष्ट चिन्ह लगाकर पहले से स्थापित लिपि-चिन्हों के द्वारा ही नयी ध्वनियों का भेद अंकित कर सकते हैं।

3176 HA/99—6B

कुछ लोगों के अनुसार देवनागरी लिपि टंकण की दृष्टि से असुविधाजनक है तथा इसमें सुधार करने की आवश्यकता है। लेकिन टंकण-मशीनों की सुविधा के लिए लिपि में सुधार करने की आवश्यकता नहीं अपितु टंकण मशीनों के सुधार करने पर बल देने की आवश्यकता है। चीनी तथा जापानी लिपियों के लिये तीन सौ संकेतों वाली टंकण मशीनें बनाई जा चुकी हैं; तो देवनागरी लिपि में ऐसी टंकण मशीन क्यों नहीं बनायी जा सकती । देवनागरी लिपि में कुछ काट-छाँट करके तथा उसमें सुधार और परिवर्तन लाकर उसकी कथित अवैज्ञानिकता को दूर किया जा सकता है। टंकण मुद्रण के लिए हम अक्षरों की संख्या घटा सकते हैं और जो अक्षर निरर्थक हैं और प्रयोग में नहीं हैं उन्हें हटा देने से कोई हानि नहीं होगी। देवनागरी लिपि के कुछ विशिष्ट लक्षण ही वे तत्व हैं जो उसके यन्त्रोपयोगी बनने में बाधक हैं। इन्हें चाहे दोष माने चाहे गुण पर ये देवनागरी के विशिष्ट लक्षण हैं और केवल देवनागरी ही नहीं ब्राह्मी कुल की सभी लिपियों के विशिष्ट लक्षण हैं। देश के मुद्रकों और टंकणकर्ताओं आदि का भी यह अनुभव रहा है कि देवनागरी लिपि में अन्तर्निहित कुछ दोषों के कारण यन्त्रयुग में उसका प्रयोग रोमन लिपि की तुलना में कुछ कठिनाई उपस्थित करता है। इसलिए विद्वानों का ध्यान इस दिशा में जाना स्वाभाविक था कि देवनागरी लिपि में ऐसे उपयुक्त संशोधन किए जाएं कि वह यन्त्रों के प्रयोग में उतनी असुविधाजनक न रह जाए।

देवनागरी लिपि सर्व-गुण सम्पन्न एवं विकसित लिपि है, देवनागरी सारी भारतीय भाषाओं को जोड़ने लायक वैज्ञानिक भारतीय लिपि ही नहीं अपितु यह लिपि विदेशी भाषाओं के लिए भी उपयुक्त है । किन्तु दुःख की बात है कि कुछ लोग आज भी अंग्रेजों से आश्रय भाव रखकर उनकी भाषा और रोमन लिपि को अपनाने की कोशिश में लगे हुए हैं। कई व्यक्ति तो भारतीय भाषाओं के लिए भी रोमन लिपि अपनाने की बात करते हैं। ऐसे व्यक्ति अधिकतर वे हैं जिन्होंने भारतीय भाषा की लिपि सीखने का प्रयत्न नहीं किया तथा सीखने से पहले ही, यह अनुमान लगा लिया कि उन लिपियों को सीखना कठिन है। यदि वे देवनागरी लिपि को सीख लेते तो कभी यह न सोचते कि देवनागरी लिपि के स्थान पर रोमन लिपि को अपनाना अधिक सुविधाजनक हो सकता है।

नागरी वर्णमाला के समान सर्वांगपूर्ण और वैज्ञानिक किसी दूसरी वर्णमाला का अविष्कार अभी तक नहीं हुआ है। यह सर्वमान्य बात है। यदि वर्णों का उद्देश्य ध्वनि का शुद्ध उच्चारण हो तो संसार की कोई वर्णमाला नागरी का हाथ नहीं पकड़ सकती। इस वर्णमाला में प्रत्येक ध्वनि के लिए अलग वर्ण है और प्रत्येक वर्ण की एक ही ध्वनि है। जो लिखा जाता है वही पढ़ा जाता है। और जो पढ़ा जाता है वही लिखा हुआ होता है यदि पढ़ने वाला नागरी वर्णों से सुपरिचित हो। इसके विपरित रोमन लिपि में अनेक दोष हैं और इसमें अक्षरों और शब्दों के उच्चारण अशुद्ध होते हैं तथा यह भारतीय भाषाओं के अनेक शब्दों के अन्तर स्पष्ट करने में अक्षम है।

रोजमर्रा के कार्यों में अनेक ऐसे उदाहरण मिलते हैं जिनसे देवनागरी लिपि की उपयोगिता रोमन लिपि की अपेक्षा अधिक वैज्ञानिक सिद्ध होती है । रोमन लिपि में प्रतीक एक ही वर्ण से कई ध्वनियाँ निकलती हैं जैसे :—

"U"	वर्ण	But	अ
		Put	उ
		Unit	यू

रोमन लिपि में यदि कोई 'कला मंदिर' को 'काला मंदिर' पढ़े तो यह विचित्र बात नहीं मानी जाएगी । रोमन लिपि में ड़ व ड के लिए एक ही अक्षर है। रोमन लिपि में 'गुप्त' को अक्सर 'गुप्ता' या 'गुप्टा' भी पढ़ा जाता है क्योंकि इस लिपि में 'त' व 'ट' के लिए एक ही अक्षर 'T' है। रोमन लिपि में 'गेंदा' तथा गेंडा एक जैसे ही लिखे जाते हैं जबकि दोनों का अर्थ कितना भिन्न है । अंग्रेजी भाषा में कैपिटल, सामान्य, छपाई वाले, हस्तलेख के लिए अलग-अलग प्रकार के वर्णों की व्यवस्था है।

देवनागरी लिपि के स्वरों का जब व्यंजनों के साथ संयोग होता है तो स्वर मात्राओं में बदल जाते हैं, मात्राएं व्यंजनों के साथ मिलती हैं और लिपि संकेत और भी छोटे हो जाते हैं जो इसकी पूर्णता के परिचायक हैं । एक बार आचार्य विनोबा भावे ने कहा था : "मैने भारत की बहुत सी भाषाएं सीखी हैं। अंग्रेजी भी जानता हूं परन्तु केवल अंग्रेजी भाषा सीखने में जितना श्रम करना पड़ता है उतने श्रम में भारत की सब भाषाएं सीखी जा सकती हैं।"

हमें क्षेत्रीयता एवं प्रान्तीयता आदि की संकुचित भावना त्यागकर राष्ट्रहित में उदारपूर्वक देवनागरी लिपि को सम्पर्क लिपि के रूप में स्वीकार करना चाहिए। भारत के भूतपूर्व केन्द्रीय मन्त्री श्री बूटा सिंह के अनुसार—"नागरी लिपि ही भारत की भावात्मक एकता का सर्वोत्तम सूत्र है, यह समझते हुए राष्ट्रपिता महात्मा गांधी, विनोबा भावे एवं पंडित जवाहर लाल नेहरू इसके प्रचार और प्रसार में सतत् तत्पर रहे।"

आधुनिक युग में आशुलिपि के अविष्कारक आइजक पिटमैन ने देवनागरी के सम्बन्ध में कहा है कि—"संसार की कोई लिपि यदि सर्वाधिक पूर्ण है तो वह एक मात्र देवनागरी लिपि है।"

नागरी को विश्व-लिपि के रूप में विकसित करने के महान लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए सन्त विनोबाजी ने आजीवन प्रयत्न किया था। यह व्यापक दृष्टिकोण अपेक्षित है। किन्तु सबसे पहले हमें अपने देश में इस लिपि का प्रचार-प्रसार करना है। गांधी जी ने कहा था कि— "हिन्दुस्तान में सर्वमान्य हो सकने वाली अगर कोई लिपि है तो वह देवनागरी ही है। मुझे विश्वास है कि देवनागरी के द्वारा दक्षिण की भाषायें भी आसानी से सीखी जा सकती हैं। देवनागरी में सौन्दर्य या सजावट की दृष्टि से लज्जित होने जैसी कोई बात नहीं।"

पं० जवाहरलाल नेहरू ने कहा था कि—"देवनागरी को समूची भारतीय भाषाओं के लिए अतिरिक्त लिपि के रूप में स्वीकार कर लेना चाहिए। इससे एक राज्य के निवासी दूसरों की भाषायें आसानी से सीख सकेंगे क्योंकि असली कठिनाई भाषा की उतनी नहीं, जितनी लिपि की है"। आचार्य विनोबा भावे के अनुसार—'भारत की सभी भाषाएं नागरी लिपि में भी लिखी जाएं।'

"है एक लिपि विस्तार होना योग्य हिन्दुस्तान में।
अब आ गई है यह सभी विद्वजनों के ध्यान में।
है किन्तु इसके योग्य उत्तम कौन लिपि गुण आगरी।
इस प्रश्न का उत्तर यथोचित है उजागर "नागरी"।"

—स्व० श्री मैथिलीशरण गुप्त

भारतीय उद्योग के विकास में हिंदी की भूमिका

—टी. महादेव राव

किसी भी स्थान के आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विकास में जिस तरह जन सामान्य की अपनी भूमिका होती है, ठीक उसी तरह उस क्षेत्र विशेष में स्थापित उद्योग भी अहम भूमिका अदा करते हैं। अर्थ यह कि किसी भी विकासशल देश के लिए लगातार बढ़ते औद्योगीकरण का जितना महत्व होता है उतना अन्य किसी का नहीं। जहां तक विकास पथ पर किसी क्षेत्र विशेष को ले जाने की बात है दसमें जन सामान्य की शिक्षा, आर्थिक स्थिति और उनकी सोच प्रमुख तत्व हैं जो पूरी सक्रियता और सार्थकता के साथ काम करते हैं।

भारतीय परिवेश में, चूंकि भारत एक विकासशील राष्ट्र है, उद्योगों की बढ़ती संख्या अपने आप में हमारे निरंतर विकास पथ पर अग्रसर होने की बात कहती हैं। यहां यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि शिक्षा का जो प्रतिशत विकसित राष्ट्रों में हैं उनकी तुलना में हमारे प्रगतिशील राष्ट्र पीछे हैं। एक आम आदमी के लिए किसी भी बात को सुनना, पढ़ना, समझना उसकी अपनी जानकार भाषा में इतना सहज होता है कि उसकी तुलना अन्य भाषा के माध्यम से कर पाना लगभग असंभव है। जो ग्लोबलीकरण हमारे तीसरे विश्व के देशों को आंदोलित किये हुए है, वह भी अब जान गया है कि जिस क्षेत्र में हम अपने औद्योगिक विकास की हवा को ले जा रहे हैं, वह तभी सफल है, जब हम वहां के जन से, वहां की जनभाषा से जुडें-ताकि विकास का मुख्य मुद्दा इससे वंचित न रह जाए। अर्थ यह कि विकसित देश हो या विकासशील राष्ट्र जो भी भारत में अपना उद्योग लगायेगा, उसे चाहिए वह यहां के अधिकाधिक लोगों तक अपने दत्पाद की, अपने उत्पाद की महत्ता की बातें पहुंचाने में सक्षम हों वरना उसका उद्योग केवल गिने-चुने अभिजात्य वर्ग तक ही सीमित रहेगा जिसके अनुपात में उसका लाभ भी, अपेक्षित रूप में मिल सकेगा।

जब हम भारत की बात करते हैं तो स्वाभाविक रूप से यहां की संपर्क भाषा, जन भाषा हिंदी की महत्ता से, उसकी उपयोगिता से, उसमें संपर्क सूत्रों की बहुलता से इनकार नहीं किया जा सकता। जो लोग इस वक्तव्य से सहमत नहीं होते हैं, जैसा कि हमारे ही देश के कुछ राज्य हैं, वे भी दबे स्वर में इस बात से इनकार नहीं कर सकते कि भारत में उद्योग चलाना है, अपनी चीज़, अपना उत्पादन बेचना है तो यहां के सर्वाधिक के लोगों में चर्चित, प्रचलित सरल संपर्क जन भाषा का प्रयोग करना है। वरना वे चंद बड़े लोगों, ऐश्वर्य संपन्न अभिजात्य वर्ग तक सिमट कर रह जाएंगे।

हिंदी की भूमिका उद्योगों के विकास में, उस समय से अधिक बढ़ गयी जबसे रेडियो और दूरदर्शन ने अपने कार्यक्रमों में विज्ञापनों के प्रसारण की शुरुआत की। अर्थ यह है कि जनसामान्य तक पहुंच वाले रेडियो और दूरदर्शन से अच्छे माध्यम किसी भी उत्पाद के लिए हो नहीं सकते और यह बात प्रमाणित है कि दूदर्शन के विज्ञापन, जिनमें तेल, साबुन से लेकर विलासिता के वस्तुओं तक को विज्ञापित किया जाता है, अस्सी-नब्बे प्रतिशत हिंदी में होते हैं अर्थात उद्योगपति, प्रचार संस्थाएं यह बात भली भांति समझ गयी हैं कि बिना हिंदी में विज्ञापन दिये भारतीय जनमानस तक पहुंचना, अपनी बिक्री बढ़ाना लगभग असंभव है। केवल भारतीय चैनल ही नहीं विदेशी चैनल, जो अब हिंदी कार्यक्रम प्रसारित कर रहे हैं, भी अपने विज्ञापन चाहे कार्यक्रमों के हों या उत्पादों के बराबर हिंदी में प्रसारित कर रहे हैं। कहने का अर्थ यह है कि जिस जमीन पर आपको पौधा रोपना है, उसके फूल पाने हैं, फल प्राप्त करने हैं, उस ज़मीन को उर्वरा न बनाएं तो आपकी मंशा पूरी नहीं होगी-इस बात में कोई संदेह नहीं है। बीज तभी किसी ज़मीन से अंकुरित होगा,जब उसे ज़मीन के अंदर रोपा जाए वह पूरी तरह ज़मीन के संपर्क में रहे ज़मीन से जुड़े। ठीक यही बात हिंदी के साथ है। हिंदी यहां की ज़मीन है और यहां के उद्योग उसके बीज़। जब लोगों तक आप हिंदी के माध्यम से नहीं जुडेंगे तो विकास का फ़ल, उत्पादन का लाभ आपको नहीं मिल पाएगा।

भारत के उद्योग की जहां तक बात है एक उदाहरण देना पर्याप्त होगा-डिटजैंट पाउडर बनाने वाली छोटी सी कंपनी 12, 15 साल पहले अहमदाबाद में बेहद छोटे पैमाने पर केवल डिटजँट पाउडर की यूनिट के साथ शुरु हुई। कालांतर में वह कंपनी अपने प्रचार विभाग की मदद से, अपनी साख बनाते हुए आगे बढ़ती रही। उसने अपने आज तक के सारे समाचार पत्रों के विज्ञापन, दूर दर्शन के विज्ञापन यहां तक कि रेडियो पर भी अपने विज्ञापन केवल हिंदी में दिये और दे रहे हैं। यह कहना अतिश्योक्ति न होगा कि उनके सारे उत्पादन आम आदमी में इतने अधिक प्रचलित हुए और हो रहे हैं-साथ ही बिक्री लगातार बढ़ती रही है तो उसका एक कारण उनका हिंदी में-जो आम आउमी की समझ की भाषा है, भारत में-विज्ञापन देना और अपनी बात समझा सकना। आज वह कंपनी न केवल डिटजँट पाउडर बनाती है बल्कि तरह-तरह के नहाने के साबुनों और सौंदर्य साबुनों के साथ-साथ विभिन्न प्रकार के डिटर्जेंट साबुन बनाती है। यह जानकर

आपको आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि वह छोटी-सी कंपनी जो आज लगातार अपने उद्योग के विकास में लगी हैवह है "निरमा" कंपनी।

आज का युग प्रचार का, विज्ञापन का अपनी बात स्पष्ट रूप से कहने का युग है-विशेष कर आज के बढ़ते औद्योगिक प्रतिद्वंद्विता के युग में। जहां ग्राहक आम आदमी है जिसकी शिक्षा का स्तर उतना उच्च नहीं, जिसे अपनी जमीन की भाषा के अलावा दूसरी भाषा उतनी सरलता से समझ में नहीं आती-उससे उसी भाषा में वार्तालाप करें जो उसकी अपनी है तभी उद्योगों, उत्पादों, उत्पादन बिक्री आदि का विकास संभव हो पाता है।यह कहना अतिश्योक्ति न होगा कि भारत में यह काम हिंदी बखूबी कर रहा है और आज विकसित राष्ट्र भी भारत में अपना उद्योग बढ़ाना चाहते हैं उन्हें भी ज़मीन की भारत की भाषा अपनानी होगी जो कि वे अपना रहे हैं,क्योंकि वे जानते हैं भारत में अपने उद्योग का विकास हिंदी को माध्यम बनाये बिना असंभव है।

संक्षिप्त में कहा जा सकता है कि चाहे वह कोई भी अन्तर्राष्ट्रीय कंपनी हो यदि भारत में उद्योग लगाता है, अपने उद्योग का विकास चाहता है तो उसे चाहिए कि हिंदी को अपनाए और अपना उद्योग बढ़ाए वरना उसका अस्तित्व सीमित हो जाएगा। एक और उदाहरण देखें। बहु राष्ट्रीयकंपनियां, जो तकनालाजी में काफी आगे हैं और कई मशीनें बनाने वाले उद्योग भारत में लगाए हुए हैं। ट्रैक्टर, जो कि आजकल खेत जोताई के लिए आम बात सी हो गयी है-की बिक्री के संबंध में ही यदि उदाहरण लें तो पर्याप्त होगा। जिस कंपनी को गांवों में अपने ट्रैक्टर बेचने हैं, उसकी उपयोगिता, काम करने का ढ़ंग और उससे फायदे सिखाने है तो उसे गांव के लोगों की समझ में आने वाली भाषा में ही उस ट्रैक्टर का कार्य प्रदर्शन करके बताना होगा। उसी भाषा में, अपने व्यापार को बढ़ाने के उद्देश्य से ही लाभ, हानियां, उपयोगिता समझनी होगी और स्वाभाविक है यह भाषा भारत के लिए हिंदी ही होगी, अंग्रजी नहीं। इस तरह बहुराष्ट्रीय कंपनियां हो या विदेशों से आयातित भारतीय कंपनियां उन्हें उद्योग के निरंतर विकास के लिए यहां की जन बाहुल्य की भाषा हिंदी को अपनाना होगा तभी उनका व्यापार बढ़ेगा।

भारत में अपने व्यापार में लगातार बढ़ोत्तरी करने वाली एक बीमा कंपनी है—जीवन बीमा निगम। इस निगम ने लगातार अपनी पॉलिसियों के प्रकारों में वृद्धि की है। इसका कारण है जनमानस के करीब, उनके मस्तिष्क में बैठ सकने वाले हिंदी नामों से अपनी पॉलिसियों को अलंकृत करना। सरल हिंदी नामों के कारण उनका बीमा व्यापार निरंतर प्रगति पर है। नामों की एक मिसाल भी देखते चले-जीवन साथी, जीवन किशोर, बीमा किरण, सुकन्या, स्नेहा, जीवन मित्रा, जीवन सुरभि, जीवन धारा, आशा दीप आदि आदि। क्या अन्य विदेशी भाषा में यह माधुर्य, वह करीबीपन हमें मिल पायेगा। नहीं-बिलकुल नहीं।

सिक्के का दूसरा पहलू भी देखें। किसी उद्योग में उसके श्रमिक-तकनीशियनों की महत्ता को अस्वीकार नहीं किया जा सकता । तकनीशियन जो मशीनी मरम्मत से लेकर उसे चलाने, उत्पादन बढ़ाने में अपनी भूमिका सहजता के साथ निभते हैं। समय-समय पर उन्हें प्रशिक्षण देकर उनकी कार्य कुशलता को बढ़ाया जाता है- उन्हें नयी-नयी जानकारियां देकर उनके कौशल को निखारा जाता है। मशीन चलाने वाला श्रमिक प्रशिक्षण की बातें, विवरण जितना बेहतर अपनी भाषा में समझ पाता है उतना अन्य भाषा में नहीं। इसलिए स्वाभविक है कि हम सरल भाषा जन सामान्य को आसानी से समझ में आने वाली हिंदी के माध्यम से उसे प्रशिक्षण दें। वह प्रशिक्षण, विवरण आदि सहज ग्राह्य भाषा में ग्रहण करेगा तो स्वाभाविक है उसकी कार्य कुशलता बढ़ेगी-जब कार्य कुशलता बढ़ेगी तो वह अपना मशीनी कार्य उचित ढ़ंग से, समय पर कर पायेगा। फलतः उत्पादन बढ़ेगा जिसके परिणाम स्वरूप उद्योग का विकास होगा। इस तरह हिंदी को हम उद्योग के विकास के हर पहलू पर महत्वपूर्ण पाते हैं। यह एक ऐसा सत्य है जिससे आंखे फेरना समझदारी न होगी।

सार में यह कहना अतिश्योक्ति न होगा कि भारत में, भारतीयों के मध्य किसी भी उद्योग को यदि पनपना है, अपना विकास करना है तो उसे अपने व्यापार व्यवहार में हिंदी को लाना ही होगा। सारे भारत में हिंदी का प्रचार-प्रसार जितने प्रभावी ढ़ंग से दूर दर्शन के रामायण और महाभारत के साथ-साथ हिंदी फिल्मों ने किया है, उतने प्रभावी ढ़ंग से अन्य संस्थाओं ने नहीं। अर्थ यह कि बोलचाल की हिंदी सारे भारत में प्रचलित है, लोग समझ लेते हैं। अंत में कहना चाहूंगा :—

यदि करना चाहे उद्योग भारत में
अपना विकास
तो उन्हें रहना होगा हमारी ज़मीन
हमारी हिंदी के पास।

"आधुनिक भाषाओं के हार की मध्य मणि हिन्दी भारत-भारती होकर विराजती रहे"

-गुरुदेव रवीन्द्र नाथ ठाकुर

राष्ट्रीय जागरण के कवि: सुमित्रानंदन पंत

—गुणानन्द थपलियाल

हिन्दी और हिन्दी साहित्य की प्रत्येक विधा में बहुत कुछ लिखा जा चुका है, लिखा जा रहा है और भविष्य में भी लिखा जाता रहेगा। लेखन की इस परम्परा में हिन्दी साहित्य के आकाश में कुछ ऐसे दैदीप्यमान नक्षत्र स्थापित हो चुके हैं जिनकी अपनी अलग ही पहचान है यानि हम अनगिनत नक्षत्रों से भरे हुए आसमान की ओर निहार कर उँगुली से बता सकते हैं कि कहाँ-कहाँ पर बैठे हैं हमारे तुलसी, सूर, केशव, गुप्त, निराला, पंत, महादेवी और वे सभी जिन्होंने नग्र भाव से केवल काव्य रसानुभूति की प्राप्ति के निमित्त काव्य सर्जना की है। केवल काव्य रसानुभूति प्राप्ति कहने का अर्थ है कि काव्य सर्जना के क्षणों में जो आत्मा को संतोष और आनंद मिलता है, उसके निमित्त ही काव्य रचना करना अर्थात् किसी अन्य सांसारिक लोभ-लालच, मान-प्रतिष्ठा आदि के लिए नहीं।

काव्य प्रणेता को अपना प्रतिपाद्य विषय ही सर्वोपरि होता है। संत कवि तुलसी का कहना है —

कवि न होउ, नवचन प्रवीनू
सकल कला, सब विद्या हीनू
एवं
कवित विवेक एक नहिं मोरे
सत्य कहहुं लिखि कागद कोरे।

ऐसा कहने के उपरान्त भी तुलसी ने जो कुछ लिखा, जो कुछ कहा, उसका दुनियां में कोई सानी नहीं है। इस संदर्भ में यह सर्वविदित है कि मन और आत्मा से निकले हुए सत्य उद्गार काव्य प्रणेता के मूलाधार हैं। इसी बात को कविवर श्री सुमित्रानंदन पंत ने इस तरह कहा—

वियोगी होगा पहला कवि,
आह से उपजा होगा गान,
निकल कर नयनों से चुपचाप,
वही होगी कविता अनजान।

हिन्दी के आधुनिक प्रतिनिधि कवियों में पंत जी और उनकी कविता की एक अलग ही पहचान है। वे कोमल कल्पना के कवि हैं। सूर्य के प्रकाश में पेड़ के नीचे पड़ी छाया को सामान्य मनुष्य पेड़ की छाया ही कहेगा और सामान्य कवि पेड़ को उस परोपकारी मनुष्य की संज्ञा देगा जो स्वयं ताप और आघात सहकर दूसरे को शीतलता प्रदान करता है किन्तु पंत ने इस छाया को देखकर कहा है—

तुम कौन हो, तरु के नीचे सोई
तुम्हें भी त्याग गया अत्विनल सा निष्ठुर कोई?

पंत ने प्रकृति में प्रकृति-पुरुष का साक्षात अवलोकन और आरोपण किया है इसीलिये वे लिखते हैं—

एक ही तो असीम उल्लास,
विश्व में पाता विविधाभास,
तरल जलनिधि में हरित विलास
शांत अम्बर में नील विकास।

यहीं नहीं, वे अपनी काव्य सर्जना के पीछे भी उसी अदृश्य शक्ति का हाथ बताते हैं——

न जाने कौन, अये छविमान,
जान मुझको अबोध अज्ञान,
सुझाते हो तुम अनजान,
फूँक देते छिद्रों में गान।

हिन्दी कविता को नई दिशा, नया आयाम और एक सुसंस्कृत एवं परिनिष्ठित शैली और शब्दावली प्रदान करने वाले कवि श्री सुमित्रानदंन पंत का जन्म सन् 1900 ई० में 20 मई को अल्मोड़ा जिले के कौसानी ग्राम में हुआ था। माँ ने उन्हें जन्म दिया और तत्काल स्वर्गवासिनी हो गई। पिता और दादी की छत्रछाया में उनका लालन-पालन हुआ। उनके पिता पं० गंगादत्त एक अंग्रेज के चाय बागान के मुनीम और लकड़ी के ठेकेदार थे। 7 वर्ष की आयु में, जब वे चौथी कक्षा में पढ़ते थे जब उन्होंने पहली कविता लिखी। उनके बड़े भाई "मेघदूत" का सस्वर पाठ करते थे। इससे प्रकृति और कविता के प्रति उनके संस्कार पुष्ट हुए। मैथिलीशरण गुप्त और अयोध्यासिंह उपाध्याय की काव्य रचना से वे प्रभावित हुए और उनसे उन्होंने प्रेरणा प्राप्त की। उनकी कविताएँ तब "अल्मोड़ा अखबार", "सरस्वती", "वेंकटेश्वर समाचार" आदि प्रतिष्ठित पत्रों में प्रकाशित होने लगी। इससे उन्हें पर्याप्त प्रोत्साहन मिला। जब वे शिक्षाप्राप्त करने अल्मोड़ा गए तो उन्होंने अपना नाम गुसाईं दत्त से बदलकर सुमित्रानदंन रख लिया। यही नाम आगे चलकर प्रसिद्ध हुआ।

रामेश्वर पार्क एक्स्टेंशन, लोनी, जिला गाजियाबाद, उ०प्र०

पंत जी ने वाराणसी में क्वींस कॉलेज से हाई स्कूल पास किया। यहीं पर उनका सम्पर्क सरोजनी नायडू और कवीन्द्र रवीन्द्र से हुआ। अंग्रेजी की रोमांटिक कवियों की कविताएं भी उन्होंने इसी समय पढ़ीं जिनसे वे बहुत प्रभावित हुए। सन् 1918 के लगभग लिखी गई उनकी प्रारंभिक रचनाएं ''वीणा'' में प्रकाशित हुई। जुलाई 1919 में वे म्योर कॉलेज इलाहाबाद में प्रविष्ठ हुए। जहाँ उन्होंने अपनी कविताओं से मर्मज्ञों में अपनी धाक जमा दी। 1921 ई० में श्री पंत जी ने असहयोग आंदोलन के दिनों में कॉलेज छोड़ दिया, किन्तु अपनी कोमलप्रकृति के कारण वे सत्याग्रह आंदोलनों में सक्रिय रूप से भाग न ले सके। वे सन् 1931 ई० में अवध की एक रियायत कालाकांकर चले गए और वहाँ दस वर्ष रहे। यहीं पर उन्होंने स्वाध्याय और चिंतन किया। सन् 1942 में उन्होंने ''लोकायन'' नाम से एक संस्कृत पीठ की योजना बनाई और इसे कार्यान्वित करने के लिए उदयशंकर के संस्कृत केन्द्र से संपर्क स्थापित किया। इसी संदर्भ से उदयशंकर की टोली के साथ उन्होंने भारत भ्रमण किया और उनके तैयार किए जाने वाले ''कल्पना'' चित्र के लिए गीत भी लिखे। इसी दौरान उनका परिचय योगिराज अरविन्द की दार्शनिक एवं साधनात्मक प्रवृतियों से हुआ, जिससे वे बहुत प्रभावित हुए। इसे वे अपने जीवन में ''नव मानवता का स्वप्न काल'' कहते हैं। सन् 1950 से सन् 1957 तक उन्होंने आकाशवाणी के परामर्शदाता के रूप में काम किया, सन् 1961 ई० में ''कला और बूढ़ा चाँद'' पर उन्हें अकादमी पुरुस्कार मिला। सन् 1969 में भारतीय ज्ञानपीठ ने उनकी ''चिदम्बरा'' को अखिल भारतीय भाषाओं की श्रेष्ठतम काव्य पुस्तक के रूप में एक लाख रुपये की राशि से पुरुस्कृत किया, उनके ''लोकायतन'' काव्य को सोवियत सरकार ने पुरुस्कार देकर सम्मानित किया। पंत जी आजीवन कुँवारे रहे और 28 दिसम्बर 1977 को उन्होंने अपना नश्वर शरीर छोड़ दिया था किन्तु उनकी आत्मा और उनका काव्य आज भी अमर है।

पंत जी की काव्य रचनायें एक नहीं अनेक हैं, जिनमें उच्छ्वास, ग्रन्थि, वीणा पल्लव, गुँजन, युगांत, युगवाणी, स्वर्णकिरण, उत्तरा, वाणी, कला और बूढ़ा चाँद, ''चिदम्बरा'', लोकायतन आदि प्रमुख है। उन्होंने ''हार'' नाम से एक उपन्यास भी लिखा हैं। ''पाँच कहानियाँ'' नाम से एक कहानी संग्रह और ''परी'' क्रीड़ा, रानी, शिल्पी, जैसे नाटक भी लिखे हैं। उन्होंने मधुज्वाल नाम से उमर-खैयाम की रूबाईयों का रूपान्तर भी किया है।

पंत जी की प्रारंभिक कविताओं में प्रकृति के चिर सुंदर, सुकुमार एवं सचेतन रूप से अंकित किया गया है। उन्होंने प्रकृति का चित्रण एक सजीव नारी के रूप में किया है। स्वयं पंत जी ने स्वीकार किया है——''वीणा से ग्राम्या तक मेरी सभी रचनाओं में प्राकृतिक सौंदर्य का प्रेम किसी न किसी रूप में विद्यमान है।'' हिन्दी की छायावादी कविता के प्रवर्तन का श्रेय यद्यपि महाकवि जय शंकर प्रसाद को दिया जाता है किन्तु यह भी सत्य है कि पंत जी ने अपनी कोमल कल्पना शक्ति से प्रकृति की विविध रूपा सुपमा के माध्यम से खड़ी बोली हिन्दी को छायावाद के सुसंस्कृत और परिनिष्ठित रूप में प्रतिष्ठित किया है।

पंत जी की प्राय: सभी प्रारंभिक रचनाएं प्रकृतिवादी और छायावादी काव्य की विशेपताओं से परिपूर्ण है, किन्तु, ''गुजंन'' में कवि अन्तर्मुखी हो गया, साथ ही बुद्धिवादी भी। उसमें भी आत्म कल्याण और विश्व कल्याण की भावना तीव्र हो गई। उसका दृष्टिकोण मानवतावादी हो गया। पंत जी की सन् 1935 से सन् 1945 ई० तक की रचनाओं की भावभूमि यथार्थ वादी है। ''युगांत'' ''युगवाणी'' और ''ग्राम्या'' में कवि के मानसिक चिन्तन में भौतिक वादी विचार-धारा का समावेश हुआ। इस समय कवि दो प्रमुख विचारधाराओं—मार्क्सवाद और गाँधीवाद से प्रभावित दिखाई देता है वास्तव में कवि का दृष्टिकोण यथार्थ के निकट होने से प्रगतिशील हो गया। उसने तब गाँवों के जीवन, मजदूर और किसान की दयनीय दशा का सहानुभूतिपूर्ण चित्रण किया। इसी कारण कतिपय विद्वानों ने पंत जी को प्रगतिवादी कवि कहा है। कवि ने प्राचीन रूढ़ियों, रीति-रिवाजों, आचार-विचारों के प्रति असंतोष व्यक्त करते हुए समाज में नई चेतना का आव्हान किया। पंत जी ने राष्ट्रीय भावना को वाणी दी, पर अन्य कवियों की भाँति उन्होंने गाँधी जी के केवल गुण ही नहीं गाए, गाँधीवाद की वास्तविक आत्मा को सधी तूलिका से चित्रित किया।

पंत जी की राष्ट्रीय चेतना का स्फुरण सही रूप से ''युगांत'' की ''बापू के प्रति'' कविता के साथ अभिव्यक्त हुआ। अब तक सौंदर्य-प्रेमी, सत्य प्रेमी मानव-प्रेमी के रूप में वे प्रतिष्ठित हो चुके थे। ''युगांत'' के बापू का चित्रण गाँधी के सिद्धान्तों का वैज्ञानिक विश्लेषण करता है। गाँधीवाद सौम्य धरातल पर आधारित है, फिर भी वह क्रांतिकारी है। इस पक्ष पर पंत का विश्लेषण यथार्थ दृष्टि प्रस्तुत करता है। भारतीय संस्कृति के उन्नायक गाँधी जी आधुनिक युग के क्रांतिकारी नेता भी है। उनके प्रति पंत जी की ''हे चिर पुराण'' ''हे चिर नवीन'' पंक्तियां द्रष्टव्य हैं।

मनुष्य का सत्य बोध उसके जीवन को झंकृत कर देता है। उसका अहिंसामय जीवन से ही संभव है। सहयोग, सहानुभूति, उद्योग-धंधों के प्रति ममत्व, अयुक्तिक यांत्रिक गति का अवरोध, अछूतोद्धार, मानव-मूल्यों के प्रति अनुराग, मूर्त भौतिकवाद को लगाम देना, रूढ़ि के प्रति संघर्ष, सर्वात्म भाव, राजनीतिक क्षेत्र में नया सत्यबोध आदि गाँधी जी के व्यक्तित्व के तत्व थे। ''बापू के प्रति'' कविता में पंत जी ने इन्हीं सब बातों पर सशक्त प्रकाश डाला है।

गाँधी वह पारस पत्थर है, जिसे छूकर न जाने कितने हाड़ मांस के पुतले स्वर्ण शक्ति पा सकेंगे। उसने नव समाज के लिए आदर्श जीवन अपनाया, साहित्य में जागरण की शक्ति दी, राजनीति में ''विश्वनीति'' का रूप स्थिर किया, समाज को उदार बनाया, व्यक्ति को सचेत किया तथा उसे उन्मुख और प्रगति-पथ की ओर बढ़ाया। पंत जी के शब्दों में यह तथ्य इस प्रकार व्यक्त किया गया है कि——

नव भारत लाए तुम जन प्रांगण में,
जीवन के अरुणोदय से हंस मन में,
अपराजित तुम रहे, अहिंसक रण में,
सत्य शिखर के पांथ अभय, जय जय हो।

इस प्रकार कविवर पंत को जहां अपने जीवन के पूर्वार्द्ध में प्रकृति सौन्दर्य, नारी सौंदर्य, अदृश्य-चेतन सत्ता का सौंदर्य आकृष्ट करता रहा, जीवन के उतरार्द्ध में जहां अध्यात्म और अरविन्द दर्शन उनके प्रिय विषय बने, वहीं इन आयामों के बीच प्रगतिवादी विचाधाराओं से जुड़कर उन्होंने समाजवादी चिन्तन भी किया। यही समाजवादी चिंतन उन्हें राष्ट्रीय जागरण के कवि के रूप में भी प्रतिस्थापित करता है। यद्यपि यह समय उनके जीवन में एक दशक से अधिक नहीं रहा, किन्तु इस काल की लिखी उनकी कविताओं का महत्व भी किसी तरह से कम नहीं आंका जा सकता है।

समन्वित भाषा और संस्कृति के कवि वली दकनी

—डॉ. जानकी प्रसाद शर्मा

फ़ारसी की तुलना में अपनी स्थानीय भाषा को काव्य रचना की सामर्थ्य प्रदान करने वाले शायर के रूप में 'वली' का ऐतिहासिक योगदान रहा है। उनका जन्म 1648 ई. में औरंगाबाद में हुआ। उन्हें वली दकनी, वली औरंगाबादी और वली गुजराती तीन नामों से पुकारा जाता है। जो उनके अलग-अलग मूलस्थानों को सूचित करते हैं। कुछ वृत्तांतकारों के अनुसार वे गुजरात के थे और उनका जन्म अहमदाबाद में हुआ था। उनका नाम मुहम्मद वली उल्लाह था। जबकि दूसरे वृत्तांतकार उनका नाम वली मुहम्मद बताते हैं और वतन औरंगाबाद। अंतर्साक्ष्यों के आधार पर दूसरा मत ही उचित प्रतीत होता है। वली ज्ञानार्जन के उद्देश्य से अपनी युवावस्था के आरंभ में अहमदाबाद गये। उनकी देशाटन की रुचि भी इसका एक कारण था। जैसाकि उनके बाद के जीवन में सिद्ध भी हुआ और उन्होंने सूरत व दिल्ली की यात्राएं भी कीं। अहमदाबाद जाकर शा वजीहुदीन की ख़ानक़ाह के मदरसे में उस समय के प्रसिद्ध अध्यात्मवादी व्यक्तित्व शेख़ नूरूद्दीन सुहारावर्दी से शिक्षा प्राप्त की। इन शेख़ साहब से उन्होंने तसव्वुफ़ का मर्म समझा। तसव्वुफ़ की लोकवादी व्यापक दृष्टि से वे गहरे में प्रभावित हुए। बाद में चलकर यह उनकी शायरी की मुख्य भूमि बनी। यहीं शेर कहने की रुचि जाग्रत हुई। वतन औरंगाबाद लौटने के बाद उन्होंने बाकायदा शायरी की शुरुआत की। कर्बला के शहीदों की प्रशंसा में 'दह मजलिस' शीर्षक एक मसनवी लिखी। 1744 ई. में अहमदाबाद में उनका निधन हुआ। उनके मज़ार को आज 'चीनी पीर' के नाम से जाना जाता है।

वली स्वच्छंद वृत्ति के एक फक्कड़ व्यक्ति थे। प्रेम ही उनका दीन और ईमान था। इस संसार को नश्वर मानते हुए भी उनकी जीवन में गहरी आस्था थी। मिलनसार तबीयत और धार्मिक सहिष्णुता के कारण उनके परिसर में अनेक हिंदू मित्र शामिल थे। खेम दास औरंगाबादी, अमृतलाल गौहर और गोविंद लाल आदि मित्रों का ज़िक्र उनके शेरों में मिलता है। श्री रामबाबू सक्सेना ने अपने इतिहास में उन्हें 'सूफ़ी मंश फ़क़ीर मशरब शख़्स' ठीक ही कहा है। अपने इस जीवन दर्शन के कारण वली ने किसी अमीर या बादशाह की प्रशंसा में शेर नहीं कहे।

कहा जाता है कि वली का दो बार दिल्ली आना हुआ। वे पहली बार 1700 ई. में औरंगज़ेब के ज़माने में दिल्ली आये। दिल्ली के प्रसिद्ध विद्वान शाह सादुल्लाह गुलशन की ख़िदमत में हाज़िर हुए। वली ने उन्हें रेख़्ता में अपने कुछ शेर सुनाये। इस पर शाह साहब ने वली से कहा — 'ये तमाम फ़ारसी के विषय जो बेकार पड़े हैं, इन्हें रेख़्ता में ढाल दो, तुम्हारी कोई बराबरी न कर सकेगा।' वली ने शाह साहब के इस परामर्श को गंभीरता से लिया और वतन औरंगाबाद लौटकर सिर्फ़ रेख़्ता ही में ग़ज़लें कहीं। वे दूसरी बार मुहम्मदशाह के युग में दिल्ली आये। इस बार वे अपना दीवान भी साथ लाये। वली के दो बार दिल्ली आगमन की धारणा का आधार 'आबे हयात' (1910) में प्राप्त विवरण है। डॉ. सैयद नूरुल हसन हाशमी ने 'कुल्लियाते वली' की भूमिका में इस धारणा पर प्रश्न चिन्ह लगाया है। 'आबे हयात' पृष्ठ 113 पर वली के नाम से उद्धृत एक शेर है जिससे वली की दो भाषाओं का भ्रम खड़ा हो जाता है। शेर है—

दिल 'वली' का ले लिया दिल्ली ने छीन
जा कहो कोई मुहम्मद शाह सूं

दर असल यह शेर वली का न होकर शेख़ शर्फ़ुद्दीन 'मज़्मून' (1745 ई. में वर्तमान) का है, जो कि इस प्रकार है—

इस गदा का दिल लिया दिल्ली ने छीन
जा कहो कोई मुहम्मद शाह सूं

सचाई यह है कि वली केवल एक बार औरंगज़ेब के शासनकाल में दिल्ली आये। उस समय दिल्ली का सूबेदार यार ख़ां था। वली के एक शेर में इसका नामोल्लेख मिलता है—

क्यूं न होवे इश्क़ सूं आबाद सब हिंदोस्तां
हुस्न की दिल्ली का है सूबा मुहम्मद यार खां

वली 1700 ई. में ही अपना दीवान साथ लाये होंगे। इस समय उनकी आयु 52 वर्ष की थी। 1722 ई. में दीवान साथ लाने का औचित्य इसलिए भी नहीं ठहरता कि इस समय वे 74 वर्ष के थे। इसका मतलब यह हुआ कि वली को उत्तर भारत विशेषकर दिल्ली में ख्याति 74 वर्ष में जाकर मिली। जो कि ठीक नहीं जंचता।

बी-330, अशोक नगर, शाहदरा, दिल्ली-93

बहरहाल वली का दीवान जब दिल्ली पहुंचा तो उन्हें संभ्रांत वर्ग (उमराव और शफी) से लेकर जनसाधारण के बीच समान प्रतिष्ठा प्राप्त हुई। दिल्ली के साहित्यिक माहौल में फ़ारसी का बाज़ार गर्म था। ऐसे में वली की नये भाव और विषयों से युक्त रेख़ता की ग़ज़लों ने दिल्ली के शायरों को जनभाषा में शायरी की प्रेरणा दी। उनके स्वागत में अनेक शे'री नशिहतें (कवि गोष्ठियां) हुईं। वे यहां तक लोकप्रिय हो गये कि 'कव्वाल उनकी मारीफ़त (अध्यात्म) की ग़ज़लें गाने लगे।' (आबे हयात) वली की ग़ज़लों पर ग़ज़लें कही गयीं। बाद में 'मीर' जैसे शायर ने उनकी ज़मीन में कहा—

क्या हो सके जहां में तेरा हमसर आफ़ताब
तुझ हुस्न की अगन है यक अखार आफ़ताब

—वली

मुंह धोने उसके आता है अक्सर आफ़ताब
खावेगा आफ़ताब कोई खुदसर आफ़ताब

—मीर

वली की अपने अनेक समकालीनों से साहित्यिक प्रतिद्वंद्विता भी रही। इसे उर्दू आलोचना की भाषा में मार्का आराई कहा जाता है। प्रायः हर दौर में समकालीनों के बीच चोटें हुई हैं। वली और नासिर अली के बीच साहित्यिक नोक-झोंक का पता चलता है। वली ने रेख़्तागोई के जोश में नासिर अली को लेकर एक शे'र कहा था—

उछल कर जा पड़े ज्यू मिसरा-ए-वर्क़
अगर मतला लिखूं नासिर अली कूं

—वली

नासिर अली ने जवाब में यों कहा था—
बा अजाज़े-सुख़न गद उड़ चले वो
वली हर्गिज़ न पहुंचेगा अली कूं

—नासिर अली

वली 'बाबा-ए-रेख़्ता' के नाम से प्रसिद्ध है। उन्हें उर्दू में दीवान जमा करने वाला पहला शायर माना जाता है। लेकिन जब से कुतबशाही दौर के शायरों के दिवानों (संग्रहों) का पता चला है तब से वली के पहले साहिबे-दीवान शायर होने की धारणा गलत सिद्ध हो चुकी है। हां, वे पहले ऐसे दकनी शायर अवश्य हैं जिनके दीवान ने दकन से बाहर उत्तर भारत में मान्यता पायी। वली के दीवान को पहली बार गार्सादि तासी ने 1833 ई. में दो भागों में संपादित किया। यह काम उन्होंने उस समय उपलब्ध आठ पांडुलिपियों के आधार पर किया। गार्सा दि तासी ने दीवान के आरंभ में लम्बी भूमिका भी लिखी जिसमें उन्होंने वली को उर्दू का चॉसर कहा है। इसके बाद 1872 ई. में सूरत के एक शायर मिया 'समझू' ने वली का दीवान प्रकाशित किया। फिर अंजुमन तरक़्क़ी उर्दू-हिंद ने 1947 ई. में इस दीवान को छापा। 'रिसाला-ए-उर्दू पाकिस्तान' के संपादक मुहम्मद इकराम चुगताई ने वली के दीवान की 97 पाण्डुलिपियों की सूची प्रकाशित की है जिनमें से 45 पर लेखन की तिथि दर्ज है तथा 52 पर नहीं है। ज़ाकिर हुसैन कॉलेज दिल्ली के पूर्व प्राध्यापक डॉ सैयद नूरूल हसन हाशमी ने उपर्युक्त प्रकाशित तथा अप्रकाशित सामग्री के आधार पर 1982 में 'कुल्लियाते वली' का संपादन किया है। कुल्लियात में ग़ज़ल, कसीदा, मसनवी और वासोख़्त आदि विभिन्न काव्य रूपों में रचनाएं संकलित हैं। लेकिन वली की रचना का मुख्य मैदान ग़ज़ल है।

वली की भाव चेतना पर तसव्वुफ़ का गहरा प्रभाव है। इसके दो कारण हैं। एक तो शाह वजीहुद्दीन की खानक़ाह में रहकर वे तसव्वुफ़ की ओर मुड़े। दूसरे, उस दौर की उर्दू-फ़ारसी शायरी में तसव्वुफ़ ने लगभग केन्द्रीय स्थिति प्राप्त की ली थी। हिंदी कविता में भी सूफ़ी मत की सुस्पष्ट परंपरा रही थी। उदार धार्मिक दृष्टिकोण के कारण तसुव्वुफ़ को व्यापक सामाजिक स्वीकृति मिली। वली ने तसव्वुफ़ को काव्य-विषय की रूढ़ि के रूप में नहीं बल्कि एक उदार दृष्टिकोण के रूप में अपनाया। और उसे अपने जीवन दर्शन का अंग बनाया। वे 'क़तरे में दरिया और दिल के आईने में दुनिया' को देखते हैं।

वली के अनुसार जो व्यक्ति लाभकां (ब्रह्म) का तलबगार है, उसे मस्कन (घर या जगत) से मोह कैसा—

जो तालिब लाभकां का है
उसे मस्कन सूं क्या मतलब ?

तसव्वुफ़ से उन्होंने भौतिक ऐश्वर्य के दर्प के विरोध में आवाज़ उठाने का साहस प्राप्त किया। वस्तुतः संसार को नश्वर बताकर वे धन और पद के मद में चूर लोगों को उनके जीवन की निरर्थकता का अहसास कराना चाहते हैं—

पाया है जो कोई दौलते-फुक्र
मुश्ताक़ नहीं सिक दरों का
फीकी लगे है उसकूं शानो-दौलत
चाख्या है जो मज़ा कलंदरी का

वली मनुष्य के आत्म विस्तार हेतु प्रेम को अपरिहार्य मानते हैं, प्रेम ईश्वर तक पहुंचने का मार्ग तो है ही, साथ में मनुष्यत्व की गरिमा का आधार भी है। तसव्वुफ़ उन्हें दुनिया से दूर नहीं ठेलता बल्कि उसके सौंदर्य को आत्मसात करने की प्रेरणा देता है। वे किसी कल्पित स्वर्ग की बात नहीं करते। प्रेमी की गली में ही उनका स्वर्ग है—

इश्क़ की राह के मुसाफ़िर कूं
हर कदम तुझ गली में जन्नत है

'स्व' के रहते प्रेम पूर्ण काम नहीं हो सकता। जिस प्रकार कबीर प्रेम के लिए सीस उतार कर भूमि पर रखने की बात करते हैं, उसी प्रकार वली 'ज़ात का फ़ानी' करना ज़रूरी समझते हैं—

3176 HA/99 - 7

इश्क़ में लाज़िम है अव्वल ज़ात को फ़ानी करे
हो फ़नाफ़िल्लाह दायम याद यज़्दानी करे

वली चेतना के उस धरातल पर पहुंच जाते हैं जहां लौकिक और ईश्वरीय प्रेम के बीच द्वैत शेष नहीं रह जाता। उनका प्रेम एक दुनियादार व्यक्ति का प्रेम है जिसमें अध्यात्म की छाया भी झांकती नज़र आती है। प्रेम की अलग-अलग कोटियां उन्हें स्वीकार नहीं हैं—

शगल बेहतर है इश्क़ बाज़ी का
क्या हक़ीक़ी ओ क्या मजाज़ी का

वली, बिहारी के समकालीन रीति कवि थे। अतः उनके प्रेम वर्णन में नायिका के मान आदि के संदर्भ भी आते हैं। इससे ज्ञात होता है कि उस युग के हिन्दी-उर्दू कवियों के प्रेम वर्णन की पद्धति में काफ़ी समानता थी। नायिका के मान का एक दृश्य देखें—

मत ग़ुस्से के शोले सूं जलते को जलाती जा
टुक मेहर के पानी सूं तूं आग बुझाती जा

वली के शेरों में प्रेमी-प्रेमिका के लिए कृष्ण और राधा के नामों का भी प्रयोग किया गया है। इसे हिंदी के रीति कवियों का प्रभाव भी कहा जा सकता है। एक बात और है, वली के द्वारा कृष्ण और राधा के नामों के प्रयोग से यह निष्कर्ष निकालना भी अनुचित न होगा कि वे फ़ारसी के बजाय हिंदी काव्य परंपरा के अधिक निकट दिखाई देते हैं। कम-से-कम उनकी आरंभिक शायरी के विषय में यह बात पूरी तरह सच है—

अगर मोहन करम सूं मुझ तरफ़ आवे तो क्या
अदा सूं इस क़दे-नाज़ुक कूं दिखावे तो क्या

वली पर फ़ारसी शैली के प्रभाव से इनकार नहीं किया जा सकता। उनकी ग़ज़लों में ऐसे शेर भी मिल जाते हैं, जहां वे प्रेमी को स्त्री रूप में देखते हैं। ऊपर इस प्रकार के नायिका के मान संबंधी शेर को उद्धृत भी किया गया है। वैसे इस प्रकार के शेरों की संख्या कम है। धीरे-धीरे उन पर फारसी शैली का प्रभाव पड़ने लगता है और वे प्रिय को स्त्री के बजाय पुरुष रूप में देखने लगते हैं। इसके पीछे उर्दू-फ़ारसी शायरी में अम्रद परस्ती (किशोर लड़कों से प्रेम) की लम्बी परंपरा रही है। फ़ारसी की यह शैली बाद की उर्दू शायरी में एक रूढ़ि का रूप ले लेती है। आज भी उर्दू शायरी में प्रिय को पुरुष रूप में ही देखने का रिवाज है।

वली के प्रेम विषयक शेर, भावों की नवीनता और अभिव्यक्ति की सहजता के कारण मर्म को छू लेते हैं। जीवन के प्रति रागात्मक लगाव के रहते ही इस दर्जे की शायरी सामने आ सकती है। कुछ बेहतरीन शेर देखिए, जो आज भी ताज़ा लगते हैं—

किया मुझ इश्क ने जालिम कूं आब आहिस्ता-आहिस्ता
कि आतिश गुल कूं करती है गुलाब आहिस्ता-आहिस्ता
अजब कुछ लुत्फ़ रखता है शबे ख़िलवत में दिलबर सूं
खिताब आहिस्ता-आहिस्ता, जवाब आहिस्ता-आहिस्ता

ख़ूबरू ख़ूब काम करते हैं
इक निगाह में गुलाम करते हैं
खोलते हैं जब अपनी ज़ुल्फ़ों को
सुबहे-आशिक को शाम करते हैं

वली अपनी फक्कड़ मिज़ाजी के कारण व्यापक जन समुदाय के जीवन से गहरे में जुड़े हुए थे। दरबारों से दूर रहते हुए उन्होंने अभावों का जीवन जिया था। समाज की आर्थिक विषमता ने उनके संवेदनशील मन को बहुत उद्वेलित किया था। एक ओर उमराव का विलासिता पूर्ण जीवन था, दूसरी ओर अवाम का अभावग्रस्त जीवन। उनकी चिंता के केंद्र में वह मनुष्य है, जो आर्थिक दरिद्रता के कारण अपना विश्वास खोने के लिए अभिशप्त है। वली के दीवान में ऐसे कई शेर मिल जाते है जो उनकी दृष्टि के एक नये आयाम का परिचय देते हैं। यह यथार्थ का दबाव है जो शायर को तसव्वुफ़ के गूढ़ रहस्यों से विमुख कर जीवन के प्रत्यक्ष रूपों की ओर उन्मुख करता है—

मुफ़लिसी सब बहार खोती है
मर्द का ऐतबार खोती है

मुफ़लिसी जैसे सामाजिक विषयों को रीति कालीन हिन्दी-उर्दू कविता में कोई स्थान नहीं था। आगे चलकर नज़ीर अकबराबादी ने 'मुफ़लिसी' शीर्षक से बड़ी यथार्थ परक कविता लिखी। वली यह मानते थे कि अपने समय के प्रति सजग रचनाकार के लिए नये विषयों के स्रोत कभी बंद नहीं होते—

शहे मज़्मूने ताज़ा बंद नहीं
ताक़यामत खुला है बाबे सुख़न

वली मनुष्य और मनुष्य के बीच विभेद उत्पन्न करने वाले धर्म के बाह्य रूपों का विरोध करते हैं। वे हिंदू या मुसलमान के बजाय मनुष्य के रूप में पहचान बनाने पर ज़ोर देते हैं। उनके अनुसार ज़ुन्नार (जनेऊ) बंधन में डालते हैं, मुक्त नहीं करते। जिसे मुक्ति की आकांक्षा है उसे इन बंधनों का क्या अर्थ है? कहते हैं—

गर हुआ है तालिबे आज़ादगी
बंद मत हो — ओ ज़ुन्नार का

अब वली की भाषा पर एक नज़र। वली के समय तक शायरी की भाषा के लिए उर्दू शब्द का प्रचलन नहीं हुआ था। उर्दू शब्द का पहली बार प्रयोग 'मुसहफ़ी' (1750—1824) के इस शेर में हुआ है—

ख़ुदा रक्खे ज़बां हमने सुनी है मीर-ओ-मिर्ज़ा की
कहें किस मुंह से हम ऐ 'मुसहफ़ी' उर्दू हमारी है

सत्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से लेकर अठाहरवीं शताब्दी के अंत तक शायरी की भाषा के लिए रेख़्ता या हिंदवी शब्दों का व्यवहार होता था। फायज, आरज़ू (1689—1756), शम्सुद्दीन जानजानां 'मज़हर' (1698—1781), शेख शर्फ़ुद्दीन 'मज़्मून', शाह मुबारक 'आबरू', सौदा(1713—

1781), मीर दर्द (1720—1784) आदि शायरों ने अपनी भाषा को रेख़्ता और हिंदवी कहा है। दक्षिण के मुल्ला वजही और मुल्ला ग़वासी जैसे शायरों की भाषा को दकनी कहा जाता था। इससे ज्ञात है कि उत्तर रीतिकाल की शायरी की भाषा में फारसीयत से मुक्त होने का आग्रह दिखाई देता है। बावजूद इसके कि फारसी को राज्याश्रय प्राप्त था और 'बेदिल' जैसे फारसी शायरों की धाक बनी हुई थी, जन सामान्य की रूचि स्थानीय रंग की भाषा में ज़्यादा थी। लेकिन उत्तर भारत में फ़ारसी को अपदस्थ करना मुश्किल हुआ। यह काम पहले दक्षिण में संपन्न हो सका।

सत्रहवीं शताब्दी के दौरान रेख़्ता के निर्माण की प्रक्रिया उत्तर भारत में चल रही थी। लेकिन मुसलमान शासकों की दक्षिण विजय के साथ यह भाषा दक्षिण पहुंची। तब इसे काव्य भाषा का गौरव प्राप्त हुआ। गोलकुंडा और बीजापुर के कुतबशाही और अदिलशाही दरबारों में रेख़्ता और दकवी में काव्य रचना को प्रोत्साहित किया गया। बीजापुर के इब्राहीम आदिलशाह ने बहुत पहले फ़ारसी के स्थान पर दकनी उर्दू को राजभाषा बना दिया था। वह भारतीय संगीत का भी अच्छा ज्ञाता था। उसने भारतीय रागों पर 'नवरस' नामक काव्य की रचना की जिसमें दकनी उर्दू के साथ-साथ ब्रजभाषा का भी व्यवहार किया है। गोलकुंडा के कुतबशाही वंश में कई प्रसिद्ध शायर हुए। क़ुली क़ुतबशाह का तो दीवान भी मिलता है। इस प्रकार वली से पहले दक्षिण में फ़ारसी से अलग न केवल एक भाषा आकार ले चुकी थी। बल्कि उसमें काव्य रचना भी आरंभ हो चुकी थी वली के सामने एक ओर परंपरा से प्राप्त दकनी भाषा थी, दूसरी ओर उत्तर और दक्षिण के लोगों की अंतक्रियाओं से जन्म ले रही नयी भाषा। यह दूसरी भाषा रेख़्ता थी जिसे कि बाद में उर्दू कहा गया। वास्तविकता यह है कि हम ब्रजभाषा और रेख़्ता के दक्षिण भारतीय रूप को दकनी उर्दू कह सकते हैं। वली के अध्येता सैयद मुहम्मद फ़ैयाज़ की दकनी उर्दू के बारे में राय है कि जब मुसलमान फ़ौजें अपनी ज़बान को मुल्क दकन ले गयीं तो वहां के मुहावरे उस भाषा में दाखिल हो गये। इसे हम खराब किस्म की उर्दू नहीं कह सकते बल्कि इसे उर्दू की एक शाख़ तस्लीम करना चाहिए। वली जैसे शायरों की कोशिशों से इसे एक अदवी जबान की हैसियत मिली।

वली की काव्य भाषा न ठेठ दकनी है और न ही फारसीनिष्ठ रेख़्ता। उन्होंने दकनी के मूल संस्कार को सुरक्षित रखा और उसमें रेख़्ता की प्रवाहमयता और व्यंजकता का योग किया। उनके फारसी के परंपरागत प्रतीकों और शब्द बंधों (बंदिशों) से भी परहेज नहीं था लेकिन अपनी देसी ज़बान की रंगत देकर ही इन्हें अपनाया। यह मात्र सतही तौर पर शब्द प्रयोग का मामला नहीं है। इसके पीछे जातीय चेतना कारण रूप में विद्यमान है। वली जिस समाज के बीच रह रहे थे उसकी सांस्कृतिक पहचान दकनी हिंदी या उर्दू में सुरक्षित थी, न कि फ़ारसी में। एक रचनाकार के रूप में उनकी यह विवशता थी कि वे अपने समाज के रीति-रिवाज और जीवन शैली का निरुपण उसी की भाषा में करते। इसलिए वली का दीवान जब दिल्ली आया तो यहां के शायर इसलिए अभिभूत नहीं हुए कि वली ने दिल्ली की ज़बान में आला दर्जे की शायरी की थी। बल्कि वली की ग़ज़लें पढ़कर और सुनकर दिल्ली के शायरों ने अनुभव किया कि अपनी भाषा में भी उत्कृष्ट काव्य रचना संभव है और समाज में इसे इतनी अधिक प्रतिष्ठा मिल सकती है। 'मीर' ने वली की इसी भाषा क्षमता को लेकर प्रशंसा की थी और उन्हें अपना आदर्श स्वीकार किया था—

ख़ूगर नवीं हम यूं कुछ रेख़्ता गोई के
माशूक़ जो अपना था बाशिंदा दकन का था

मुसहफ़ी ने भी यह माना है कि रेख़्ता में काव्य रचना का प्रवर्तन वली ने ही किया है—

रेख़्ता गोई की बुनियाद वली ने डाली
बाद अज़ां ख़ल्क को मिर्ज़ा से है और मीर से फ़ैज़

लोक भाषा की पूर्ववर्ती शायरी तो वली के संस्कारों में रची बसी थी। साथ में उन्होंने फ़ारसी शायरी का भी गहराई से मनन किया। वे ख़ुसरो, सादी और नज़ीरी से काफ़ी प्रभावित हुए। वली के कई शे'र इन शायरों के भावानुवाद लगते हैं पर भाषा अपनी ज़मीन की दी है। जैसे—

तू चुनां गिरफ्तां ई जां वा मियान जान शीदीं
वा तवां तिरा व जा राज़ हम इम्तियाज़ कर्दन

—नज़ीरी

ऐसा बसा है आकर तेरा ख़्याल ज्यू में
मुश्किल है ज्यू सूं तुजको अब इम्तियाज़ करनां

—वली

वली से पहले दकन और उत्तर भारत में शायरी की भाषा का विकास अलग-अलग तरह से हो रहा था। एक क्षेत्र के लोगों को दूसरे क्षेत्र की भाषा सहज ही बोधगम्य नहीं थी। वली ने दोनों के जनजीवन से निकटता स्थापित की और उनकी सांस्कृतिक वृत्तियों के सामान्य बिन्दुओं की तलाश भी। जिसके परिणामस्वरूप वे एक ऐसी भाषा को रिवाज देने में सफल हुए जो फ़ारसी से इतर शायरी की मानक भाषा हो सकती थी। वली से पहले ऐसी भाषा नहीं मिलती जिसे उत्तर और दक्षिण के दोनों लोग बोले और समझे।

जिस रूप में मुल्लावजही, गवासी और नुसरती दकनी के शायर हैं, उस रूप में वली नहीं हैं। इन तीनों शायरों के यहां सेठ दकनी और गुजराती के प्रयोगों का बाहुल्य है। लेकिन वली अपनी दकनी पहचान के साथ सरल उर्दू के शायर हैं। अलबत्ता उनकी आरंभिक ग़ज़लों की भाषा इन शायरों के नज़दीक जा पड़ती है। बाद की ग़ज़लों में वे एक ऐसी भाषा के सृजन के लिए प्रत्यनशील रहते हैं जो भारत की अदबी ज़बान बन सके। इस प्रयत्न में उन्होंने फ़ारसी तत्सम और दकनी देशज शब्दों को इस तरह फैंटा है कि उन्हें छांटकर अलग करना दुष्कर है। मुहम्मद हुसैन आज़ाद ने ठीक ही कहा है कि 'वली ने एक ज़बान को दूसरी ज़बान से ऐसा ना मालूम जोड़ लगाया है कि ज़माने ने कई करवटें बदली हैं मगर पैबंद में जुंबिश नहीं आती।'

इसी प्रसंग में आगे चलकर 'आज़ाद' ने वली की भाषा पर जो टिप्पणी की है, वह गौर तलब है। कहते हैं, 'उस वक़्त के उमराव व शुर्फ़ा की ज़बान का पता दीवान-ए-वली के सिवा किसी से नहीं चलता।' अर्थात् आज़ाद के अनुसार वली ने दिल्ली के शिक्षित और संभ्रांत वर्ग की जबान में शायरी की। इसका अभिप्राय यह हुआ कि उनकी शायरी से अवाम की ज़बान के मुहावरे का पता नहीं चलता। वस्तुत: आज़ाद का यह कथन वली की भाषा के एक स्तर को लेकर उचित प्रतीत होता है, उनकी समग्र भाषा को लेकर नहीं। क्योंकि वली, उत्तर भारत में उनके समकालीन

'फ़ायज़' (1738 ई. मृत्यु) तथा उनके परवर्ती शायर 'सौदा' और 'मीर' की भाषा का एक स्तर उमराव व शुफ़ी के जीवन से संबंध रखता है और दूसरा स्तर अवाम के जीवन से। मसलन,

फ़ीकी लगे है उसकूं शानो-दौलत
चाख्या है जो मज़ा कलंदरी का
कहता है वली पुकार या बात
बंदा हूं पिया की दिलबरी का

यह उमराव और शुफ़ा की ज़बान नहीं हो सकती। यह खांटी देसी मुहावरा है जिसका संबंध जनभाषा से है।

दूसरे, संभ्रांत वर्ग की ज़बान में 'नज़दीक' के लिए 'नज़ीक' और 'सूरज' के लिए 'सुरज' शब्द शामिल नहीं हो सकते, आम बोलचाल में ही यह उच्चारण प्रचलित रहा होगा—

जग में जो ऐतबार न पाया तेरे नजीक
होकर खजल सुरज ने लिया है गगन में जा

इसी प्रकार फ़ारसीनिष्ठ उर्दू के क़ायल उमराव और शुफ़ा 'यह' के लिए 'यों' और 'से' के लिए 'सूं' शब्दों का व्यवहार न करते होंगे। लेकिन वली की पूंजी यही शब्द हैं। इस वर्ग के लिए 'मुख रूपी किताब' प्रयोग भी अटपटा लगता होगा लेकिन वली कहते हैं—

है मदरसे में चर्ख के खुर्शीद फ़ैज़ बख़्श
जब सूं लिया है दर्स तेरी मुख किताब का

मुल्ला वजदी की 'कुतब मुश्तरी' (1608 ई.) और 'सबरस' (1635 ई.) की भाषा के विकास के अगले सोपान को वली की शायरी में देखा जा सकता है। वजही आदि अन्य कवियों से भिन्न पहचान रखते हुए भी वली की भाषा अठाहरवीं-उन्नसीवीं शताब्दी की दिल्ली और लखनऊ की काव्य-भाषा से कोई मेल नहीं रखती। अलबत्ता धीरे-धीरे उनकी भाषा में फारसी के समास और बंदिशों का चलन बढ़ने लगता है। वली के समय की दकनी भाषा की विशिष्ट प्रकृति के संबंध में डॉ. राम विलास शर्मा की मान्यता है कि, "बाद की दकनी में फ़ारसी शब्द ज़्यादा आये हैं लेकिन वे ऐसे हैं जो उत्तर भारत की बोलियों में भी घुल-मिल गये थे। ख़ास बात यह है कि दकनी में उन शब्दों का बहिष्कार नहीं किया गया जो बाद की उर्दू में मत्रूक समझे गये।" (भाषा और समाज, पृष्ठ 292) डॉ. शर्मा उर्दू के उत्तरोत्तर क्लिष्ट होते जाने के पीछे मत्रूकात के सिद्धांतों को ही जिम्मेदार मानते हैं। जैसे-जैसे कविता के नियमों पर सामंती दबाव बढ़ता गया, वैसे-वैसे यह सिद्धांत ज़ोर पकड़ता गया।

वली की भाषा उर्दू के विकास के उस चरण को सूचित करती है जब हिंदी या ब्रजभाषा के प्रयोगों को मत्रूक (निषिद्ध या बहिष्कृत) नहीं माना जाता था बल्कि जन सामान्य के बीच दूरी मिली जुली भाषा को सराहा जाता था। वली के साथ फ़ायज़, सौदा, मीर और नज़ीर में हिंदी के प्रयोगों के प्रति यह खुलापन बदस्तूर जारी रहा। नज़ीर की तो आगरा की बोली के कवि के रूप में पहचान ही बन गयी। वली अपनी भाषा-सृष्टि में अरबी-फ़ारसी शब्दावली से आक्रांत न होने वाले पहले शायर हैं। शायद उनकी कोई ग़ज़ल हिन्दी शब्दों से खाली नहीं है। एक ग़ज़ल के दो शेर देखिए—

पिरत की जो कंठा पहले उसे घर-बार करना क्या
हुई जोगन जो कुई पी की उसे संसार करना क्या
जो पीवे नीर नैना का उसे क्या काम पानी सूं
जो भोजन दुख का करते हैं उसे आधार करना क्या

वली के यहां ऐसे तद्भव प्रयोग भी मिल जाते है जिनका संस्कृत तत्सम से संबंध बिठाना कठिन हो जाता है। डॉ० मोहन अवस्थी ने 'हिन्दी रीति कविता और समकालीन उर्दूकाव्य' पुसतक के पृष्ठ 175 पर वली का एक शेर उद्धृत किया है—

उस बेवफ़ा की तर्ज सो. शिकवा नहीं 'वली'
है जंग रात देस मुझे मुझ नसीब सों

डॉ. अवस्थी के अनुसार संस्कृत 'दिवस' से हिंदी में 'द्यौस' आया और उर्दू में 'देस'। इस प्रकार 'रात-देस' का अर्थ रात-दिन होना चाहिए। वली की चेतना पर किसी अंश में संस्कृत काव्य परम्परा के प्रभाव से भी इनकार नहीं किया जा सकता। उनका संस्कृत से सीधा संपर्क भले न रहा हो लेकिन उनसे पहले दक्षिण में भारतीय पृष्ठभूमि पर आधारित अनेक काव्य-कृतियों की रचना हो चुकी थी। ग़व्वासी की 'हितोपदेश' के फ़ारसी अनुवाद पर आधारित 'तूतीनामा' (1631 ई.), और इब्राहीम आदिलशाह की 'नवरस' जैसी मसनवियां विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। मसनवियों के अलावा उस दौर की ग़जलों में भी रामायण और महाभारत के पात्रों का उल्लेख मिलता है। दकनी शायर 'लुत्फी' का एक शेर है—

'लुत्फी' तेरे पलन की पाकी कहां है इसमें
ज्यूं पांच पांडवों के कहते सो दुरपती हूं मैं

वली के कुल्लियात में ऐसे अनेक शेर मिल जाते हैं, जहां वे पौराणिक पात्रों से संबंधित अप्रस्तुत विधान के माध्यम से अपनी बात कहते है, जैसे—

जोधा जगत के क्यूं न डरें तुझ सूं ए सनम
तर्कश में तुझ नयन के हैं अर्जुन के बान आज

प्रसंगवश वली के पूर्ववर्ती दकनी कवि सुल्तान अब्दुल्लाह क़ुतब शाह का यह शेर भी देखिए—

हरेक तेरा पलक दें राम का बान
हरेक सूका है तेरा ज्यूं कटार

यहां 'सूका' का अर्थ 'मौह' है। 'अर्जुन का बान' और 'राम के बान' जैसे प्रयोगों से यह अनुमान करना ग़लत न होगा कि वली और अन्य दकनी कवि रामायण और महाभारत के लोक-व्याप्त आख्यानों से भली-भांति परिचित थे। इसके साथ ही साथ उनकी भाषा दरबार के बजाय लोक के अधिक समीप थी। अत: यह बात पूरे निश्चय के साथ कही जा सकती है कि वली की भाषा की जड़े मात्र फ़ारसी काव्य-परम्परा में नहीं हैं।

इस संक्षिप्त चर्चा से यह बात भलीभांति स्पष्ट हो जाती है कि वली की शायरी सत्रहवीं-अठारहवीं शताब्दी के दौरान की समन्वित संस्कृति की एक झांकी प्रस्तुत करती है। उनकी शायरी से एक साथ हिंदी और उर्दू भाषा एवं काव्य के विकास को समझने में मदद ली जा सकती है। जहां तक उर्दू शायरी के इतिहास की बात है, उन्हें इसमें एक ज़बान साज़ की हैसियत प्राप्त है। आज भी वे हमें अपनी जनपदीय भाषाओं की शक्ति को पहचानने की प्रेरणा देते हैं।

विश्व-हिन्दी दर्शन

विदेशी हिंदी पत्रकारिता का कीर्ति स्तम्भ—शांति दूत

—डॉ. विमलेश कान्ति वर्मा

विदेशी हिंदी पत्रकारिता में जो यश व सम्मान फीजी के साप्ताहिक समाचार पत्र ''शंतिदूत'' ने अर्जित किया है वह इस बात का ज्वलंत प्रमाण है कि यदि विश्व के भारतीयों को संगठित करने का कोई सशक्त व सार्थक माध्यम है तो वह हिंदी भाषा ही है। ''शंतिदूत'' दक्षिण प्रशांत का एकमात्र हिंदी साप्ताहिक समाचार पत्र है जो फीजी की राजधानी सूवा में छपता है किन्तु फीजी के अतिरिक्त वह आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड तथा प्रशांत महासागर के अनेक द्वीपों में बसे हुए भारतीयों द्वारा नियमित रूप से पढ़ा जाता है और प्रति सप्ताह इसकी प्रतीक्षा बड़ी उत्सुकता से की जाती है। यह समाचार साप्ताहिक पिछले तिरसठ वर्षों से निरन्तर निकल रहा है तथा राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय समाचारों के साथ ही भारत के समाचार भी पाठकों तक पहुंचाता है। कितने ही संकट आए, कितनी ही उथल-पुथल हुई, देश को राजनीतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक संकट का सामना करना पड़ा किन्तु आज भी शांतिदूत अलख ज्योति जगाए अपनी लक्ष्यपूर्ति में लगा हुआ है। निश्चय ही शांतिदूत विदेशी हिन्दी पत्रकारिता का कीर्ति स्तम्भ है।

फीजी एक बहुजातीय देश है जहां भारतीयों के अतिरिक्त वहां के मूल निवासी काईबीती (फिजियन) रहते हैं। आस्ट्रेलिया तथा न्यूजीलैंड के लोग भी पर्याप्त संख्या में फीजी में हैं। सबकी भाषा अलग-अलग है। फीजी के मूल निवासी काईबीती भाषा बोलते हैं। आस्ट्रेलिया तथा न्यूजीलैंड के निवासी अंग्रेजी का व्यवहार करते हैं। फीजी में बसे हुए भारतीय भी विभिन्न भाषा-भाषी प्रांतों के हैं। उत्तर प्रदेश तथा बिहार के अतिरिक्त गुजरात, पंजाब तथा दक्षिण भारत के तमिल तेलुगु भाषा-भाषी भी हैं। धर्म की दृष्टि से भी फीजी में हिंदू, मुसलमान, सिख, ईसाई सभी हैं किन्तु हिंदी भाषा, जाति तथा धर्म के बंधन से ऊपर उठकर सभी भारतीयों के लिए ही नहीं फीजी के समस्त निवासियों के बीच संपर्क भाषा बनी हुई है। हिंदी भारतीयों के लिए तो उनकी अस्मिता की प्रतीक बनी हुई है। हिंदी को इसी व्यापकता को देखकर फीजी सरकार ने संविधान में हिंदी भाषा को संसदीय भाषा की मान्यता भी दी हुई है। आज सारे फीजी देश में हिंदी समझी व बोली जाती है। भारतीयों के मध्य पारिवारिक बोलचाल की भाषा तो हिंदी है ही; सामाजिक तथा सांस्कृतिक अवसरों पर भी एक भारतीय हिंदी में बोलकर गौरव का अनुभव करता है। यही कारण है कि फीजी में हिंदी को एक जातीय सम्मान भी मिला हुआ है।

जब भारत के विभिन्न भागों से बहला फुसलाकर विविध भाषा भाषी भारतीयों को जहाज से फीजी ले जाया जा रहा था उस समय भी सब जहाजी भाइयों की संपर्क भाषा हिंदी थी। जब वे फीजी में बस गए उस समय भी तुलसीदास की रामायण जिसे वे आज रामायण महारानी कहते हैं, सूर, कबीर, नानक, मीरा के भजन ही उनका सहारा थे और आज जब सब भारतीय ऊंचे-ऊंचे पदों पर प्रतिष्ठित हैं राजनीति, शिक्षा, व्यापार में वे अग्रणी हैं उस समय भी हिंदी ही उनको बांधने वाली है। स्वाभाविक ही है कि ऐसी सामर्थ्यवान हिंदी की सुरक्षा तथा विकास के लिए वे प्रयत्नशील रहते।

आज से पच्चासी साल पहले डॉ. मणिलाल ने जब भारतीयों को संगठित करने के लिए ''द सेटलर'' पत्र का प्रकाशन 1913 ई. में प्रारम्भ किया तो उन्होंने भी शीघ्र ही यह अनुभव कर लिया कि देश के कोने-कोने में बसे हुए भारतीयों तक संदेश पहुंचाने के लिए अंग्रेजी उतनी उपयोगी नहीं हो सकती जितनी कि उनकी अपनी भाषा हिंदी। इसलिए उन्होंने ''द सेटलर'' के अंग्रेजी संस्करण के साथ ही हिंदी में भी उसको साइक्लोस्टाइल रूप में निकालना प्रारम्भ कर दिया। पत्र अब हिंदी में भी देश-विदेश तथा भारत की सूचनाएं उन्हें देता था; स्वाभाविक ही था कि अब वह पत्र देश के कोने कोने में ,खेतों में, मिलों में काम करने वाले भारतीयों के पास पहुंचने लगा। पत्र की लोकप्रियता बढ़ने लगी। अब वह समस्त भारतीयों को समाचार के माध्यम से संगठित करने लगा और वह एकमात्र ऐसा पत्र था जो उनकी ही भाषा में उन्हें फीजी तथा भारत दोनों ही देशों की सूचनाएं देता था। पत्र के इस हिंदी संस्करण के संपादन का काम सौंपा गया पं. शिव राम शर्मा को। ''द सेटलर'' पत्र का यह हिंदी संस्करण फीजी में हिंदी पत्रकारिता का पहला चरण था।

हिंदी के प्रति बढ़ती हुई रुचि तथा हिंदी में समाचार जानने और पढ़ने की लालसा ने कई भारतीयों को हिंदी पत्र निकालने के लिए प्रेरित किया। शीघ्र ही अन्य पत्र भी हिंदी भाषा में निकले। दूसरे दशक में सूर्यमुनि विदेसी ने फीजी समाचार भी निकालना प्रारम्भ कर दिया जो लंबे समय तक निकलता भी रहा। अन्य हिंदी पत्र भी निकले किंतु धनाभाव के कारण वे शीघ्र ही काल क्वलित हो जाते।

'स्नेहकांचन', 73, वैशाली, दिल्ली, 34

3176 HA/99—8

फीजी टाइम्स एण्ड हेरल्ड नामक ब्रिटिश प्रकाशन संस्था हिंदी के इस देशव्यापी स्वरूप की तह में जाने की बात सोचने लगी और उसने यह निर्णय लिया कि देश के कोने-कोने में बसे भारतीयों तक यदि समाचार पहुंचाना है तो हिंदी में पत्र निकालना उपयोगी होगा और संस्था ने 11 मई 1935 के "शांतिदूत" समाचार पत्र का पहला अंक प्रकाशित किया । साप्ताहिक के संपादन का दायित्व पं. गुरुदयाल शर्मा को सौंपा गया।

पं. गुरुदयाल शर्मा "शांतिदूत" में संपादक का दायित्व संभालने से पहले "वृद्धि" "वृद्धिवाणी" तथा "पैसिफिक प्रेस" नामक हिंदी पत्रों का संपादन कर चुके थे। तीनों ही पत्र यद्यपि अधिक समय तक नहीं चल पाए थे किन्तु संपादन का उन्हें अच्छा अनुभव था। पत्रिका को चलाने तथा उसे लोकप्रिय बनाने के लिए संपादक को किन कठिनाइयों के बीच से गुजरना पड़ता है इसका भी उन्हें अच्छा ज्ञान था। जिस आर्थिक संकट के कारण इन पत्रों को बंद होना पड़ा था वह संकट बड़ी तथा धनी प्रकाशन संस्था होने के नाते शांतिदूत के संपादक के रूप में अब उनके सामने नहीं था।

शांतिदूत का संपादन भार ग्रहण करने के पूर्व पं. गुरुदयाल शर्मा 'सनातन धर्म' मासिक पत्र से भी जुड़े हुए थे। स्वाभाविक ही था कि इससे शर्मा जी को सनातन धर्म महासभा का पूर्ण सहयोग भी प्राप्त था। यह विचारधारा उनके पत्र में झलकती भी है। राजनीतिक प्रश्नों पर इसकी नीति फीजी टाइम्स एण्ड हेरल्ड की ही नीति थी। भारत की राजनीतिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक गतिविधियों में तो इसकी रुचि थी ही साथ ही विश्व की राजनीतिक तथा सामाजिक गतिविधियों की जानकारी भी यह पाठकों तक पहुँचाना चाहता था।

पं. गुरुदयाल शर्मा को अंग्रेजी, हिंदी तथा काईबीती (फिजियन) भाषाओं का अच्छा ज्ञान था। संस्कृत भाषा का भी थोड़ा ज्ञान था। शर्मा जी को संपादक रहने के कारण लेखन का भी अच्छा अभ्यास था तथा पढ़े लिखे लोगों और प्रतिष्ठित जनवर्ग से भी उनका संपर्क हो गया था। संपादन की जटिलताओं तथा संपादक की कठिनाइयों से भी वे भली-भाँति परिचित थे । यही कारण था कि उन्होंने 'शांतिदूत' के संपादन-दायित्व को एक चुनौती के रूप में स्वीकार किया तथा उन्होंने इसे हिंदी पत्रकारिता को नए आयाम देने का एक स्वर्णिम अवसर माना।

शांतिदूत के प्रवेशांक में पं. गुरुदयाल शर्मा ने 'हमारा अभिप्राय' शीर्षक से एक प्रभाव पूर्ण संपादकीय लिखा जिसमें उन्होंने शांतिदूत के उद्देश्य एवं कार्यप्रणाली का संक्षिप्त परिचय दिया। पत्र का प्रथम संपादकीय अविकल रूप में उद्धृत किया जा रहा है—

"शांतिदूत का यह प्रथम अंक हम आपकी सेवा में उपस्थित करते हुए हर्ष मना रहे हैं। हमें पूर्ण विश्वास है कि इस पत्र के द्वारा फीजी प्रवासी भारतीयों को समस्त संसार की वह खबर मिलती रहेगी जिससे हिंदी भाषा भाषी जनता अनभिज्ञ रहती थी । इस पत्र के स्वामी भारत, इंगलैंड, चीन, जर्मनी, जापान इत्यादि भूमंडल का समाचार बेतार के तार द्वारा अर्थात् केबल के जरिये से मंगा रहे हैं जैसा कि आज तक हिंदी पत्रकार नहीं कर सका है। अतएव हम अपने पाठक, ग्राहक एवं अनुग्राहकों को यह विश्वास दिला सकते हैं कि आप इस पत्र से संतुष्ट रहेंगे ।"

"संसार में समाचार पत्र सभ्य समाज की दृष्टि में सबसे उत्तम साधन लोक भलाई का माना जाता है, इसका मात्र यही कारण है कि पत्रों के जरिये सम्पादकगण आश्चर्यजनक सफलता थोड़े ही दिनों में प्राप्त कर लेते हैं जिसकी प्राप्ति अन्य उपायों द्वारा सदियों में भी असम्भव-सी प्रतीत होती है जिसको स्मरण रखना प्रत्येक पत्रकार का मुख्य कर्तव्य है, अर्थात् असत्य एवं विवाद ग्रस्त विषयों से दूर रहकर शांति और सद्भाव का प्रचार जन समूह में कराना ही पत्रकारों का उद्देश्य होना चाहिए ।"

"शांतिदूत पार्टी बंदियों से दूर रहेगा। इस द्वीप की भलाई व लोकप्रियता का पाठ लोगों को पढ़ाएगा और सभी बंधुओं की सेवा के लिए इसके कालम बिना किसी भेदभाव के खुले रहेंगे । इसके अतिरिक्त इसका मुख्य उद्देश्य समाज सुधार और सर्वजन सेवा है। हर शनिवार को यह निकला करेगा ।"

"हमारा दृढ़ विश्वास है कि प्रवासी बंधु इस पत्र को अपनाकर हमारे उत्साह को अवश्य बढ़ाएंगे और शांतिदूत को अवसर प्रदान करेंगे कि यह जनता की सेवा का यश का भागी बन सके ।"[1]

जैसा कि प्रवेशांक के सम्पादकीय से स्पष्ट है कि शांतिदूत के निम्नलिखित उद्देश्य थे—

(क) पत्र के द्वारा फीजी के प्रवासी भारतीयों को संसार भर के समाचार देना जिससे हिंदी भाषी जनता अब तक अनभिज्ञ रहती थी।

(ख) असत्य एवं विवादग्रस्त विषयों से दूर रहकर शांति और सद्भाव का प्रचार जन समूह में करना ।

(ग) पार्टी बंदियों से दूर रहना तथा फीजी द्वीप की भलाई एवं लोकप्रियता का पाठ जनता को पढ़ाना तथा सभी की सेवा बिना भेद भाव के करना। इसका उद्देश्य समाज सुधार और सर्वजन सेवा है ।

संपादक ने अपने संपादकीय में "शांतिदूत" पत्र की अन्य समाचार पत्रों से विशिष्टता बताते हुए यह भी रेखांकित किया है कि शांतिदूत भूमंडल का समाचार बेतार के तार द्वारा मंगाता है जैसा कि आज तक कोई भी हिंदी पत्र नहीं कर सका है। इस प्रकार शांतिदूत नितांत आधुनिक तथा वैज्ञानिक सुविधाओं से संपन्न समाचार पत्र है।

शांतिदूत का प्रारम्भ कठिन परिस्थितियों में हुआ था। शांतिदूत की स्वर्णजयंती के अवसर पर पं. गुरुदयाल शर्मा बीते दिनों की याद करते हुए स्वयं कहते हैं—

"यह समय बहुत समस्याओं से भरा हुआ था। बेकारी, असंतोष, आर्थिक कठिनाई, मजदूरों और किसानों में बेचैनी, उन्हें वेतन तथा दाम बहुत ही कम मिल रहा था, इसके निदान के लिए आंदोलन चल रहे थे; विश्व पर महायुद्ध काले के बादल घुमड़ रहे थे। इन गमों को एक शिशु के रूप में संभालना और आगे बढ़ना था। शांतिदूत अपना प्रथम अंक लेकर पाठकों के कर कमलों में पहुंचा ।"[2]

1. शंतिदूत प्रवेशांक वर्ष 1, अंक 1, 11 मई 1935 पृ. 1 संपादकीय हमारा अभिप्राय। 2. शर्मा, गुरुदयाल शर्मा: शंतिदूत का पचासवें वर्ष में प्रवेश, शांतिदूत 24 मई, 1984 पृ. 3।

शांतिदूत के इस प्रथम अंक की 300 प्रतियां छपीं। पत्र छोटे आकार में, हिंदी और अंग्रेजी भाषा में तथा आठ पृष्ठों का था। मूल्य था एक पेनी। ये प्रतियां थोड़ी ही देर में बिक गईं पर यह बिक्री सूवा तथा सूवा के आस पास के नावुआ तथा नौसोरी क्षेत्र तक ही सीमित रही। पत्र निकल तो गया था, तुरन्त बिक भी गया किंतु लोग उत्साहित कम करते, वे प्राय: अपनी आशंका ही व्यक्त करते और कहते कि पत्र कुछ ही दिनों तक चल पाएगा, पत्र निकालना आसान काम नहीं।

पत्र का प्रारम्भ करना संभवत: उतना कठिन नहीं था जितना कि उसे जीवित रखना। पं. गुरुदयाल शर्मा को पत्र के भविष्य की चिंता सताए रहती। पत्र के ग्राहक कैसे बढ़ाए जाएं, नई-नई रोचक सामग्री कैसे जुटाई जाए, पत्र हर सप्ताह समय पर निकल जाए, पत्र का कलेवर कैसे आकर्षक बने तथा पत्र की छपाई कैसे उत्तम हो आदि प्रश्नों के समाधान पं. गुरुदयाल शर्मा जी निरन्तर खोजते रहते। वे कहते हैं कि मेरे लिए इसका एक ही हल था कि रात और दिन को मिलाकर देर तक काम करने का अटल निश्चय क्योंकि पत्रिका के लिए सारा काम स्वयं ही करना पड़ता— समाचार संग्रह, कापियां तैयार करना, हाथों से टाइपों को सेट कर के संशोधन करना और विज्ञापन एकत्र करने की कठिन जिम्मेदारी, पत्रिका छप जाने पर उसके वितरण और पाठकों की संख्या बढ़ाने का निरन्तर प्रयत्न।

अथक श्रम साधना तथा दृढ़ निश्चय ने शर्मा जी का मनोबल बराबर बनाए रखा और चार-पांच अंक निकलने पर मित्रों ने सहयोग का हाथ बढ़ाया। आर्थिक सहयोग के लिए शर्मा जी को राकी राकी से सिंगातोका तक का दौरा करना पड़ता। उन्हें राकी राकी अस्पताल के एक मात्र चिकित्सक डाक्टर झिनकू से आर्थिक सहयोग मिला। लौतोका के पं. खुशीराम शर्मा पं. शिव दयाल शर्मा, श्री अप्पा भाई पटैल, श्री गोवर्धन भाई, श्री मोती भाई पटैल, पं. प्रभुदयाल शर्मा, नांदी के पं. राम अवध शर्मा, ग्लोब थियेटर के मालिक श्री एस. जे. लोचन तथा नांदी और सिंगातोका के कई अन्य लोगों ने अपना सहयोग दिया। पं. अमीचंद्र ने भी पत्रिका निकलती रहे इसके लिए अपना पूर्ण सहयोग दिया।

शांतिदूत पत्रिका को लेखक के रूप में सहयोग देने वालों में तावुआ के श्री ईश्वर प्रसाद चौधरी, लौतोका के पं. खुशीराम शर्मा, रामबोध शर्मा, बा के बाबू हरनाम सिंह "हरनाम", भारत से उच्च शिक्षा प्राप्त कर लौटे लौतोका के पं. कमला प्रसाद मिश्र, कवि काशीराम "कुमुद", राम अवतार गुप्त, नांदी के हरिभजन गुप्त आदि के नाम उल्लेखनीय हैं जिन्होंने निरन्तर पत्र को आर्थिक तथा साहित्यिक सहयोग दिया और पत्र समय पर निकलता रहा। भारतीय पाठकों के बीच शांतिदूत की बढ़ती लोकप्रियता तथा प्रतिष्ठा के कारण कुछ लोगों ने ईर्ष्या तथा द्वेष के कारण शांतिदूत का विरोध करना प्रारम्भ कर दिया। शांतिदूत ने तीसरे महीने जब पदार्पण किया तभी अचानक पं. विष्णुदेव तथा कई अन्य मित्रों ने ही शांतिदूत के विरूद्ध गंभीर आंदोलन प्रारंभ कर दिया। अब लगने लगा कि शांतिदूत का चलना कठिन है परन्तु भारत से आए सनातन धर्मोपदेशक पं. रामचन्द्र शर्मा के सहयोग से यह विरोध धीरे धीरे कम हुआ तथा शांतिदूत को सहयोग मिलने लगा। शांतिदूत ने स्थानीय समाचारों को पत्र में स्थान दिया, रामायण मंडलियों को बढ़ावा दिया तथा शिक्षा के विस्तार के लिए प्रयास किया, सभी धर्मो के प्रति समभाव तथा पारस्परिक समझ का वातावरण बनाया, हर त्यौहार पर सुन्दर विशेषांक निकाले तथा सबका सहयोग प्राप्त किया। 1939 ई. में विश्व युद्ध छिड़ गया। इस समय शांतिदूत भारतीय जनता को समाचार देने वाला अकेला हिंदी पत्र था। शांतिदूत ने सचित्र समाचार दिए जिससे पत्र की मांग बढ़ी तथा संपादक के दिए गए आंकड़ों के अनुसार पत्र की मांग बढ़कर सोलह हजार तक पहुँच गई। 1943 ई. में जब किसानों की हड़ताल चल रही थी, अपने गन्ने की फ़सल किसान जला रहे थे, खाने के लिए पैसा नहीं था, कर्ज का बोझ बढ़ता जा रहा था, उस समय शांतिदूत ने किसानों को सलाह दी कि वे गन्ने को न जलाएं और गन्ना काट लें फिर न बोने की हड़ताल करें। यह सम्मति किसान संघ को तो नहीं किंतु दूसरे उग्रवादियो को पसंद नही आई और वे शांतिदूत के बहिष्कार की सम्मति सभाओं में देने लगे। जांच कमीशन ने दाम वृद्धि के विरोध में निर्णय सुनाया तो पटेल जी के समर्थक शांतिदूत की प्रतियां खरीद कर जलाने लगे। अब लगने लगा कि शांतिदूत बंद हो जाएगा किंतु बात शांतिदूत के पक्ष में हुई तथा शांतिदूत की मांग बढ़ने लगी। शांतिदूत ने प्रतिष्ठा प्राप्त की, सम्पादक का भी सम्मान बढ़ा। शांतिदूत ने दीपावली विशेषांक की योजना बनाई। नई सज धज के साथ अंक निकाला और बहुत लोकप्रिय हुआ। फिर तो निरन्तर शांतिदूत की प्रतिष्ठा बढ़ती ही गई।

सन 1950 तक शांतिदूत हिंदी तथा अंग्रेजी दोनों ही भाषाओं में प्रकाशित होता था पर बाद में इसके रूप में परिवर्तन हुआ और बढ़ती मांग के कारण यह पत्र अब केवल हिंदी में ही प्रकाशित होने लगा। इस पत्र में भारत के समाचार होते थे, भारत के कवियों और लेखकों की रचनांए होती थी और साथ ही स्थानीय लेखकों को भी स्थान मिलता था। संपादक को स्थानीय लेखकों की रचनाओं में पर्याप्त भाषा संबंधी परिष्कार भी करना पड़ता था।

1941 ई. में इस पत्र में रमता योगी की चिट्ठी तथा मतवाले की बहक नाम से दो स्तंभ शुरू हुए। रमता योगी की चिट्ठी नियमित रूप से प्रकाशित होती थी किन्तु दूसरा स्तंभ मतवाले की बहक अनियमित था तथा कभी-कभी छपता था। ये दोनों ही स्तंभ पं. गुरु दयाल शर्मा छदमनाम से लिखा करते थे।

25 वर्ष पूरे होते-होते शांतिदूत फीजी का सबसे सम्मानित पत्र बन गया। शांतिदूत ने 1960 ई. में पत्र की रजत जयंती बड़े धूमधाम से मनाई। इस जयंती के अवसर पर प्रसिद्ध स्थानीय कवि श्री सी. काशीराम कुमुद ने संपादक को बधाई दी, पत्रिका के लिए शुभकामनाएं व्यक्त कीं और साथ ही मार्ग में आने वाली कठिनाइयों से विचलित न होने का उपदेश भी दिया। वे अपने संदेश में कहते हैं—

जन हित की राह में कॉटे बिछेंगे सुमन के बदले,
देश जाति सुधार में तुम्हा अपमान होगा यश के बदले,
होगा सफल शुभ संकल्प सेवा द्वीप का उपकार तेरा।
हित चिन्तन समस्त जन के अग्रगामी तुम रहे हो,
जब से बढ़ी हिन्दी सदन में प्रगति करते तुम रहे हो,
फूट का अविरल गरल पी फिर भी जीवित ही बचे हो,
सौभाग्य भ्रमित प्राप्त तुझ को होगा अमर शुभ नाम तेरा॥[1]

(1) कुमुद, काशीराम : रजतजयन्ती हो अनुष्ठान तेरा, शांतिदूत 24 मई, 1984 पृ. 23

नौसोरी के पं० प्रताप चन्द शर्मा भी रजत जयंती के अवसर पर शंतिदूत साप्ताहिक के बारे में काव्य संदेश भेजते हुए कहते हैं—

किंतु अटल अक्षुण्ण रहा तू उचित मार्ग पर चल करके।
आगे बढ़ता रहा निरंतर पल-पल संभल-सभल करके।
पाठक है संतुष्ट सर्वदा उत्सुक तेरे दर्शन को।
खुली चिट्ठियां समाचार मनोरंजन भाते हैं मन को।
फीजी के पत्रों में तेरा गुण गौरव गर्वित होगा।
स्वर्णशर से इतिहासों में तेरा नाम अंकित होगा।
यह तो बचपन है आगे प्रिंट पचास साठ होगी।
किंतु नहीं कह सकता हूँ कितनी वर्षगांठ होगी॥
कर्त्तव्य परायण बनने में निश्चय उन्नति स्थायी है।
इस पच्चीसवीं वर्षगांठ पर सादर सहस बधाई है॥[1]

शांतिदूत की नीति सामान्यत: भारतीयों के हित में रही इसीलिए संभवत: वह भारतीयों के मध्य बहुत लोकप्रिय भी हुआ। सवानी के पं. राम सहाय शर्मा ने तो शांतिदूत को आदर्श पत्र की संज्ञा दी। वे लिखते हैं :—

शांतिदूत ने प्रवासियों को, शांति का पाठ पढ़ाया है।
अपने सद् व्यवहारों से जनता का प्रिय कहलाया है।
रागद्वेष झंझट झगड़ों में, नाता नहीं निभाऊँगा।
निज पूरब कथनानुसार ही, अब तक चलता आया है॥
भेद भाव को दूर भगाकर, सबको गले लगाया है।
दूर दर्शिता में जनता को, प्रेम का पथ दर्शाया है॥
हर आठवें दिन दुनियां का, संदेश सुनाता है सबको।
इसलिए कुल बूढ़ों बच्चों ने, इसको अपनाया है॥
रुचि सुंदर लेखों से सजकर, शनीवार को कढ़ करके।
निश्चित अड्डे पर आते ही हाथों हाथ बिकाया है॥[2]
बाजारों में जिधर घुमाई हमने दृष्टि गौर करके।
उसी ओर इस दूत का पर्चा लोगों के हाथों पाया है।1[3]

1935 से 1979 तक पं. गुरुदयाल शर्मा ने बड़ी निष्ठा तथा श्रम से शांतिदूत का संपादन किया। 1979 में शांतिदूत से अवकाश प्राप्त कर उन्होंने संपादन का दायित्व श्री जयनारायण शर्मा को सौंपा और 9 अगस्त, 1979 को जयनारायण शर्मा जी के साथ श्रीमती निर्मला पथिक ने सह सम्पादिका के रूप में शांतिदूत में कार्य करना प्रारंभ किया। श्री जयनारायण शर्मा 30 अप्रैल, 1981 तक संपादक के रूप में कार्य करते रहे। उनके कार्य मुक्त होने पर 23 जुलाई, 1981 तक श्रीमती निर्मला पथिक स्थानापन्न संपादिका के रूप में कार्य करती रहीं। उनके त्यागपत्र देने पर पं. गुरुदयाल शर्मा ने संपादन का दायित्व फिर अपने हाथों में ले लिया तथा 6 मई, 1982 तक पत्र का संपादन करते रहे। शर्मा जी के सेवानिवृत्त होने पर श्री महेन्द्र चन्द्र शर्मा 'विनोद'' शांतिदूत के नए संपादक बने तथा श्रीमती विश्व कीर्ति शर्मा सहायक संपादिका के रूप में शांतिदूत के संपादन मंडल में आ गईं। विनोद जी एक अनुभवी व्यक्ति थे। हिन्दी और अंग्रेजी दोनों ही भाषाओं पर उनका अच्छा अधिकार था। विनोद जी फीजी कृषि विद्यालय के प्राचार्य भी रह चुके थे तथा प्रशासन का भी उन्हें अच्छा अनुभव था। हिन्दी के प्रति असीम लगाव व निष्ठा तथा संपादकीय सूझ-बूझ से उन्होंने शांतिदूत को नया रूप रंग दिया। विनोद जी ने शांतिदूत में नए स्तंभ जोड़े, तथा उसकी लोक प्रियता व बिक्री बढ़ाने के लिए नए-नए उपाय खोजे। उन्होंने संपादक के नाम खुली चिट्ठी को 'लेखकों के स्वतंत्र विचार' नया नाम दिया। महिला परिशिष्ट तथा धार्मिक प्रवचन नए स्तंभ जोड़े। हिन्दी भाषा के प्रचार-प्रसार को ध्यान में रखकर प्रमुख हिंदी सेवी तथा वरिष्ठ शिक्षा अधिकारी श्री विजेन्द्र सुधाकर द्वारा लिखित 'हिंदी शिक्षण तथा प्रशिक्षण' नियमित स्तंभ प्रारंभ किया। विनोद जी ने फीजी में हिंदी की विकसित नई मापिक शैली फीजी हिंदी[3] को महत्व देने के लिए प्रति सप्ताह नया "स्तंभ 'थोरा हमरो भी तो सुनो' प्रारंभ किया जो फीजी बात (फीजी हिंदी) में नियमित रूप से विनोद जी द्वारा तिरलोक तिवारी के छद्मनाम से लिखा जाता था। इसकी शैली व्यंय प्रधान थी तथा किसी महत्वपूर्ण विषय पर चर्चा होती थी। अपनी बोलचाल की भाषा में होने के कारण पाठकों के मध्य यह बड़ा लोकप्रिय स्तंभ था।

विनोद जी के संपादन काल में 24 मई, 1984 को शांतिदूत ने पचासवें वर्ष में प्रवेश करने के उपलक्ष्य में स्वर्णजयंती विशेषांक नई सज धज के साथ निकाला। इस विशेषांक के संपादकीय में विनोद जी ने शांतिदूत की वर्तमान स्थिति, उसकी रीति नीति पर प्रकाश डाला। वे संपादकीय में लिखते हैं —

"शांतिदूत का उद्देश्य हमेशा निष्पक्षता, वास्तविकता तथा मानव अधिकार को सुरक्षित रखना रहा है और भविष्य में भी रहेगा। यह किसी राजनीतिक पार्टी, समाज या व्यक्ति विशेष का पक्ष नहीं लेता और सभी के साथ एक तरह का बरताव करता है। समाचारों को यथार्थ रखने की पूरी कोशिश की जाती है और हम अपना स्वतंत्र विचार निर्भिकता पूर्वकअभिव्यक्त करते हैं। हम अन्याय का घोर विरोध करते हैं और नागरिकों तथा राष्ट्र के उत्थान के लिए इस चबूतरे का द्वार हमेशा खुला रखते हैं।

शांतिदूत के रूप रंग में भी निरन्तर सुधार हुआ है। शांतिदूत पत्र का आकार 11.5''×17'' है जिस पर 6 कालम में लेजर कम्पोजिंग से छपाई होती है। मुख पृष्ठ पर बीच में बड़े अक्षरों में हिंदी में शांतिदूत तथा उसके नीचे अंग्रेजी में SHANTI DUT छपता है। पत्र के ऊपर दक्षिण प्रशांत का एक मात्र हिंदी साप्ताहिक समाचार पत्र लिखा रहता है। अंग्रेजी में लिखे शांतिदूत के नीचे की पंक्ति में एक क्रम से दिन तथा तिथि पहले अंग्रेजी में फिर हिंदी में दिन, तिथि, वर्ष, अंक तथा मूल्य दिया रहता है। बीच में दिए गए पत्र के नाम के साथ दायीं तथा बायीं ओर विज्ञापन दिए होते हैं।

पत्र की छपाई सामान्यत: लाल तथा काले रंगों में होती हैं किंतु बहुरंगे चित्र विशेषकर विशेषांकों में दिए जाते हैं। पत्र में पर्याप्त विज्ञापन, शोक सूचनाएं, बधाइयां आदि भी छपती है जो पत्र की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ करती हैं।

शांतिदूत का प्रकाशन हैंड टाइप से आरंभ हुआ था। बाद में लाइनों— टाइप इस्तेमाल किया गया। 1 दिसम्बर, 1983 से शांतिदूत में कम्प्यूटर टाइप का प्रयोग प्रारंभ हुआ जिससे छपाई साफ, सुंदर तथा आकर्षक बनी।

(1) शर्मा, प्रताप चंद्र : इस पच्चीसवीं वर्ष गांठ पर, 24 मई, 1984 पृ.
(2) शर्मा, राम सहाय: आदर्श पत्र शांतिदूत शांतिदूत 24 मई, 1984 पृ. 24
(3) वर्मा, विमलेश कान्ति : फीजी बात: हिंदी की एक विदेशी भाषिक शैली, भाषा, वर्ष 2 नवम्बर,-दिसम्बर 1996, अंक 36, पृ. 34-45, केन्द्रीय हिंदी निदेशालय, नयी दिल्ली।
(4) शांतिदूत 24 मई, 1984 संपादकीय पृ. 1 पंचासवें वर्ष में पदार्पण

अपने चारों ओर घटने वाली राजनीतिक तथा सांस्कृतिक गति विधियों पर शांतिदूत हमेशा अपनी दृष्टि रखता था तथा उस पर संपादकीय में टिप्पणी भी किया करता हैं। फीजी हिंदू सोसाइटी के तत्वाधान में विभिन्न हिंदू संस्थाओं ने मिलकर अखिल हिंदू सम्मेलन का व्यपाक स्तर पर दिसम्बर, 1986 में आयोजन किया। इस हिंदू सम्मेलन के बारे में शांतिदूत में श्री महेन्द्र चन्द्र शर्मा 'विनोद' का संपादकीय प्रकाशित हुआ और उसका शीर्षक दिया गया हिंदू सम्मेलन में अंग्रेजी भाषण। इस संपादकीय लेख में सम्पादक विनोद जी ने बड़ी निर्भीकता से अपनी टिप्पणी देते हुए उपसंहार के रूप में कहा—

"ताअज्जुब था कि हिंदू सम्मेलन ने भाषा का प्रचार-प्रसार करने की उपयुक्त सिफारिश की परंतु उसके अधिकांश कार्यक्रम अंग्रेजी में हुए जो हिंदुओं के लिए शर्म की बात है। चन्द प्यासों के पीछे सभी को पानी में डुबा देना क्या उचित प्रतीत होता है।"[1]

इस हिंदू सम्मेलन के बारे में 'थोड़ा हमरो भी तो सुनो' स्तंभ में तिरलोक तिवारी ने भी फीजी बात में टिप्पणी की—

"हाँ इ बात भी याद रखना—हिंदी, हिंदू, हिंदुस्तान। हम लोगन हिंदुस्तान के बंसज है जहां हिंदू निवास करे है अउर हुवों के खास बोली है हिंदी। इ भाखा नहीं भुलना।

अरे। अगर शुद्ध हिंदी नहीं समझा जाए सके तो का तिवारी के हिंदी बोले में तुम लोगन के सरम लगे है ? तिवारी-हिंदी में कउन कसर है भइया लोगन ? हम आपन सब खीसा सही भाखा में बोल लेइत है अउर तुम लोगन बहुत अच्छा से समझ लेव है। अगर सुद्ध हिंदी के समझे में कोई गड़बडइसन होय तो तिवारी-हिंदी बोलो हिंदू भइया लोगन बकिर अपने भाखा के बेइज्जती नहीं करावा। ई बात के गांठी लगाय लेव अपने धोती से अउर अगले सम्मेलन में भुलना नहीं समझेव।[2]

श्री विनोद के संपादन ने शांतिदूत को नए आयाम दिए। उन्होंने नए लेखक मडल का निर्माण किया, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं पर निर्भीक स्पष्ट तथा प्रभावपूर्ण सम्पादकीय लिखे। उन्होंने फीजी में विकसित नई विदेशी भाषिक शैली-फीजी हिंदी के महत्व को समझा तथा स्थानीय लेखकों को उस भाषा में लिखने के लिए प्रेरित किया और स्वयं भी 'थोरा हमरो भी तो सुनो स्तंभ प्रति सप्ताह लिखा।

विनोद जी ने अपने संपादन काल में स्थानीय कवियों, लेखकों तथा रचनाकारों को हिंदी में लिखने के लिए प्रोत्साहित किया'। फलस्वरूप अनेक नई प्रतिभाओं का उदय हुआ। उन्होंने अपने चारों ओर साहित्यकारों का एक नया मडल बनाया जो नित नवीन रचनाओं से शांतिदूत को रोचक बनाते थे। श्री महेन्द्र चन्द्र शर्मा 'विनोद' के हिंदी पत्रकारिता के क्षेत्र में अवदान को रेखांकित करते हुए फीजी के भू० पू० उप प्रधानमंत्री पं. हरीश शर्मा कहते हैं —

"एम० सी० विनोद शर्मा के संपादन ने शांतिदूत को नया मोड़ दिया है जिसके जरिये यह समाचार पत्र फीजी के सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक विचारों को बदलने में, लेखकों को प्रोत्साहित करने में तथा हिंदी भाषा को विकसित करने में प्रेरणा देता रहा है।"[4]

शांतिदूत की स्वर्ण जयंती के अवसर पर फीजी हिंदी साहित्य समिति के महासचिव श्री राम नारायण गोविंद शांतिदूत के संबंध में अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखते हैं :—

"फीजी में शांतिदूत साप्ताहिक समाचार पत्र ने हिंदी की जो अमूल्य सेवा की है, सोना चांदी के भाव से उसका मूल्यांकन नहीं किया जा सकता। जीवन और जगत के संबंध में इसकी नीति चाहे जो भी रही हो, शांतिदूत के कार्यों से हिंदी भाषा लाभान्वित हुई है। इस देश में प्रकाशित होने वाला कोई भी समाचार पत्र अर्द्धशताब्दी तक जीवित नहीं रह सका, यह सौभाग्य केवल हिंदी शांतिदूत को ही प्राप्त हो सका है।"[5]

फीजी के प्रख्यात हिंदी कथाकार श्री जोगिन्दर सिंह 'कंवल' शांतिदूत के बारे में टिप्पणी करते हुए कहते हैं —

"इसकी निराली आन और बान ने फीजी की जनता में इसे लोकप्रिय बनाया है। हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार में इसने बहुमूल्य सहयोग दिया है।"[6]

1987 ई० में फीजी में राजनीतिक उथल-पुथल से भारतीयों की प्रतिष्ठा को गहरा आघात लगा और जिस देश को उन्होंने अपने श्रम व निष्ठा से विश्व में एक प्रतिष्ठित देश के रूप में ला खड़ा किया था उसी देश में भारतीयों को अपना जीवन तथा प्रतिष्ठा असुरक्षित लगने लगी। अनेक भारतीय फीजी छोड़कर विदेश जाने लगे। शांतिदूत के लोकप्रिय संपादक श्री विनोद भी त्यागपत्र देकर न्यूजीलैंड चले गए।

विनोद जी के बाद श्री अशोक कुमार द्विवेदी ने शांतिदूत के संपादक का कार्यभार सँभाला। वे हिंदी के अच्छे ज्ञाता हैं, उसकी शिक्षा-दीक्षा भारत में ही हुई। उनके संपादन काल में अनेक नए लेखक शांतिदूत से जुड़े। लम्बासा के सुनील दत्त, आर० नेतराम, दलीप चंद्र, बुलिलेका की बीबीलता, लौतोका के पं. अनन्त आनन्द शर्मा, ताबुआ के जेम्स बपलकुमार सिंभतोरा के स्वामी प्रज्ञानन्द, पं. धर्मेन्द्र चन्द्र शर्मा, शीला कुमारी शंकर, राकीराकी के रेनल्ड दीपचंद ए०पी० सिंह आदि ने शांतिदूत में लिखना प्रारंभ किया।

श्री द्विवेदी के बाद श्री हेमन्त विमल शर्मा शांतिदूत के संपादक बने। उनकी देख-रेख में शांतिदूत नई साज-सज्जा के साथ निकल रहा है। शांतिदूत की लोकप्रियता आज भी पहले की ही तरह बनी हुई है और दक्षिण प्रशांत का सबसे अधिक तथा नियमित रूप से पढ़ा जाने वाला चर्चित तथा लोकप्रिय हिंदी समाचार पत्र है।

विदेशी हिंदी पत्रकारिता में जो मानक फीजी से प्रकाशित होने वाले साप्ताहिक हिन्दी समाचार पत्र शांतिदूत ने स्थापित किया है वह विदेश का कोई भी हिंदी पत्र अब तक नहीं कर सका है। नि:संदेह 'शांतिदूत' विदेशी हिंदी पत्रकारिता के इतिहास में एक मील का पत्थर कहा जा सकता है।

(1) शांतिदूत 25 दिसम्बर 1986 वर्ष 52, अंक 39, पृ० 3, संपादकीय

(2) शांतिदूत 25 दिसम्बर 1986 वर्ष 52, ओर 39अंक पृ० 4, थोरा हमरी भी तो सुनो

(3) वर्मा, विमलेश कांति : फीजी में हिंदी की साहित्यिक परिधि, राजभाषा भारती, गृह मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली अंक 69, अप्रैल-जून 1995, पृ० 53-61, 68

(4) शांतिदूत, 24 मई 1984, पृ. 8

(5) गोविंद राम नारायण : शांदिूत : उत्पति और विकास पर एक दृष्टि : शांतिदूत 24 मई, 1984

(6) शांतिदूत, 24 मई 1984, पृ. 8

नागरी लिप्यंतरण

जवाब दिहि

० ०

गोपाल भौमिक

तुमि छिले
छिल ताई जीबनेर कि अद्‌भूत माने
आर केउ ना जानुक
ए मन ता जाने।
तुमि नाई।
से मानेए झरे गेछे ताई;
माझे माझे सन्देहे जाचाई
करे नेई
बेंचे आछि किंवा गेछि मरे
अन्यास असत्य भरा जीवन-चत्वरे।

दिल्ली नय, नोआखालि
भूलि नि से कथा ;
आजउ मर्मखूले सेइ प्रानेर बारता
माझे माझे स्वप्न-सिंडि खुले दिये जाय :
पण्यजीवी वन्यदिन
नतमुख गोपन लज्जाय :
तोमाके बलार कथा
आर कि रेखेधि !
मुखे शुधू नाम नेई, गांधीजी, गांधीजी !
अपमान, असम्मान, दैन्य ओ दुर्नीति
विदेशी कवल-मुक्त तोमार स्वदेशे,
प्राण-सूर्य केंदे फेरे
बैरागीर बेशे ;

आमादेर श्येन दृष्टि
दिल्ली-पथगामी
भूलेछे माटिर छोंया, प्रानेर सेलामी।
ताई जत पुंजित जंजाल
जात्रापथ भारी करे तोले,
भय चोखे आमरा ताकाई
सन्मुख भयाल मृत्यु, रुद्र गड़ खाई :
तोमाके डाकार बूझि अधिकारउ नाई।

हिंदी अनुवाद

स्वीकारोक्ति

० ०

गोपाल भौमिक

तुम थे
तो जीवन का एक विचित्र अर्थ था।
भले न कोई और उसे जाने
पर मेरा हृदय पूर्ण परिचित है उससे।
तुम्हीं नहीं
तो है विलुप्त वह अर्थ और उसका गौरव भी।
कभी कभी अपने प्रति भी होकर सशंक
मैं करता जांच—भला देखू तो
जीवित भी हूँ या कि मृतक मैं
इस अन्याय असत्य भरे जीवन-परिसर में।

दिल्ली नहीं, नवाखाली का
है न भूलता दृश्य अलौकिक
प्राणों का सन्देश आज भी है देता झनझना हृदय को
स्वप्न-सीढ़ियों के पट खोल चला जाता है
हम व्यवसायी मात्र
ग्लानि से नत-शिर नत-मुख
तुमसे कहने को अब बाकी रह क्या गया और है मन में ?
रटते हैं बस नाम तुम्हारा—हे गांधी जी ! हे गांधी जी!
अप्रतिष्ठा, अपमान दैन्य है और अनीति है
जिसे किया स्वाधीन-तुम्हारे उस स्वदेश में
प्राण-सूर्य वैरागी बनकर
बिलख रहा, भटक रहा है

और हमारी गृद्ध-दृष्टि
दिल्ली पथ गामी
माटी का स्पर्श, प्राण का नमन
आज हम भूल गये हैं
फलत: कूड़ा-करकट का लग गया ढेर है
है दुरूह यात्रा-पथ अपना
भीत दृष्टि से हम कातर होकर लिखते हैं
है समक्ष विकराल काल, चौतरफा खाई
लगता है, तुमको पुकारने का हमको अधिकार नहीं है।

नागरी लिप्यंतरण

स्वर्ण भस्म

o o

दिनेश दास

भस्म तोमार छड़िए दिलेम
गंगा सिन्धु खरस्रोते,
नील, यामाजन, होयांहोते
छड़िए दिलेम, जड़िए दिलेम
सात सागरेर अतल जलेर अन्धकारे,
नतुन प्राणेर अंगीकारे।
एइ जे बिराट पतित जमिन अनुर्बर,
मनसाकांटा-गुल्मभरा दिगन्तर,
शून्य सकल सम्भावना,,
प्राणहरणेर प्राणधारणेर विडम्बना!
भस्म तोमार मिलिए गेल स्त्रोतेर तोड़े,
नन्निर चेये नरम नतुन अवाक् पलिर सृष्टि करे,
वसुन्धरार वन्ध्याचरे
एबार बुझि जीवन-सोनार भस्म झरे !
पतित माटि आज के देखि स्वप्नरता
आसबे फिरे हारानो तार उर्वरता,
दिगन्त तार उठबे जेगे
सबुज मेघे।
भस्म तोमार बीजेर मतई छड़िए गेल आकाशतले
जलेस्थले।

हिंदी अनुवाद

स्वर्ण-भस्म

o o

दिनेश दास

हमने भस्म तुम्हारी छोड़ी, गंगा और सिन्धु के निर्मल प्रखर स्त्रोत में
नील, श्वांग हो, अमेजान में धुली-मिली वह
जैसे जोत विलीन हुई हो अन्य जोत में
सप्तजलधि-जल-अतल-अंधतम-अंधकार को
तव विभूति स्वीकार कर रही,
वहाँ जहाँ है सृष्टि असम्भव
वह प्राणों की शक्ति भर रही।

फैली पड़ी अनुर्वर परती भूमि
झाड़-झंखाड़, कटीले लता-गुलम-भर जहाँ पनपते,
जहाँ नहीं हरियाली सम्भव दूर क्षितिज तक
जहाँ प्राण धारण करने में, प्राण हरण भय से सब कँपते
वहाँ तुम्हारी भस्म उमड़ते स्रोतों के माध्यम से पहुँची
माखन से भी नरम बना दी उसने धरती,
हरा भरा हो गया चतुर्दिक
वसुन्धरा हो गई, अभी तक थी जो परती!

लगता है जीवन का कंचन बरस रहा है
बंजर उर्वरता के देख रहा है सपने
वह देखेगा काले नीरद मेघ
क्षितिज-भर भरते अपने!

भस्म तुम्हारी बीज हो गई
अम्बर तल में
जल में थल में

"चूंकि भारतीय एक होकर एक समन्वित संस्कृति का विकास करना चाहते हैं, इसलिए सभी भारतीयों का यह परम कर्त्तव्य हो जाता है कि वे हिन्दी को अपनी भाषा समझकर अपनाएँ"

-डा0 बाबासाहब अम्बेदकर

नागरी लिप्यंतरण

गांधीजीर दिल्ली

००

देवेश दास

निशान्ते पथेर प्रान्ते यात्री हनु रात्रिर तिमिरे,
निविड़ निद्राय
दिल्लीर पल्लीर शान्ति श्याम कान्ति जानाइल धीरे
तन्द्रित विदाय,
शुधु एका समृतिमाखा राजपथ शुधाल हासिया—
चले याओ कोथा ?
कहिनु—तोमारे बाहिं' मृदु गाहि अतीते चाहिया
पुरातनी व्यथा।

कहिनु—नगरी तुमि गड़ि' भूमि समय सैकते
रचि' इतिहास
आज यारे पुष्पहारे राजछत्रे बसाओ मरते
तारि सर्वनाश
करे याओ, भुले याओ क्षणिकेर पुलके एकेला;
चाहना काहारे;
चरणे नूपुर तव चिकण छुरिका सम खेला
करे दुर्निवारे
तुमि त बासनि भाल महाकाल भगिनि वन्दिता
रूपसी नगरी,
अन्धकार अन्ध्याकाले भाले लये टीमा अनिन्दिता
स्मृतिर गागरी
भरिया यमुनातीरे घिरे तव अनावृत देह
लुप्त इतिहासे
शुधु लक्ष्य कर दूरे राजपूरे नवागत केह
पुनि बुझि आसे।
इन्द्रप्रस्थ राजपाटे अर्धचन्द्र शोभील निठुर,
भूक्षेप ता नाहि;
तारे पुन अर्धचन्द्रे मेघ मन्त्रे करिले आतुर;
जले अवगाहि'
पाश्चात्य वणिक दल ध्वनि' व्याघ्र-रण-भेरी नाद
उड़ाल पताका,
विश्वरणे जिनि' तबु निःस्व प्राणे पूरल विषाद
पड़े गेल ढाका।
विश्वेर विस्मय माझे नग्न साजे उदिल सन्यासी
हिंसाहीन रण,
अग्निबाण व्योमयान आणविका शक्ति सर्वनाशी
सबि अकारण;
संहारलीलार परे भक्ति भरे प्रणमें संसार
प्रेमेर ठाकुरे,

हिंदी अनुवाद

गांधीजीर दिल्ली

००

देवेश दास

अंधकार से भरी राह पर उस दिन चला निशीथे
दिल्ली के सुप्त-स्थानों ने तनिक खोलकर आंखें देखा
और विदा दी मुझको जैसे रीते-रीते!
स्मृतियों से जटित राजपथ-भर ने पूछा किंचित् हँसकर
'कहाँ जा रहे हो तुम भाई'
मैंने कहा पुरानी यादें कुछ जग आईं
उन्हें गुनगुनाता चला जा रहा हूँ विषण्ण मन!
मैंने कहा, कि तुम ऐसी नगरी हो, दिल्ली,
जो धरती की धूला पर इतिहास रच रही ;
राजछत्र से मंडित जिसको आज बिठाया सिंहासन पर
हो जाती है कल तक उसकी कही, अनकही!
पल-भर भले प्रसन्न, किसी की किन्तु नहीं हो
नूपुर बँधे हुए लगते हैं पाँवों में जो
क्या जाने वे दुर्निवार असिधार कहीं हों।
महाकाल की भगिनी द्वारा नित्य वंदिता
हे अनंदिता रूपसि नगरी
तुमने नहीं किसी को चाहा
अंधकार जब सिमट रहा है यमुना तट पर स्मृति घट ले
अनावृता तुम खड़ी हुई हो
सोच रहा हूँ मैं पिछला इतिहास कि तुमने किसको कितनी देर निबाहा!
इंद्रप्रस्थ के राजघाट पर निष्ठुर अर्धचन्द्र चमका था कभी
किन्तु निमिष मेघ मेघ-मंत्र से आतुर करके तुमने उसको
तट के जल में लीन कर दिया तभी।
फिर पश्चिम से बनियों का दल सिंह गर्जना करता
अपना ध्वज फहराता, रण का नाद गुँजाता आया,
ऐसी कोई शक्ति नहीं थी उसमें अक्षय; किन्तु तुम्हें देकर विषाद,
वह कण-कण-छाया।
सकल विश्व ने इसी समय विस्मय से देखा
अर्धनग्न संन्यासी कोई शस्त्र अहिंसा का लेकर आगे आया है
अग्नि वायु अणु से चालित हर शस्त्र
सामने जिसके नहीं रंचकुछ करने पाया है!
लगा नाश-लीला से ऊपर उठ कर अब संसार भक्तियुत

ह'ल आशा भालबासा रचि' दिये रीतिरे धरार
नब शान्तिपुरे।
नाइ क्षमा निरुपमा तोमार निठुर कटाक्षबाणे,
रक्तशक्ति जानो;
प्रतिटि युगान्ते शान्ति क्लान्ति तब वक्षतले आने,
ताइ अस्त्र हानो।
विश्वेर हिंसार दाबी भावीकाले भुलिबे याहारे
पूजिया मानवे
अमोघ तोमार विधि—से निधिओ सहसा संहारे,
तम घिरे भरे।
आमि ताइ चले याद पिछे फैले शतेक स्मृतिरे,
ये महापथेर
एक प्रान्ते दिकभ्रान्ते नव नव राज्येर गतिरे
कर्णेर रथेर
मत मग्न भग्न करि फेले दाओ, हास उपेक्षिया
उदासे हेलाय,
से पथ तोमारि थाक्; दूरे थाक्; शुधु शून्य हिया
पान्थ चले याय।

नतशिर होगा इसके आगे,
लोग परस्पर प्रेम करेंगे उजड़ी हुई धरा पर फिर से,
लगा कि इसके लक्षण जागे;
पर ऐसा लगता है तुमको शान्ति एक क्षण बहलाती है
रक्त तुम्हारा क्रान्तिशील है, हिंसा ही उसकी थाती है!
कल का विश्व भूल कर हिंसा की अमोघता
जिसकी प्रेम भरी विधि का होगा अनुयायी
तुमने उसको निगल लिया, फिर अन्धकारमय घटा, विश्व भर में घिर आई!
तुम चाहे जो सोचो,
अपनी इस विनाश लीला पर चाहे हर्ष मनाओ;
मैं जाता हूँ तुम्हें छोड़कर
अपने हिंसा पथ को अपने पास रखो तुम ;
शून्य हृदय एकाकी पथचारी होकर रह लूंगा,
तुम मत मुझसे प्रश्न करो
मत मुझे रिझाओ !

*"शायद हममें कुछ ऐसे आदमी हैं, जिन्हें इस बात का डर है कि हिंदीवाले **हमारी मातृभाषा** को छुड़ाकर उसके स्थान में हिंदी रखवाना चाहते हैं। यह भी निराधार **भ्रम है**। हिंदी प्रचार का उद्देश्य केवल यही है कि आजकल जो काम अंग्रेजी से लिया जाता है वह आगे चलकर हिंदी से लिया जाए। अपनी माता से भी ज्यादा प्यारी मातृभाषा बंगला को तो हम कदापि नहीं छोड़ सकते, किंतु भारत के विभिन्न प्रान्तों के भाइयों से बातचीत करने के लिए हिंदी या हिंदुस्तानी तो सीखनी ही चाहिए। स्वाधीन भारत के नवयुवकों को हिंदी के अतिरिक्त जर्मन, फ्रैंच आदि यूरोपीय भाषाओं में ऐसी एक-दो सीखनी पड़ेंगी, नहीं तो अंतर्राष्ट्रीय मामलों में हम दूसरी जातियों का मुकाबला नहीं कर सकेंगे।...*

...कुछ लोगों का विचार है कि बंगला राष्ट्रभाषा हो, क्योंकि इसमें उच्च कोटि का साहित्य है। हिंदी में उच्च साहित्य है अथवा नहीं, यह विवादग्रस्त विषय उठाना ठीक नहीं है। हिंदी व्यापक रूप से भारत में बोली जाती है और इसमें संग्रहण शक्ति है तथा यह सरल है।"

सुभाष चन्द्र बोस

एडवांस, जुलाई 1938

समीक्षा

नागार्जुन और धूमिल के काव्य संसार से गुजरते हुए

[पुस्तकः सामाजिक यथार्थ के चितेरे नागार्जुन और धूमिल, लेखकः डॉ. सी. के. जेम्स, प्रकाशकः सार्थक प्रकाशन, 100 ए, गौतम नगर, नई दिल्ली—110049, प्रथम संस्करण —1998]

नागार्जुन और धूमिल की सामाजिक प्रतिबद्धता अत्यन्त प्रबल होकर उनकी काव्यकृतियों में मुखरित हुई है। सामाजिक जीवन की जटिलताएँ इन दोनों रचनाकारों की आँखों से ओझल नहीं होने पायी हैं। इन दोनों कवियों का काव्य आम आदमी की पीड़ा, वेदना और उसके अभावों की कथा कहता है। अगर यह कहा जाए कि कथा साहित्य में जो कार्य प्रेमचन्द, यशपाल, भैरव प्रसाद गुप्त ने किया उसी का एक रूप नागार्जुन और धूमिल की कविता में दिखाई पड़ता है, तो अतिश्योक्ति नहीं होगी। जीवन के विविध पहलू अपने सर्वांगीण रूप में यथार्थ के पटल पर उनके काव्य में दिखाई पड़ते हैं।

स्वतन्त्रता से पूर्व जनता ने जो आशायें संजोयी थीं उनमें से अधिकांश पूरी नहीं हुईं। समस्याएं कम होने के बजाय बढ़ीं। ये समस्याएं आज सम्पूर्ण समाज के सामने चुनौती की तरह हैं जिन्होंने जनजीवन को त्रस्त करके रख दिया है। स्वतन्त्रता से पूर्व जिस राजनीतिक शुचिता की बात कही जा रही थी वह आशा स्वाधीनता के कुछ वर्षों बाद ही हताशा और कहें तो घोर निराशा में परिवर्तित हो गयी। जनता के शासन में जनता द्वारा चुने हुए प्रतिनिधि ही उसका भाँति-भाँति से शोषण करने लगे हैं। जनता के खून-पसीने के पैसे से ये नेता अपने महलों की इमारत बनवा रहे हैं। नागार्जुन और धूमिल की आँखों से राजनीति का उपर्युक्त परिदृश्य ओझल नहीं होने पाया।

नई कविता का आन्दोलन मूलतः साहित्य को व्यक्तिवाद की सीमा में समेटने का प्रयास था। कविता अपनी जनप्रतिबद्धता छोड़कर कलावादी घेरे में बन्दी हो गयी। व्यक्ति, उसके अन्तर्मन, उसकी महत्वाकांक्षाएं और उसकी उपलब्धियां महत्वपूर्ण होती हैं, लेकिन निर्णायक नहीं होतीं। निर्णायक होता है—समाज और वह कला और साहित्य जो उसके बदलाव और जय-पराजय दोनों का ही चित्रण करे। व्यक्ति और समाज के बीच एक उचित सामंजस्य स्थापित करे और सामाजिक जटिलताओं को सहज अभिव्यक्ति दे। ऐसा नई कविता में अपवादों को छोड़कर नहीं हुआ। उसमें निराशा, कुण्ठा और शब्दों का चमत्कार तो है बदलाव की चेतना नहीं है और न आत्मसंघर्ष है और न सामाजिक संघर्ष का चित्रण। एक तरह का नियतिवाद जो मनुष्य की ऊर्जा और संघर्ष क्षमता को कुण्ठित करता है, हमें इन कवियों में मिलती है। व्यक्ति और समाज के अन्तः सम्बन्धों का चित्रण नई कविता में बहुत कम देखने को मिलता है। इस कविता को पढ़कर नई ऊर्जा और नये विचार नहीं मिलते। नये तथ्यों का उद्घाटन भी इसमें नहीं है और वह मनुष्य भी नहीं है जो एक बेहतर समाज और मानव मूल्यों की स्थापना के लिए संघर्ष कर रहा हो। दलित और पीड़ित जन की संघर्षगाथा हमें जिन कवियों में मिलती है उन्हें नई कविता के नियामकों ने हाशिये पर रख दिया पर नागार्जुन, मुक्तिबोध, शमशेर, केदार नाथ अग्रवाल और धूमिल का, इन लोगों ने राजनीतिक और प्रचारवादी कहकर तिरस्कार किया। इनकी जन प्रतिबद्धता का उपहास किया और द्वितीय श्रेणी के कलावादी कवियों को महान कवि सिद्ध किया। 1948 से 1968 के बीच हिन्दी की तमाम बड़ी-बड़ी पत्रिकायें, वे सेठाश्रयी हों या व्यक्ति स्वातंत्र्य का झण्डा बुलन्द करने वाली पत्र-पत्रिकायें हों, सभी ने मिलकर एक ऐसा वातावरण बनाया कि यथार्थवादी कविता बादलों के घेरे में बन्द रही और रोमानी तथा अयथार्थ, पश्चिम के कलावादी और व्यक्तिवादी आन्दोलनों से प्रभावित कविता मुख्यपृष्ठ पर रही। लेकिन इतिहास सबके साथ न्याय करता है उसके यहां देर है, अन्धेर नहीं। कबीर का मूल्यांकन पांच सौ साल बाद हुआ, मीरा का मूल्यांकन अभी तक अधूरा है। सिद्धों और नाथों का साहित्य तथा उनकी सार्थक सामाजिक भूमिका पर 1930 ई. के लगभग ही गंभीर बातचीत और मूल्यांकन हुआ। इस दृष्टि से नागार्जुन और उनके अन्य समकालीन जनवादी कवि सौभाग्यशाली हैं कि उनका सही मूल्यांकन उनके जीवन काल में ही आरम्भ हो गया।

डा. सी. के. जेम्स की पुस्तक ''सामाजिक यथार्थ के चितेरे नागार्जुन और धूमिल'' इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है। ये डा. जेम्स के शोध प्रबन्ध का परिष्कृत रूप है। केरल में हिन्दी शोध अब भी गरिमामय और गंभीरता से लिया जा रहा है। उत्तर भारत के अनेक विश्वविद्यालय ऐसे हैं जिन्होंने हिन्दी शोध को बाजार से जोड़ा है। शोध कम हो रहा है, व्यापार अधिक। इस दृष्टि से सेन्ट थामस कालेज, पाला के हिन्दी शोध केन्द्र को विशेष रूप से रेखांकित करूंगा जहां डा. जेम्स और डा. एलेडम जैसे मनीषी शोध कार्य में संलग्न है। कालीकट विश्वविद्यालय, कोचीन विश्वविद्यालय और केरल विश्वविद्यालय, त्रिवेन्द्रम के हिन्दी केन्द्र भी उल्लेखनीय हैं।

नागार्जुन की कविता चार पीढ़ियों की कविता है लेकिन धूमिल विद्रोही आत्माओं के कवि हैं। उनकी कविता में क्रान्ति की आग है।

नागार्जुन की कविता में परिवर्तन की गहरी अकांक्षा है। दोनों में एक गहरी समानता भी है। सहज भाषा में अपने युग की अभिव्यक्ति हैं। डॉ. जेम्स ने स्पष्ट किया है कि नागार्जुन और धूमिल की कविता में सामाजिक विसंगतियों, विद्रूपताओं की सजीव अभिव्यक्ति है। नागार्जुन के बारे में डॉ. जेम्स की यह टिप्पणी द्रष्टव्य है :

''उन्हें सत्ता और प्रतिष्ठा से कोई मोह नहीं है, वह सत्ता की दुर्नितियों के विरूद्ध निर्भीक होकर जनआन्दोलनों में कूद पड़ते हैं। सत्ता और जनता के बीच जब भी संघर्ष, हुआ है नागार्जुन सदैव जनता के पक्षधर और प्रवक्ता बन कर उभरे है।'' पृष्ठ -49

नागार्जुन निराशावादी कवि नहीं हैं, गरीबी और उत्पीड़न से होते हुए भी कवि बसन्त का सपना देखता है। ऐसे समाज की बात करता है जो सामाजिक, आर्थिक और राजनीजिक रूप से हर व्यक्ति को उन्नति का समान अवसर दे और मानव समता के आधार पर एक समाज का सृजन हो सके—

''सबके दुख में दुखी रहेगा। सबके सुख में सुख मानेगा
समझ बूझकर ही समता का। असली मुद्दा पहचानेगा''

डॉ. जेम्स ने नागार्जुन को सर्वहारा का कवि कहा हैं। साधारण जन के कवि नागार्जुन की पीड़ा करोड़ों लोगों के दुख दर्द से जुड़ जाती है। वे मानते हैं कि असंख्य लोग पीड़ित हैं और उनमें से मैं भी एक हूँ।

''मैं न अकेला, कोटि कोटि हैं मुझ जैसे तो
सबको ही अपना-अपना दुख वैसे तो
पर दुनिया को नरक नहीं रहने देंगे हम
कर परास्त छलियों को, अमृत छीनेगे हम।''

धूमिल की कविता में आक्रोश और विद्रोह दोनों मिलते हैं। वे समाज और व्यवस्था से कहीं समझौता नहीं करते। वे षड्यन्त्रों का भण्डाफोड़ करने में हिचकते नहीं है, वर्तमान जनतंत्र और संसदीय प्रणाली के कायल नहीं हें, वे सच्चे अर्थों में जनता का शासन और जनतंत्र चाहते हैं।

उनकी रचनाओं पर गोर्की, मार्क्स और चेखोव का मिला-जुला असर है। उन्हें बहुत छोटा जीवन मिला (नवम्बर 1936-10 फरवरी 1975) इसलिए नागार्जुन की तरह उनका कविता संसार बहुत बड़ा नहीं है। लेकिन धूमिल की कविता में जो स्पष्टवादिता है, सीधे चोट करने की जो क्षमता है, वह आधुनिक साहित्य में बहुत कम लोगों के पास है।

डॉ. जेम्स ने धूमिल का मूल्यांकन करते हुए लिखा है-धूमिल अन्तर्विरोधों से जूझने वाले कवि हैं। वे अपने युग और परिवेश की अव्यवस्था और दुहरेपन को निर्भीकता से चित्रित करते हैं। वे कविता को जनसंघर्षों से जोड़ने के लिए निरन्तर प्रयास करते रहें—

''मैं उन तमाम चुनौतियों के लिए
खुद को तैयार करना चाहता हूँ
जिनका सामना करने के लिए छत्तीस साल तक
वह आदमी अंधी गलियों में
नफरत का दरवाजा खटखटाकर
कैंचियों की दलाली करता रहा।''

नागार्जुन और धूमिल ने अनेक समान विषयों पर लिखा है जै संसदीय प्रणाली, प्रजातंत्र , चुनाव व्यवस्था, नेताओं के दुहरे चरित्र, यु शोषण, भूख, गरीबी और समाजवाद। साधारण व्यक्ति की भाषा में उन दुख दर्दों की अभिव्यक्ति दोनों की अपनी विशेषता हैं। दोनों की कविता जनता की पीड़ा और समाज को बदलने की आकांक्षाएं रखती हैं।

हिन्दी के इन दो महत्वपूर्ण कवियों पर डा. जेम्स की पुस्तक पठनी तो है ही, इसके साथ ही नागार्जुन और धूमिल की कविता के सामाजि सन्दर्भ और सरोकारों को उनके सम्पूर्ण सौन्दर्यबोध के साथ, मूल्यांकन करती है। हिन्दी कविता की प्रगतिशील जनवादी परम्परा को समझने में यह पुस्तक सहायक सिद्ध होगी।

प्रो. कुंवर पाल सिं
एम. आई. जी.,28, अवन्तिका—
रामघाट रोड, अलीग

आप बीती और जगबीती का कश्कोल

[पुस्तक : दीवार में तरेड़ (उपन्यास), लेखक : श्री राजकुमा सैनी, प्रकाशक: सामयिक प्रकाशन, 3543 जटवाडा, दरियागंज, न दिल्ली-110002. मूल्य 150 रुपये]

साहित्यकार श्री राजकुमार सैनी द्वारा रचित ''आशुतोष'' और ''प्रभा दो उपन्यासों के बाद हिंदी जगत को हाल ही में एक ललित-कृति भें स्वरूप प्रदान की गई है। यह अनूठी रचना हिंदी अकादमी, दिल्ली द्वा इसी वर्ष पुरस्कार व सम्मान पाने की पात्र बनी है। इस पुस्तक में सहृदयों के मन को रस से संतृप्त कर देने की बीच-बीच में श्रेष्ठ जीवन-मूल्यों क प्रतिष्ठा करने की शक्ति है। इसे पढ़कर हृदय खिल-खिल उठते हैं औ बुद्धि के गवाक्ष खुल-खुल जाते हैं। उपन्यास के नायक भावुक किशो कुमार का मानसिक विक्षेप मन के सम्पूर्ण स्वास्थ्य में बदलता है, जिसक श्रेय उसके जीवन में आने वाली भारतीय उदारमना नारी के असीम स्नेह और सही दिशा-निर्देश को जाता है, भले ही उपन्यास के अंत तक कुमा को उससे न मिल पाने की पीड़ा सालती रहती है।

''दीवार में तरेड़'' नाम में लेखक को बाह्य जगत और अन्तर्जगत तथा विश्व व्यापक स्तर पर सर्वत्र तरेंड़ (दरार) आने का आभास होता है संयुक्त परिवारों, कुमार के आकांक्षा-लोक तथा सोवियत सत्ता में आई टूट से कुमार मन की अतल गहराई में कहीं संत्रस्त है।

इस सजग लेखक के पास जीवन के बेशुमार अनुभवों की भार पूंजी है। उसकी यह पुस्तक सुरुचि सम्पन्न पाठकों के लिए एक पठनीय कृति है जिसकी सुगंध पाठकों को मंत्रमुग्ध कर देती है। लेखक का संदेश है कि परस्पर प्रेम का व्यवहार ही अस्वस्थ समाज में स्वस्थ रक्त का संचार कर सकेगा। मानसिक चिकित्सा के क्षेत्र में प्रेम की ज्योति और ज्ञान की प्रेरण

ी वह संबल है जो मन की रूग्णता को दूर कर स्वस्थ और होनहार नागरिकों ने भरपूर परिवेश-प्रतिवेश की सृष्टि करेगा। निश्चय ही यह प्रयोग साहित्य द्वारा मानसिक चिकित्सा के क्षेत्र में एक अद्‌भुत क्रांति का संकेत देता है।

''दीवार में तरेड़'' उपन्यास में लेखक ने अपने बचपन, किशोरावस्था तथा विश्वविद्यालय में अध्ययन-काल के संस्मरणों का आकर्षक एवं चित्र-विचित्र संसार रचा है। प्रासंगिक उल्लेख लेखक की बहुज्ञता का परिचय देते हैं जो औसत पाठक के ज्ञान में वृद्धि करते हैं और उसकी अभिरुचि का परिष्कार करते हैं। ऐसी रचना की अपेक्षा तो अस्वस्थ और संकुचित समाज को हमेशा रहेगी। दुर्बल को तो सदा शक्तिशाली बनने की इच्छा रहती है। उपन्यास की कथा हम सब की कथा है। पाठक रचयिता के साथ हंसता, रोता है और साधारणीकरण एवं तादात्मय की अवस्था से गुजरता है।

श्रेष्ठ कविता के उदाहरणों, प्रसंगानुकूल सुन्दर उक्तियों, गालिब के शेरों से इस रचना की साज-सज्जा हुई है। पंजाबी भाषा, शब्दों के बहुल-प्रयोग ने हिंदी भाषा की क्षमता को बढ़ाने का प्रयास किया है। भावों की चारू अभिव्यक्ति और मन मोहक शैली के दर्शन होते हैं। सरलता, सहजता, ध्वन्यात्मकता के कारण यह रचना पाठक के मन को आखिर तक अपने चुंबकीय हुक से बांधे रहती है। सादगीपूर्ण भाषा को ऐश्वर्य, सौंदर्य और शक्ति प्रभाव डालती है। उपन्यास लिखने में लेखक ने नया प्रयोग किया है। यह संस्मरणात्मक भी है और उद्‌बोधनात्मक भी। इसमें प्रेम का गुणगान है और कविता का प्राचुर्य। लेखक ने ईमानदारी एवं साफगोई से अपने बारे में सपाट-बयानी और नाजुक बयानी की है। उपन्यास पाठकों के संवेदनात्मक ज्ञान का और उनकी ज्ञानात्मक संवेदना का विस्तार करता है।

निर्मल कांता सहगल,
254-ई, एम.आई.जी. तितारपुर,
रजोरीगार्डन, नई दिल्ली-110027

अनुवाद के क्षेत्र में एक मील पत्थर—सन्त जोन

[कृति—सेंट जोन (नाटक), मूल लेखक बर्नार्ड शाह, अनुवाद : श्रीमती संतोष खन्ना, प्रकाशक : भारत ज्योति प्रकाशन, बीएच/48 (पूर्वी), शालीमार बाग, दिल्ली-110052, मूल्य : 245/- रुपये।]

विद्वान व्यक्तियों ने कहा है कि अनुवाद एक संस्कृति को दूसरी संस्कृति से जोड़ता है और यह कार्य अत्यन्त साहस और चुनौती भरा होता है। यूँ अनुवाद के क्षेत्र में ऐसे बहुत से अनुवादक मिल जाया करते हैं, जिन्होंने अनुवाद को अपने जीविकोपार्जन के रूप में चुना है, परन्तु ऐसे व्यक्तियों द्वारा किया गया अनुवाद तब तक सही अर्थों में अनुवाद नहीं कहा जा सकता, जब तक वह अनुवादक की आत्माभिव्यक्ति का माध्यम न बने और अच्छे से अच्छा कार्य करने की उसकी अपनी ही लालसा को संतुष्ट न करे। अनुवाद कार्य देखने में जितना सरल लगता है, कृतित्व में उतना ही जटिल होता है। इसमें केवल ध्वन्यात्मक प्रतीकों का प्रतिस्थापन ही नहीं होता, बल्कि एक भाषा में व्यक्त भाव, संस्कृति, परंपरा, आचार-विचार, रहन-सहन आदि समाज के सभी पहलुओं का दूसरी भाषा में प्रतिस्थापन होता है और यह प्रतिस्थापन तभी सही मायनों में खरा उतरता है, जब शब्द की जगह शब्द का नहीं, बल्कि इन तत्वों का प्रतिस्थापन हो। इस प्रकार अनुवाद उस स्थूल या सूक्ष्म चीज को संप्रेषित नहीं करता, जो शब्द के रूप में लिपिबद्ध होती है या अर्थ के रूप में उसमें निहित होती है, बल्कि भाव रूपी आत्मा का भाषा रूपी पर-काया में प्रवेश कराना है।

श्रीमती संतोष खन्ना ने विश्व साहित्य के स्तंभ जार्ज बर्नार्ड शाह के अप्रतिम नाटक ''सेंट जोन'' का ''संत जोन'' नाम से अनुवाद किया है। राजनीति, संस्कृति, न्यायाधिकरण, सामाजिक व्यवस्थाओं, रीति-रिवाजों, संस्कारों, धर्मान्धताओं से भरे इस नाटक का अनुवाद अनुवादकों के लिए एक परम चुनौती है। इस साहित्यिक सृजन का पुनर्सृजन अपने आप में कोई सहज कार्य नहीं था, बल्कि एक असहज कार्य को सहज बनाने की परीक्षा थी।

सेंट जोन नाटक बीसवीं सदी के उत्कृष्ट नाटकों में से एक है और यहां विवेचनाधीन अनुवाद इसके ऐसे ही उत्कृष्टतम अनुवाद का प्रतिनिधित्व करता है और हिन्दी रंग-मंच पर एक सफल प्रस्तुति का उपादान है। नाटक की नायिका अट्ठारह वर्षीय जोन एक ग्रामीण बाला है, जिसने विदेशी शासकों के विरुद्ध फ्रांस के संघर्ष को नया आत्म-बल दिया और उसके सैनिकों के गिरते मनोबल को उठाया। ईश-प्रेरित अपनी रणनीति से वह न केवल फ्रांस का विजय की ओर प्रयाण कराने में सहायक हुई, बल्कि उसने देश-भक्ति के लिए आत्मोत्सर्ग की एक अनूठी मिसाल भी कायम की। उसने अव्यावहारिक राजनीति, धार्मिक कट्टरपन तथा प्रचलित सामाजिक व्यवस्थाओं का विरोध किया और स्वाभिमान के लिए संघर्ष, न्याय एवं समानता के सिद्धांत का प्रतिपादन किया। इस नाटक का अंत उस समय प्रचलित साहित्यिक परम्परा के अनुसार एक त्रासदी के रूप में हुआ है, क्योंकि जोन की संघर्षशीलता और देश-भक्ति से ईर्ष्या खाए उसी के देश के सम्राट एवं सैनिकों ने उसके अंतिम समय में उसका साथ नहीं दिया और फ्रांस में झाँसी की रानी की-सी मिसाल चार सौ वर्ष पूर्व ही स्थापित कर वह अपने कर्त्तव्य की इतिश्री कर गई। बाद में उसके संघर्षों से प्रेरित होकर फ्रांसीसियों ने उसे संत घोषित किया।

नाटक के अनुवाद के समय श्रीमती संतोष खन्ना ने अपनी भाषा में सहजता की रक्षा के लिए कठिन एवं असहज अंग्रेजी को हिन्दी के छोटे-छोटे तथा सहज वाक्यों में बदला है। वास्तव में इस नाटक का अनुवाद अपने आप में एक बहुत कठिन कार्य था, क्योंकि यह अपने देश की संपूर्ण सांस्कृतिक, धार्मिक, राजनैतिक, न्यायिक एवं पारंपरिक विरासतों और संघर्षों से भरा पड़ा है। ऐसे नाटक का अनुवाद करते समय भी न केवल उन्होंने हिन्दी का भाषिक प्रकृति का निर्वाह किया, बल्कि देश की सामाजिक एवं सांस्कृतिक विरासतों का भी उनके देशी रूपों में रुपायन किया है। उदाहरण के लिए उन्होंने 'God' के लिए परमेश्वर, 'act' के लिए लीला और 'rot' के लिए निरी बकवास सरीखे शब्दों का प्रयोग करके न केवल शब्द स्तर पर भारतीयकरण का ध्यान रखा है, बल्कि 'Yes, what am I ?' के लिए ''हाँ कौन हूँ मैं ?'' तथा 'To a great man like you, I must seem like that' के लिए ''आप जैसे बड़े आदमी के सामने मेरी क्या औकात'' जैसे वाक्यों का प्रयोग करके वाक्य स्तर पर इसका निर्वाह किया

है। इस बात को वे शैली स्तर पर भी नहीं भूलीं। उदाहरण के रूप में निम्नलिखित वाक्य देखे जा सकते हैं :

Am I captain of this castle or am I a cowboy ?
मैं हूँ इस किले का कप्तान, कोई चरवाहा नहीं।

Dam your impudence? बड़ी मुँहफट हो ?

So you are presuming me on my seeing you.

मैंने तुम्हें बुला क्या लिया, इसे तुम अपनी जीत समझ रही हो।

इसी प्रकार अनुवाद में मुहावरों के क्षेत्र में भी भारतीय संस्कृति के अनुरूप शैली का निर्वाह हुआ है :

Pull yourself together अक्ल की बात करो।

Thousand thunders. तुम पर गाज गिरे ?

इस प्रकार संत जोन में मूल की आत्मा के दर्शन भारतीय रूप में होते हैं। यह लेखक की भावना को भी व्यक्त करता है और पाठकों को भी प्रभावित करता है। मेरे विचार में इसे एक आदर्श अनुवाद कहा जा सकता है, क्योंकि यह रूपान्तर मात्र न होकर मूल लेखक की आत्मा में पैठने में समर्थ है। इस अनुवाद के माध्यम से विदुषी अनुवाद-कृत्रि ने लगभग पचहत्तर वर्ष पुरानी रचना को भारत में पुनर्जीवित किया है, जिसे पढ़कर पाठक रोमांचित भी होता है और साधारणीकृत भी।

संत जोन के अनुवाद में भाव का भाषा के गहरे स्तर से तारतम्य बैठाया गया है। इस अनुवाद में उन्होंने ध्वनि, रूप, अर्थ एवं वाक्य-विज्ञान संबंधी पहलुओं, शिल्प, सृजनधर्मिता का समुचित ध्यान रखा है। नाटक को संस्कृत साहित्य में काव्य कहा गया है और कवि के काव्यत्व की थाह पा लेना समान रूप से सृजनशील एवं बिंबशील व्यक्तित्व के वश की ही बात होती है, उसके कृत-कार्य का अनुवाद करना तथा उसमें वही भाव-प्रवाह और बिंबात्मकता लाना तो दूर की बात है। श्रीमती संतोष खन्ना ने अपने अनुवाद में इस धारणा को धराशायी कर दिया है। उन्होंने काव्यानुशीलन को अनुवाद-अनुशीलन के रूप में प्रतिष्ठापित किया है। यह बात उनकी अनुप्रेरणा एवं भाव-प्रवणता का संकेत है। **सेंट जोन** के अनुवाद में उनके शब्दों से जो संस्कारजन्य गूँज उठती है, वह नाटक में व्याप्त सूक्ष्म, सुकोमल प्रभावों की समान्तर सृष्टि करती है, जिससे वे मिलन यामिनी की इन पंक्तियों को सार्थक करती हुई-सी लगती हैं—जो असंभव है, उसी पर आँख मेरी, चाहती होना अमर मृत राख मेरी।

संत जोन के अनुवाद में चाक्षुष, ध्वानिक एवं अन्य प्रभावों को लुप्त होने से बचाने का प्रयास भी किया गया है। नाटकीय सामग्री की पृष्ठीय दृश्यावली, पात्रों के मनोभावों को भौगोलिक मनोभूमि तथा सांस्कृतिक छटाओं के सात्यिक रूपायन से अनुवाद में अधिकतम पूर्णता लाने की कोशिश की गई है। नाटक में जहाँ एक जगह पद्य आया है, वहाँ अनुवाद में उसके भाव के साथ-साथ उसकी ध्वन्यात्मकता को भी बखूबी बरकरार रखा गया है और परिस्थितिजन्य वातावरण बनाए रखने के अतिरिक्त सै एवं धर्म संबंधी परिवेशगत आवश्यकता को मूल से कहीं बेहतर ढंग उभारा गया है :

Rum rum trumplendum	ढम ढम ढम ढम ढम ढम
Bacon fat and rumplendum	अकड़ बकड़ बायें मुड़ो
Old Saint Mumplendum	बकड़ अकड़ दायें मुड़ो
Pull his tail and stumplendum	संत तुम्हारे साथ हैं
O My Ma——— ry Ann ?	माँ मेरी का प्यार है।

नाटक में उनकी भाषा की भाव-प्रवाहमयता का एक नमूना देखने लायक है—**"क्या आप मुझे यह कह कर डराना चाहते हैं कि अकेली हूँ। फ्रांस अकेला है और ईश्वर अकेला है। मेरे देश और मे ईश्वर के एकाकीपन के सामने मेरा एकाकीपन क्या है ? मैं समझ हूँ कि ईश्वर का एकाकीपन ही उसकी शक्ति है।"**

नाटक का अनुवाद भावात्मक अनुवाद का एक प्रमुख रूप होता है इसके विपरीत भावात्मक अनुवाद, अनुवाद के क्षेत्र में बहुत देर के बा प्राप्त होने वाली दक्षता है। अनुद्य सामग्री शब्दों का एक जाल होती है जिससे निकल पाना आम अनुवादक के वश की बात नहीं होती। **संत जो** का अनुवाद देखने से प्रतीत होता है कि इसमें श्रीमती खन्ना ने कथ्य व गहन स्तर पर विश्लेपण किया है और उसके उद्देश्य की खोज की है। इ प्रकार वे शब्दानुवाद से बहुत ऊपर उठ गई हैं। उन्होंने नाटक की सामग्र को आधार तो बनाया है, परन्तु वे किसी भी मायने में उसके कोशीय अथव व्याकरणिक अर्थ से प्रभावित नहीं हुई। ऐसे भाव-सागर में गोता लगाकर ऐसे माणिक ढूँढ़ कर लाई हैं, जिनसे हिन्दी भाषा में **संत जोन** के रूप एक नए भाव-संसार की रचना हुई है। वे नाटक के कथ्य से निर्लेप रही हैं जिस कारण वे इसके अनुवाद की हर प्रकार की समस्याओं, दुरुहताओ दुर्बोधताओं आदि से मुक्त रहीं और अनुवाद साधना की अंतिम अवस्था के निकट पहुँचती हुई लगती हैं।

बर्नार्ड शाह ने इस नाटक की 52 पृष्ठों की एक लम्बी प्रस्तावन लिखी है, जिसमें उन्होंने जोन के जीवन, अदम्य साहस, कर्मठता तथ तत्कालीन धार्मिक एवं सामाजिक परिस्थितियों का संतुलित विश्लेषण किय है। हिन्दी भाषी भारतीय पाठकों की बात तो दूर, इस प्रस्तावना क अनुवाद अंग्रेजी भाषी पाठकों पर भी मूल की अपेक्षा कहीं अधिक प्रभाव छोड़ता है।

नाटक के वक्तव्य में डॉ० रमेश गौतम ने कहा है— "नाटक में श्रव्य पक्ष (नाटकीय शब्द, भाषा, अनुवाद) द्वारा संघर्ष (कार्य, गतिमयता) को बखूबी उभारने की क्षमता बहुत कुछ अनुवाद में संभव हो पाई है XXX XXX संवादानुवादों का रंग संस्कार करने के सार्थक प्रयास मे अनुवादक की रंग दृष्टि की छाया स्पष्ट दिखलाई देती है, जिससे उन्होंने हिन्दी रंग कर्म को भी एक अनुभव से साक्षात्कार करने का मौका दिय है।" डॉ० पूरन चंद टंडन ने इसी नाटक के आवरण पृष्ठ पर कहा है—

युगांतरकारी नाट्यवस्तु से सम्पन्न इस विलक्षण नाट्यकृति का जीवन्त हिन्दी में सार्थक अनुवाद करके श्रीमती संतोष खन्ना ने अनूदित नाट्य श्रृंखला के लिए ही नहीं, अपितु संपूर्ण नाट्य जगत के लिए एक स्तुत्य एवं श्लाघनीय कार्य किया है।

विदुषी अनुवाद-कृत्रि ने संत जोन के माध्यम से अनुवाद को एक नया आयाम देकर अनुवाद क्षेत्र को अपूर्व योगदान दिया है। इस कार्य से वे उन लोगों के कथनों को ध्वस्त करती हुई-सी लगती हैं, जिन्होंने अनुवाद कार्य को विवेकहीन, असंगत विचार, असंभव कार्य आदि कहा है। ऐसी धारणाओं के विपरीत उन्होंने सेंट जोन को आंगल जमीन से उठाकर हिन्दी साहित्योद्यान में सदा के लिए रोपित किया है और अनुवाद एवं काव्य दोनों के सौंदर्य को स्थायित्व प्रदान किया है। मेरा विश्वास है कि यह अनुवाद समय आने पर अपना एक अलग स्थान बनाएगा। इसे केवल अनुवाद के रूप में नहीं देखना चाहिए, बल्कि हमें इसका स्वरूप राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर स्वीकारना होगा, क्योंकि इसने सांस्कृतिक संबंधों के विकास में अपनी महती भूमिका निभाई है। इस कृतित्व से दूसरी भाषा में संचित ज्ञान और उस भाषा की संस्कृति से अपने देशवासियों से परिचित कराने की उनकी उत्कंठा के साथ-साथ कुछ नया कर दिखाने की भावना का भान होता है। विश्व साहित्य के इस चिरंतन सार्वभौमिक ग्रंथ का अनुवाद करके उन्होंने हिन्दी भाषा की समृद्धि में भी अपना योगदान दिया है और हिन्दी की सक्षमता को निर्विवाद रूप में सिद्ध किया है।

उपसंहार के रूप में कहा जा सकता है कि अनुवाद में सरसता एवं संपूर्णता के दर्शन होते हैं। कहीं-कहीं पाई गई प्रूफ रीडिंग व भाषिक अशुद्धियाँ भी इसके इन तत्वों को प्रभावित नहीं कर पाती। कुल मिलाकर यह अनूदित नाटक पढ़ने लायक है। इसके पढ़ने से देश-भक्ति की प्रेरणा मिलती है और जोन की भाँति देश के लिए कुछ कर गुजरने के लिए पाठक के मुख-मंडल पर ओज एवं तेज दमकने लगता है। साहित्य अकादमी, भारतीय अनुवाद परिषद, यूनेस्को आदि संस्थाओं को सांस्कृतिक एकता एवं सद्भाव को बढ़ावा देने के लिए इस अनुवाद को समुचित प्रोत्साहन देना चाहिए। इस कृति के प्रति यही सही भावांजलि होगी।

रमेश चन्द

—उपनिदेशक (हिन्दी)
भारतीय मानक ब्यूरो, मानक भवन,
नई दिल्ली-110002.

देस परदेस

[पुस्तक : देस परदेस, लेखक : बाला शर्मा, मूल्य : 86/-, संस्करण : प्रथम, 1998, प्रकाशक : वातायन प्रकाशन 73, बनारसीदास एस्टेट, लखनऊ रोड, दिल्ली-110054]

आज आतंक का माहौल चारों ओर पसरा हुआ है आम जनजीवन इससे बुरी तरह तबाह है। इन सब से लेखक वर्ग अछूता नहीं हैं। बीसवीं सदी की इस त्रासदी पर लेखिका बाला शर्मा ने अपना उपन्यास लिखा है। उपन्यास में लेखिका ने आतंक के साम्प्रदायिक दंगों से लेकर अन्तर्राष्ट्रीय गिरोह के चंगुल में फंसे मजबूर निरीह, निर्दोष लोगों की दास्तान को उजागर करने का प्रयास किया है।

यह उपन्यास संस्मरणात्मक है जिसे नायिका शुभा के बीते दिनों की यादों के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। शुभा का अतीत विवशता का इतिहास है। यह विवशता उसके अपने बच्चे-पति की जीवन रक्षा से जुड़ी है। यह बेबसी अनेक गंभीर परिस्थितियों में उसे निरीह बनाती है। उसकी आंखों के सामने सोलह वर्षीय किशोर रणधीर की जघन्य हत्या की जाती है। वह उन बलवाईयों को पहचानती है पर आजीवन मुंह न खोलने को विवश होती है। अन्तर्राष्ट्रीय माफिया गिरोह में फंसी पिमी से दोस्ती का वास्ता वह नहीं दे सकती है। रीटा कमाल के मामले में शुभा कुछ नहीं कर सकती क्योंकि रीटा यूनुस कमाल नामक आतंकवादी की बेटी है। आतंक का साया आम आदमी के जीवन में इस कदर छाया हुआ है कि वह भावनाओं को ताक पर रख कर समाज के प्रति अपनी सारी जिम्मेदारियों को भूलकर सिर्फ अपने विषय में सोचता है। फिर भी श्रीष, शुभा के पति, अपना सामाजिक फर्ज निभाते हैं। रीटा कमाल को पुलिस के चंगुल से आजाद कराते हैं।

आतंक के माहौल में शुभा की पर्यवेक्षक के रूप में उपस्थिति और उसकी घुटन के आलावा, आतंक के विभिन्न पहलुओं को भी उभारने का प्रयास किया गया है । राजनीति का घिनौना खेल कैसे निरीह लोगों को आतंकवादी बनने के लिए मजबूर करता है यूनस कमाल इसकी मिसाल हैं। हालांकि लेखिका आतंकवादी गतिविधियों से जुड़ी अनेक घटनाओं का जिक्र करती है । पर इन सारी घटनाओं के बीच आपसी तालमेल बिठा पाने में असफल है । "यही से शुरू होता है महाविनाश, यही से शुरू होता है विलंगवाद" जैसे तकियाकलाम वाक्यों का बार-बार प्रयोग कर लेखिका पाठकों की उत्सुकता को जगाने का प्रयास करती हैं पर बाद की घटनाएं महाविनाश की शुरूआत के लिए खोदा पहाड़ निकली चुहिया जैसी प्रतीत होती हैं । अलावा इसके कुछ-कुछ पात्र उपन्यास में अचानक अवतरित हो जाते हैं जिनका परिचय या घटनाओं से रिश्ता समझ के परे हो जाता है।

इसके बावजूद लेखिका की भाषा आश्वस्त करती है । वह विभिन्न पात्रों के अन्तर्द्वन्द को उभारने में सफल है। खासकर शुभा के हिस्से की बेबसी और आतंकित मनःस्थिति मुखर हैं । हमारे समाज में अनेक शुभाएं हैं जो चीखना चाहती हैं पर चीख नहीं पाती । आतंक उनकी चीख को बुरी तरह जकड़ चुका है । आतंक किसी न किसी रूप में हर घर के दरवाजे पर दस्तक दे रहा है । गली, मुहल्ले, सड़कों, देश परदेश सभी जगह हम इस कुचक्र से किसी-न-किसी रूप में जकड़ चुके हैं । यही सब बातें इस उपन्यास को पठनीय बनाती है ।

—स्मिता
26-ए, ऊना एनक्लेव, मयूर विहार, फेज-I
नई दिल्ली ।

चढ़ते पानी से बाखबर

[पुस्तक : चढ़ते पानी से बाखबर, लेखक : श्री महाराज कृष्ण काव, प्रकाशक : किताबघर, 24 अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली]

"चढ़ते पानी से बाखबर" कविता संग्रह की कविताओं में श्री महाराज कृष्ण काव ने दुःस्वप्नों में सूंजे सुने हुए संगीत के त्रासद भावों को

कविताओं में लयबद्ध किया है । उन जजबातों को लिख सकना वस्तुत : एक दुष्कर कार्य है । अंग्रेजी के प्रसिद्ध कवि पी.बी. शैली की लिखित पंक्तियां याद आ जाती हैं । यह कहा जा सकता है कि श्री महाराज कृष्ण काव के चढ़ते पानी में एक बाखबर विशालकाय दर्पण के सामने छितराए हुए दृश्य हैं । काव्य संग्रह चढ़ते पानी से बाखबर में पी.बी. शैली की पंक्तिया मेरे मधुरतम गीत वे हैं जो मेरे सबसे उदास भावों की याद दिलाते हैं, अक्षरश लागू है ।

महाराज कृष्ण काव द्वारा लिखी कविता नाम एक सैरगाह में माँ के लिये कितनी श्रद्धा तथा आदर व्यक्त है । कुछ पंक्तियां उद्धृत हैं :—

तुम्हारे लिये बस नाम,
एक सैरगाह होगी कश्मीर,
झील, बरफ, पहाड़,
हरियाली होगी कश्मीर
मेरी तो माँ है—
पहाड़ दूध भरे स्तन,
झरने शरीर में बहता हुआ रक्त ।

उपर्युक्त को पढ़ने के पश्चात आदिकवि महर्षि बाल्मीकि द्वारा रचित रामायण के लंकाकाण्ड में राम द्वारा विभीषण को कही गई अद्योलिखित पंक्ति याद आ जाती हैं ।

जननी जनम भूमिश्च स्वर्गाद अपि गरीयसी ।

उपर्युक्त का अर्थ है जननी (माँ) तथा जन्म भूमि (मातृभूमि) स्वर्ग से भी बढ़कर प्रिय होती है । तभी तो महाराज कृष्ण काव कवि ने कविता नामक एक सैरगाह में कहा है कि यद्यपि यायावर के लिये तो वह कश्मीर की भूमि सैरगाह है मगर कवि के लिए वह माँ है ।

''लहराना'' कविता में कवि का संदेश है कि लहर का कार्य तो लहराना ही है मगर कोई अगर यह सपना देखे कि लहर ठहर जाएगी तो यह मात्र दिगस्वप्न है । कविता की पंक्तियां उद्धृत हैं :—

लहरों के कगारों पर बैठा कोई देखे अगर सपना,
लहर आए ठहर तो महज सपना है ।
ढह जाते कतार बह जाते पदासीन,
पीछे आते पानी के कतरे कई बार होते,
गलतफहमी के शिकार
पदासीन गिराया उनने कोरा भरम है,
लहर का तो लहराना ही धर्म है ।

उपर्युक्त लहराना कविता की पंक्तियों में यह नाम निहित है कि जैसे लहर अपना स्वभाव नहीं छोड़ती, सतत लहराती है, मनुष्य को भी सतत कर्म करना चाहिये ।

'बेरोजगार' कविता में बेरोजगार की दयनीय स्थिति पर महाराज कृष्ण काव ने लिखा है :— 'बेरोजगार क्या कर सकता है ? बस नौकरी की तलाश उसका बूढ़ा बाप ? विधायक की खुशामद ।'

विधायक : अफसर को सिफारिश
अफसर : सिफारिशों में चुनाव
नौकरियाँ : हजार में एक की तुष्टि
नौ सौ निन्यानवे युवक क्या कर सकते हैं ?
बेबसी का वरण ।

—घनश्याम तिवारी,
एच-133, फ्लैट नं० 29, सेक्टर 3, रोहिणी,
नई दिल्ली

एक और तथागत :ओजस्वी खण्डकाव्य

[पुस्तक : एक और तथागत (खण्ड काव्य), लेखक : राधेश्याम बन्धु, प्रकाशक : समग्र चेतना, बी-3/163 यमुना विहार, दिल्ली-53, पृष्ठ-96, मूल्य : 80/-]

नवगीत के सशक्त कवि राधेश्याम जायसवाल बन्धु ने ''एक और तथागत'' खण्डकाव्य की रचना करके आज के समय की बहुत बड़ी मांग की पूर्ति की है । वह भी केवल इतिवृत्तात्मक ढंग से ही न लिखकर, खण्डकाव्य को आज के समसामयिक संदर्भों में प्रस्तुत करने का बड़ा रोचक और सार्थक प्रयास किया है । शीर्षक से तो यह बुद्ध से सम्बंधित कथानक लगता है किन्तु यह एक बिल्कुल अर्वाचीन सामाजिक खण्डकाव्य है । इसका कथानक पांच सर्गों में विभाजित है—अलग-अलग 'निर्वेद-पर्व,' ''आत्मसंघर्ष पर्व,'''चिन्तन पर्व,'''अभियान पर्व,'' और ''विजय पर्व,'' नामों से अभिहित किया गया है । सर्ग में भिन्न-भिन्न मात्रिक छंदों का प्रयोग किया गया है। कहीं-कहीं गीतों को देकर गीतकाव्य का भी सौंदर्य प्रदान किया है। नायक-नायिका के रागात्मक प्रसंगों को यदि कोमल शब्दों में व्यक्त किया गया है तो जीवन-संघर्षों, सामाजिक सरोकारों को व्यक्त करने के लिए ओजस्वी काव्य का प्रयोग किया गया है।

नायिका-नायक से बिछुड़ने के बाद भी उसे भूल नहीं पाती । वह रात-रात भर अमर की याद में जागती रहती है और दुखों के अंधकार में भी जीने का मार्ग तलाशती है ।

''सबको नित्य जगाती थी जो, उसको कौन जगाता था ?
जो सबको कर प्यार हंसाती उसको कौन रूलाता था ?''

ये पंक्तियां सरागात्मक प्रेरणा देकर जहां फिर-फिर नये उत्साह से जीना सिखाती हैं वहीं निम्न पंक्तियां वैचारिक संघर्ष को ऊर्जा भी प्रदान करती हैं ।

''याचक से याचना करूँ क्यों, एकाकी ही जी लूंगी
कलम चलाकर स्वेद बहाकर, घाव स्वयं ही सी लूंगी ।''

इस खण्ड काव्य का नायक अमर सिंह बिठूर का रहने वाला एक युवक है और शिक्षित होने के बाद भी गरीब बेकार है । किसी तरह ट्युशन आदि से गुजारा करता है । उसके ऊपर बुद्ध-दर्शन का बहुत प्रभाव है । वह प्राय: दुखों से परेशान होकर अपनी पत्नी ऊषा से सन्यास लेने की बात करता है और एक दिन सचमुच अपनी पत्नी और पुत्र राहुल को सोता हुआ

छोड़कर घर से सन्यास लेने के लिए निकल पड़ता है । जब सुबह ऊपा की नींद खुलती है तो पति को न पाकर घबड़ा जाती है । फिर राहुल को लेकर पति की खोज में निकल पड़ती है ।

इधर अमर भी घर से भागकर चैन नहीं पाता है। उसकी आत्मा बार-बार उससे सवाल करती है कि क्या आज भी सारी समस्याओं का समाधान केवल सन्यास लेने से या कन्दराओं में तपस्या करने से मिल जायेगा ? तब उसकी अन्तरात्मा उसको जबाब भी देती है कि सन्यास लेने से ही सारी समस्याओं का हल नहीं मिल सकता। यह तो कायरता है, पलायन है। सारी समस्याओं का समाधान तो हमें इसी समाज में रहकर तलाशना होगा और समाज में ही संघर्ष करके उसे रहने लायक बनाना पड़ेगा। बुद्ध का रास्ता आज के लिए प्रासंगिक नहीं हो सकता।

इस अन्तर्द्वन्द्व से नायक को अपने कर्तव्य का ज्ञान हो जाता है और वह पुन: समाज में वापस आ जाता है किन्तु वह अपने घर नहीं जाता बल्कि लखनऊ जाकर क्रान्तिकारियों के दल में सम्मिलित हो जाता है। धीरे-धीरे अपने सूझ-बूझ से दल का नेता भी बन जाता है । अब दल के लोग उसे ''भारत'' के नाम से पुकारते हैं। ''भारत'' समाज में व्याप्त हर भ्रष्टाचार, अन्याय और उत्पीड़न का विरोध करता है और उनको समाप्त करने का अभियान निष्ठापूर्वक चलाता है।

इधर चुनाव की घोषणा हो जाती है और भारत कारा में रहते हुए भी चुनाव में विजयी घोषित हो जाता है। साथ ही भारत दल के सदस्य भी बहुमत में विजयी होकर संसद में पहुँचते हैं। ''भारत'' प्रधानमन्त्री बनता है और जनता को स्वच्छ प्रशासन और सुख समृद्धि देने का सपना पूरा करता है।

दूसरी तरफ नायिका ऊपा भी जीवन के संघर्षों के पीछे नहीं रहती है और अध्यापन करके जीविकोपार्जन तो करती ही है साथ ही अपने छात्रों को बहादुर और देशभक्त बनने का पाठ पढ़ाती है। अन्त में भारत का जब नागरिक अभिनन्दन किया जाता है तो वहां ऊपा और राहुल भी मौजूद थे। भारत का वहीं राहुल और ऊपा से चमत्कारिक मिलन हो जाता है।

इस प्रकार ''एक और यथागत'' सुखान्त खण्डकाव्य के रूप में पूरा होता है। जहाँ यह एक सामाजिक चेतना का संघर्षशील कथानक है वहीं यह एक सशक्त राजनैतिक व्यंग्य भी है। जहां इसमें एक तरफ सत्ता और भ्रष्ट नेताशाही पर कटाक्ष किया गया है वहीं चुनावी हथकंडों को भी बेनकाब किया गया है। इस प्रकार कवि ने खण्डकाव्य को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से रचनात्मक दिशा देने का भी प्रयास किया है। इसके माध्यम से निराश युवापीढ़ी को आज के नये मूल्यों से अवगत होने, देश की मुख्यधारा से जुड़ने की प्रेरणा मिलेगी और प्रतिक्रांतिवादी शक्तियों से निपटने को सही दिशा भी मिलेगी।

एक तरफ यहा जहां राष्ट्रीय और सामाजिक जागरण का मंत्र फूकता है वहीं शिल्प तथा सोच के स्तर पर भी पाठक को प्रभावित करने की क्षमता रखता है।

''हर मनुज बुद्ध बन सकता, कर्मों के घर में तपकर,
हर सुबह लाल मिलती है, सूरज सातम से लड़कर,''

भापा की सहजता और ओज-गुण के कारण खण्डकाव्य पाठकों के लिए पठनीय है। पुस्तक की साज-सज्जा भी आकर्षक है।

आशीष जायसवाल
सी-4 सी/112, पाकेट-14, जनकपुरी
नई दिल्ली -58

मुम्बई से रोम

[पुस्तक का नाम-''मुम्बई से रोम'' मोटरसाइकिल पर : लेखक-प्रवीण कारखानीस : अनुवाद-मुरली धर जगताप : पृष्ठ-120, मूल्य-120 रुपये : प्रकाशक-जीवन प्रभात प्रकाशन, मुम्बई-400063]

''मुम्बई से रोम'' तक का यह प्रवीण कारखानीस तथा उनके साथियों का एक सुन्दर यात्रा विवरण है। यह यात्रा एक विशेष प्रकार की है- मोटर साइकिल पर यात्रा करना, कोई साधारण कार्य नहीं है। इससे बहुमुखी अनुभव अवश्य प्राप्त होते हैं। इनसे प्राप्त शिक्षा और अनुभव किसी विद्यालयीन प्रशिक्षण और अनुभूति से कम नहीं होते। भिन्न-भिन्न देशों के भिन्न-भिन्न लोगों से मेल होता है। उनके आचार, विचार, परम्पराओं और भाषाओं, हाव-भावों को सीखने का अवसर मिलता है। तत्सम्बन्धी वाणिज्य, व्यापार, अर्थव्यवस्था को समझने का अवसर मिलता है परन्तु जोखिम भी कम नहीं होते हैं।

श्री प्रवीण कारखानीस का यात्रा विवरण भी एक अनूठा और आकर्षक प्रयास है उन्होंने अपने-सात मित्रों के साथ, 22500 कि.मी. की लम्बी यात्रा मोटर साइकिल पर एक सौ पचास दिनों में सफलतापूर्वक सम्पन्न की। यह यात्रा 1977 में की गई थी। भिन्न-भिन्न देशों का बहुमुखी वर्णन अपनी मिसाल आप है। आश्चर्य की बात तो यह है कि बीस वर्ष के अन्तराल के उपरान्त इसका हिंदी अनुवाद देखने को मिला। अनुवाद बहुत अच्छी प्रकार से हुआ है। ऐसा प्रतीत होता है कि हम यात्रा विवरण मूल रूप से पढ़ रहे हैं। केनवस पर एक चित्र की भांति विवरण चलता है। भिन्न-भिन्न देशों की कार्य प्रणाली, उनके आचार-विचार, सभ्यता, संस्कृतियों का इसमें अच्छी प्रकार से उद्घाटन हुआ है। एक बात बड़ी अच्छी प्रकार से स्पष्ट हो गई है कि आपसी बातचीत में यदि भाषा सहायक नहीं हो पाती तो संकेतों, चित्रों आदि के माध्यम से कार्य चलाया जा सकता है। यह भ्रान्ति भी निर्मूल सिद्ध हो गई है कि अंग्रेजी सब देशों में बोली जाती है। वस्तुस्थिति यह है कि इसके बिना भी काम चलाया जा सकता है। यह भी स्पष्ट हो गया है कि इन देशों के लोग अंग्रेजी के बिना ही अपना काम चला रहे हैं, उन्नति भी कर रहे हैं।

इन्हें कई देशों में स्थित भारतीय दूतावासों से सम्पर्क भी करना पड़ा। कई स्थानों पर तो वे काफी सहायक रहे, परन्तु कहीं-कहीं उदासीनता का रूख भी देखना पड़ा। विदेशों में स्थित हमारे दूतावासों पर यह एक सटीक टिप्पणी है। हमारे दूतावासों को अपनी मान्यताओं परम्पराओं, अपनी भाषा के विकास में सक्रिय भूमिका निभानी चाहिए।

जिस-जिस देश में यात्रियों की टीम गई उनके सम्बन्ध में सुन्दर उल्लेख इस पुस्तक में उपलब्ध है। इन्हें, सर्वत्र आत्मीयता पूर्ण व्यवहार

मिला। भारत का नाम सुनकर वे लोग उछल पड़ते थे। ईरान का उल्लेख करते हुए वे लिखते हैं-''यह स्वागत न भूतो न भविष्यति'' था। हमारी आँखें प्रसन्नता से छलछलायी- वे ईरानी थे जिन्होंने कभी हमें देखा तक न था फिर भी आत्मियता मिली।

इटली के सम्बन्ध में लिखते हैं-''पिछली दो शताब्दियों से विज्ञान में अग्रणी है,..... गुरूत्वाकर्षण सम्बन्धी सिद्धान्त प्रस्तुत करने वाले गलिलिओं को भला कौन नहीं जानता.... (1957, 1959,1963 में नोवेल पुरस्कार इटली के वैज्ञानिकों ने हासिल किए थे। जब कि इनमें से किसी को भी 'ज्ञानभँडार की कुँजी'- मानी जाने वाले अंग्रेजी नहीं आती'' उनके कार्य-कलाप में किसी प्रकार की बाधा नहीं थी। यात्रा के दौरान आने वाले देशों का इन्होंने सजीव चित्र प्रस्तुत किया है। लेखक ने यह स्पष्ट किया है। इन सभी को अपने परिवेश, भाषा, सभ्यता तथा संस्कृति पर गर्व है। पुस्तक की भाषा सुन्दर एवं सरस है। अनुवाद होते हुए भी मूल पुस्तक का आभास होता है। इसके लिए अनुवादक भी बधाई के पात्र हैं।

लेखक का प्रयास सराहनीय है। यात्राओं के विवरण से विभिन्न देशों के रीति-रिवाजों, परिपाटियों का अच्छा ज्ञान हो जाता है। इस सुन्दर, ग्राह्य, जानकारी देने के लिए लेखक बधाई के पात्र हैं।

एम.एल. मैत्रेय
परामर्शदाता (रा.भा.)
35, सुखधाम अपार्टमैन्ट, सेक्टर-9,
रोहिणी, दिल्ली-85

हिन्दी साहित्य : रचना और परिवेश

[पुस्तक—हिन्दी साहित्य : रचना और परिवेश, लेखक : डॉ० कृष्ण बिहारी मिश्र, प्रकाशक : ईस प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण: प्रथम 1998, मूल्य : पचास रुपए, पृष्ठ : 144]

कुछ वर्षों से साहित्यिक और काव्यशास्त्रीय आलोचना को लेकर प्रकाशित हो रही पुस्तकों में एक नयी विधा दिखाई दे रही है। इधर पिछले दिनों ऐसे कई ग्रन्थ प्रकाश में आए हैं, जिनमें या तो किसी एक विषय से सम्बद्ध पक्षों पर अलग-अलग विद्वानों के लेखों का निबन्धन हुआ है, या फिर अलग-अलग विषयों या पक्षों पर किसी एक विद्वान के लेखों का निबन्धन। प्रस्तुत ग्रन्थ दूसरी कोटि में रखा जा सकता है इसमें हिन्दी साहित्य के सुप्रसिद्ध विद्वान् डॉ० कृष्ण बिहारी मिश्र के ऐसे बीस लेखों का संकलन है, जो हिन्दी साहित्य के विशिष्ट कवियों की रचनाओं और हिन्दी कविता या लेखन के परिवेश सम्बन्धी चिन्तन से जुड़े हुए हैं। निश्चय ही लेखों का विषय बहुआयामी और गम्भीर है, इसलिए ग्रन्थ का नाम सर्वथा समीचीन और संगत बैठता है।

ग्रन्थ बिना किसी भूमिका के प्रारम्भ हो रहा है, यह यद्यपि अटपटा लगता है, तथापि हिन्दी के प्रसिद्ध रचनाकारों और हिन्दी आलोचकों के अनछुए पक्षों पर लेखनी चलाने वाले विद्वान् लेखक के प्राक्कथन के कथ्य को अर्थहीन या अनावश्यक-सा बना देता है, जब हम उनके लेखों के अध्ययन और अधिग्रहण में प्रवृत्त होते हैं। प्रथम लेख है—'मानस की मौलिकता—एक नवीन समाज दर्शन'। सामाजिकता और नैतिकता की पारस्परिकता का अवमूल्यन समाज दर्शन के विश्लेषण का अंग है। ऋग्वेद, उपनिषद, रामायण, गीता और संस्कृत की प्रसिद्ध कृतियों से उद्धरण देकर लेखक ने अपनी बात की पुष्टि व समर्थन किया है। लेख का प्रारम्भिक भाग सचमुच एक प्राञ्जल निबन्धांश जैसा है, जिससे मौलिक किन्तु शाश्वत विचारों का उद्घाटन हो रहा है। रामचरितमानस की मौलिकता के चिन्तन में लेखक ने मौलिक चिन्तन करते हुए कई नयी दृष्टियां सामने रखी हैं यथा युगीन प्रभाव, किंवा आध्यात्मिक अवधारणाओं के वशीभूत होकर तुलसी ने नारी उपेक्षा विषयक कुछ वाक्य कह दिए हैं, अन्यथा उनके मानसिक और चारित्रिक गुणों को यथास्थान स्वीकार किया है। इस लेख में सम्पूर्ण चिन्तन सामाजिक दृष्टिकोण को ध्यान में रखकर किया गया है, जो एक उच्चकोटि के शोधग्रन्थ के लिए दिशा निर्देश का काम कर सकता है।

मुगल काल के सामन्ती साधक रहीम पर लिखे लेख में उनको भक्तिभाव और लोकभावना से एक-साथ जुड़ा हुआ सिद्ध किया गया है। यथास्थान दोहों को उद्धृत करके लेखक ने सभी पक्षों पर निकाले गए निष्कर्षों को प्रमाणित करने का प्रयास किया है। रीतिकालीन कवि बिहारी के सौन्दर्य चित्र, आधुनिक युग के सुप्रतिष्ठित कवि निराला के काव्य का आन्दोलन, छायावादी काव्य की प्रणेत्री महादेवी का मानवीय आदर्शों के लिए संघर्ष, भवानी प्रसाद मिश्र की काव्यभाषा, डॉ० पीताम्बर दत्त बड़थ्वाल का क्रान्तदर्शी आलोचक रूप, प्रेमचन्द का सामाजिक क्रान्ति का अग्रदूत का रूप, और हिन्दी आलोचना की परम्परा में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल—कुछ दूसरे लेखों के विषय हैं, जो किसी भी कवि या लेखक के समग्र व्यक्तित्व एवं कृतित्व की पृष्ठभूमि में किया गया एकपक्षीय और पूर्णतया नूतन चिन्तन है। कुछ निबन्ध किन्हीं काव्यकृति या कविता संग्रह की समीक्षा जैसे हैं। कुंवर नारायण की काव्यकृति 'आत्मजयी' पर निबन्ध लिखते हुए डॉ० मिश्र उसे निष्पक्ष होकर एक मिथक प्रयोग कहने से नहीं हिचकिचाएं हैं, तो 'नैषध' नामक ग्यारह कवियों के काव्य संकलन को उन्होंने निसंकोच भाव से दिशाहीन विद्रोह की कविता शीर्षक से ही समालोचित किया है। इस प्रकार एक कवि या काव्यकृति को अपने अध्ययन और समालोचन का विषय बनाकर उसके तत्वविषयक गहन शोध को निबन्धित करते हुए डॉ० मिश्र ने अर्जुन के लक्ष्य के लिए 'चिड़िया की आंख' जैसी सूक्ष्म एकाग्रता का परिचय दिया है।

समालोचक के लिए जितना आवश्यक हो एकांगी सूक्ष्म समालोचन; उतना ही अनिवार्य है—बृहत् धरातल पर किया गया समग्र किन्तु सारगर्भित मंथन। दोनों के लिए तीव्र चिन्तनगति अपेक्षित है, किन्तु एक का फल भावचिन्तन है तो दूसरे का फलयुगीन कलाचिन्तन। डॉ० कृष्ण बिहारी मिश्र जैसे उद्भट लेखक ही इस प्रकार के द्विविध समालोचक हो सकते हैं। उन्होंने अपने निबन्ध संग्रह में रीतिकालीन कवियों का काव्य शास्त्रीय चिन्तन, हिन्दी कविता और गांधीवाद, आधुनिक हिन्दी कविता में प्रयोगवाद, प्रगतिवादी कविता का विकास, नई कविता—मूल्यांकन की मुद्राएं, वाम कविता की पहचान, द्विवेदीयुगीन काव्य-परिवेश, अवधी की संघर्षशील कविता में तुलनात्मक समालोचना—नामक शीर्षक से लिखे गए निबन्धों में अपनी सशक्त लेखनी द्वारा अपनी धीर-गंभीर प्रतिभा का परिचय देते हुए हिन्दी साहित्य के मर्म और सर्वस्व को पाठकों के समक्ष सरल, सुबोध और आकर्षक भाषा में रख दिया है। हिन्दी साहित्य और हिन्दी समीक्षा के

अनेक विषयों पर लिखे गए ये छोटे-बड़े निबन्ध शोधपूर्ण गवेषणात्मक मीमांसा को ही सामने ला रहे हैं। मंजी हुई भाषा और सारगर्भित शब्दावली से इनका महत्व बढ़ गया है। हिन्दी के शोधार्थियों के लिए यह एक उपयोगी निबन्ध-संग्रह है।

'हिन्दी साहित्य : रचना और परिवेश' नामक इस ग्रन्थ से डॉ० मिश्र की हिन्दी समालोचना के क्षेत्र में एक अलग पहचान उभर कर सामने आ रही है। निस्सन्देह हिन्दी जगत् को उनसे भविष्य में इस प्रकार के और ग्रन्थों की आशा बनी रहेगी।

ग्रन्थ की साजसज्जा, कलेवर और मुद्रण आकर्षक हैं।

—डॉ० शशि तिवारी
रीडर, मैत्रीय कालेज,
दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

अनुभूति के आयाम

[पुस्तक : अनुभूति के आयाम, लेखक : बद्री प्रसाद गुप्त, प्रकाशक : साहित्य भण्डार, 50, चाहचंद, इलाहाबाद-3, मूल्य : 40 रु०]

सहज स्फूर्त भावों के उद्वेलन का नाम है कविता। कवियत्री प्रतिभा संपन्न हृदय को जब कोई भाव, कोई वस्तु या कोई घटना स्पर्श करती है तो वह अनुभूति अभिव्यक्ति बनकर स्वयं शब्दों के सांचे में ढलकर कविता का रूप ले लेती है। अनुभूति की अभिव्यक्ति का ही संग्रह है 'अनुभूति के आयाम'। 1956 से लेकर 1992 तक लिखी गई चुनिंदा कविताओं का संग्रह है—'अनुभूति के आयाम'। श्री बद्री प्रसाद गुप्त की संवेदशीलता और सृजनशीलता का परिचायक है 'अनुभूति के आयाम'।

कवि के अनुसार उनका लेखन 'स्वान्तः सुखाय' रहा है किन्तु इस संग्रह की कविताएं साक्षी हैं कि ये कविताएं व्यक्तिनिष्ठ ही नहीं वस्तुनिष्ठ भी हैं; स्वान्तः सुखाय ही नहीं जनकल्याण से भी सम्बद्ध हैं। कवि की वैयक्तिक अनुभूतियों के साथ-साथ उसकी राष्ट्र चेतना और उससे जुड़ी अन्य संवेदनाएं कवि के मानस को मंथती हैं, उसे व्यथित और बेचैन करती हैं। इस संग्रह की 'एक प्रवासी की भारत वापसी', 'कलियुगी महाभारत', 'भयक्रांत पत्रकारिता', 'बीसवीं सदी', 'समाजवाद', 'अभूषण बनाम आभूषण' आदि कविताएं इस तथ्य की साक्षी हैं। ये कविताएं स्वातंत्र्योत्तर भारतीय समाज, राजनीति और व्यक्ति संबंधों में आए परिवर्तनों, विसंगतियों और विद्रूपताओं को व्यंग्य के माध्यम से अभिव्यक्त करती हुई कवि की समाज और राष्ट्र से प्रतिबद्धता को उद्घाटित करती है। राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रति कवि का मोह, सम्मान और अनुराग भी 'हिन्दी-हिन्दी-हिन्दी' तथा 'हिन्दी सब की जान है' जैसी कविताओं में छलकता है। हिन्दी कवि के अनुसार :—

"हिन्दी भाषा, भारतवासी की अपनी पहचान है।
हिन्दी का अपमान, हमारी माता का अपमान है॥"

प्रकृति का सुरम्य वातावरण कवि के संवेदनशील हृदय को अपनी ओर आकर्षित किये बिना नहीं रहता। प्रकृति सदैव कवि के भावों का आलंबन बनती रही है; बद्रीप्रसाद गुप्त का कवि व्यक्तित्व भी इसका अपवाद नहीं है। विभिन्न ऋतुओं में प्रकृति की सुषमा कवि को बरबस अपनी ओर आकृष्ट कर लेती है और कवि के अन्तर्मन से फूट पड़ता है—'व्याकुलता कम करने को, है वर्षा ऋतु आई'। कवि को प्रकृति पवित्रता, विश्व बंधुत्व का और सदाचार का संदेश देती लगती है। प्रकृति के प्रति सहज जिज्ञासा भाव भी 'नयन का सावन उमड़ता आज क्यों है?' जैसी कविता में लक्षित होता है। इस संग्रह में कवि की मिथकीय दृष्टि 'कंसबध', 'कृष्ण जन्माष्टमी', 'कलियुगी महाभारत' जैसी कविताओं में दृष्टिगत होती है जो उसकी सांस्कृतिक निष्ठा को व्यक्त करती हैं। 'चेर्नोबिल की चेतावनी' वस्तुतः कवि की वैज्ञानिक व तकनीकी सभ्यता के अभिशाप के विरुद्ध चेतावनी है तो 'कलियुगी महाभारत' में कवि मिथक के सहारे प्रजातंत्र को खोखला करने वाली अनाचार, व्यभिचाार, द्वेष, ईर्ष्या, दुर्भावना जैसी कुप्रवृत्तियों को कौरव पक्ष को संकेतित करता है। श्रमिकों के शोषण पर सरकार की चुप्पी कवि को व्यथित, मथित करती हुई संघर्ष के लिए प्रेरित करती है।

प्रस्तुत संग्रह में व्यक्तिगत भावबोध से सम्बद्ध कुछ कविताएं संकलित हैं। कवि प्रेम के भाव को महान मानता है। उसके अनुसार—"प्रेम प्रस्तर को भगवान बना देता है। प्रेम हैवान को इंसान बना देता है।" प्रेम की धार तलवार की धार से भी तेज है। उससे स्वयंभू भगवान भी डरता है। प्रेम ही कवि के काव्य का मूल है—"प्रेम ही प्रेम का प्रसाद यह कविता है।" इसी प्रेम का उदात्तीकरण राष्ट्र प्रेम में निहित है। यही प्रेम समाज व राष्ट्र में व्याप्त उत्पीड़न को देख द्रवीभूत हो कविता में ढल जाता है।

प्रेम में विरह को सुलतान कहा गया है। विरह के ताप में तपकर हृदय की पवित्रता प्रकट होती है। प्रेम में विरही मन तरलता, उसकी अनुभूति प्रवणता इस कविता संग्रह में अनुभूत की जा सकती है। 'यौवन मदिरा ढुल जाएगी' कविता में कवि को अपनी प्रेयसी से यही शिकायत है कि :

"मैंने याद तुम्हारी कर कर,
गीत बनाये, गीत मिटाये।
पर दुख मात्र, यही जीवन में,
तुम्हें एक भी सुना न पाया॥"

किन्तु वह आशा का संबल नहीं छोड़ता क्योंकि जब मानस के भीतर नैराश्य नृर्तन करता है और वह असफलता के झंझट में फंसता है तब आशा ही उसे ज्ञान देती है इसी लिए कवि आशा को कहता है :

"आशा महान, आशा महान,
करती तू ज्योति मुझे प्रदान।"

अभाव और विरह की यह वंचना कवि को दर्शन के क्षेत्र में लेजाकर उसे जीवन की वास्तविकता की पहचान कराती है और वह दार्शनिक की मुद्रा में जीवन को परिभाषित करते हुए कहता है :

"मृत्यु है पर नहीं
मृत्यु ही जीवन का आरंभ है
जीवन और मृत्यु की विभाजक रेखा
सूक्ष्म है, धुंधली है—
युग युग में
परिवर्तनशील है।"

कवि ने अपनी अनुभूतियों को सहज, सरल भाषा में, वृथा अलंकारों के दलदल में फंसे बिना लाक्षणिकता और व्यंग का सहारा लिया है। छंदों के कठोर विधान में फंसे बिना भावानुरूप छंद-मुक्त एवं छंदोबद्ध कविता इस संग्रह में संकलित है। सारत: यह संग्रह कवि की अनुभूति के विविध आयामों को संयोजित करने वाला तथा उसके कवि व्यक्तित्व की सक्षमता को उद्घाटित करने वाला है।

रेणु अरोड़ा
ई-34, सै० 15, नोएडा

हमारे राष्ट्र रत्न

[लेखक : डॉ० लाल बहादुर सिंह चौहान, प्रकाशक : आत्माराम एण्ड संस, कश्मीरीगेट, दिल्ली-110006, पृष्ठ संख्या : 160, मूल्य : 150.00]

इस जीवनी संग्रह में लेखक ने आधुनिक भारतीय इतिहास की सोलह विभूतियों को लिया है। भारतीय इतिहास के नवजागरण काल, स्वतंत्रता-संग्राम तथा स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद के कालखण्ड को समेटा है।

स्वामी रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द और महर्षि दयानंद सरस्वती आधुनिक काल के वे महान् ऋषि थे जिन्होंने हमारी आध्यात्मिक एवं सामाजिक चेतना को नई स्फूर्ति प्रदान की है।

स्वतंत्रता-संग्राम के अमर सेनानी सरदार भगतसिंह, लाला लाजपतराय, गोपालकृष्ण गोखले, सुभाषचन्द्र बोस आदि के जीवन-चरित्र का मूल्यांकन लेखक ने अत्यंत सुन्दर शैली में किया है।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का व्यक्तित्व तो वि बस्त-स्तरीय रहा है। जिसका पूरा चरित्र अत्यंत विस्तृत है। अत: जीवनी में एक हल्की सी आभा की ही हमें अनुभूति होती है।

लाल बहादुर शास्त्री के त्यागमयी सामान्य जीवन तथा पं० जवाहरलाल नेहरू ने जो एक सपना देखा था खुशहाल और आधुनिक भारत का उसकी छाया इस कृति में है।

लोकनायक जयप्रकाश नारायण ने स्वतंत्र भारत को पुन: स्वतंत्रता का बोध कराया, उसका विवरण भी इस कृति में है।

जो व्यक्तित्व छूट गये हैं वे भी उतने ही महत्वपूर्ण हैं जितने इस कृति में सम्मिलित हैं। यदि लेखक उन राष्ट्र-निर्माताओं की जीवनी इस कृति में सम्मिलित करते तो इसकी उपादेयता और बढ़ जाती।

स्वतंत्रता के स्वर्ण जयंती वर्ष में इस जीवनी-संग्रह का प्रकाशन कर प्रकाशक ने एक अत्यंत सुन्दर कार्य किया है और पुस्तक को बहुत ही सुन्दर ढंग से प्रकाशित किया है। अत: लेखक और प्रकाशक दोनों प्रशंसा के पात्र हैं।

'हमारे राष्ट्र रत्न' कृति पठनीय एवं संग्रहणीय है। यदि इस पुस्तक का सस्ता संस्करण भी प्रकाशक प्रकाशित करें तो पाठकों तक यह कृति पंहुचने में कठिनाई नहीं होगी।

सन्तोष तनेजा
12/531, ऋषिनगर, सुभाष पार्क,
सोनीपत-131001

उड़ान

[पुस्तक का नाम : उड़ान (कहानी संग्रह), लेखिका : पूर्णिमा गुप्ता, पृष्ठ : 100, मूल्य : 10.00 रु०, प्रकाशक : साहित्य वीथी, 27/111, विश्वास नगर, शाहदरा, दिल्ली-110032]

पूर्णिमा गुप्ता द्वारा लिखित 15 सामाजिक, भावप्रधान कहानियों का संकलन है उड़ान। लेखिका भारत में पली-बढ़ी और ऊंची शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् विवाहोपरांत अमेरिका में निवास करने लगीं। अत: इन कहानियों के माध्यम से लेखिका ने उन्मुक्त पश्चिमी सभ्यता में रहने वाले भारतीयों और विदेशियों के स्वाभावों और व्यवहारों का सूक्ष्म विश्लेशण किया है। व्यक्तियों के व्यवहार में परिस्थितिजन्य परिवर्तन कितने और किस सीमा तक हो जाते हैं इसका लेखिका ने कथावस्तु के माध्यम से बखूबी वर्णन किया है।

लेखिका की सभी कहानियाँ स्त्रीप्रधान हैं। प्रतीत होता है कि प्रत्येक कहानी संस्मरणात्मक घटनाओं पर आधारित है जिसमें लेखिका के अनुभव की गहराई और परिस्थितियों की जटिलता का तीखा असर दिखाई देता है। उनका ध्यान कश्यप की स्पष्टता और यथार्थ पर अधिक रहा है अत: उन्होंने उन्मुक्त और निर्बन्ध रूप से स्त्री-पुरुष के संबंधों, उनमें आई कटुता (पति-पत्नी) संबंधों के बिखराव और उनके लिए जिम्मेदार उनके अहं के स्वाभिमान का वर्णन किया है। उनकी लेखनी जो संभवत: उनकी जीवन शैली और जीवन के प्रति दृष्टिकोण का आइना बनकर सामने आती है जिसे वह छिपाने का प्रयास नहीं करती तथा जो कथ्य पर उनकी पकड़ मजबूत करती है। अपनी कहानियों में उन्होंने विभिन्न स्तरों पर नारी की विवशता और दयनीय स्थिति, जिसकी जिम्मेदारी समाज की है उसका भी अन्त:स्पर्शी चित्रण किया है। एक महिला का विधवा हो जाने पर समाज और संबंधियों द्वारा मानसिक और आर्थिक उत्पीड़न चाहे वह 50 वर्ष पूर्व हो अथवा आज विदेशी समाज में स्वतन्त्र रूप में रह रही आधुनिक नारी।

अमेरिका के विकसित समाज में एक दशक से अधिक समय व्यतीत करने के पश्चात् भी भारतीय पुरुषों का बेटे और बेटी के प्रति किए जाने वाले व्यवहार के मलूभूत अंतर को बराबर बनाए रखने का वर्णन उन्होंने अपनी कहानी में किया है। बेटी चाहे कितनी ही बुद्धिमत्ती क्यों न हो फिर भी

उनकी अपेक्षा रहती है कि बेटा, बेटी से ऊपर रहे अथवा दूसरे रूप में कहा जाए तो चूंकि बेटा उनका वंशधर होता है। अत: उसे बेटी से अधिक समर्थ सिद्ध किया जाए। यह उनकी मजबूरी भी हो सकती है अथवा विडम्बना किन्तु इसमें नुकसान में रहती है उनकी बेटी। अपने इस रवैये को वे विदेश में भी छोड़ नहीं पाते।

स्त्री-पुरुष के संबंधों को लेकर पश्चिमी परिवेश में रह रहे भारतीय पुरुषों की उस दृष्टि को लेखिका ने अपना निशाना बनाया है जहाँ वह अपनी सुविधानुसार पश्चिमीकरण की संज्ञा को सैक्स तक सीमित करने की सोच और स्वतंत्रता को मात्र अपना उल्लू साधने का जरिया बनाने की प्रवृति अर्थात इसके अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों में महिलाओं की साझेदारी को नकारकर उसे उच्छृंखलता का रूप प्रदान करना ताकि वह उनपर आश्रित तो रहे किंतु कोई अपेक्षा न रखे। इस परिवेश में प्रसंगवश लेखिका ने कुछ अमेरीकी पुरुष मित्रों की सराहना भी की है जोकि अपने मित्रवत भद्र आचरण द्वारा नारी को एक मनुष्योचित मित्रतापूर्ण व्यवहार के द्वारा पूरा सम्मान देते हैं जो निश्चय ही सरहानीय है।

विभिन्न कहानियों के कलेवर में सिमटी उनकी यह भावनाएं अंतत: उनके इस दृष्टिकोण को पुष्ट करती हैं कि मनुष्य जीवन सर्वोत्कृष्ट है और समाज, संबंधों अथवा परम्पराओं में उसका स्थान सर्वोपरि है। यह निश्चित रूप से अमेरिका की भोगवादी और नितांत वैयक्तिक संस्कृतिक संस्का1तिक को उनपर पड़े प्रभाव को परिलक्षित करती है। जिसके लिए निरंतर क्षीण होते संबंध और पारिवारिक वातावरण का अभाव जिम्मेदार हैं। भारतीय परिवेश में इस तरह की परिस्थितियाँ तो पैदा हो सकती हैं किंतु समग्र परिवार अथवा कुटुम्ब का रवैया पूर्णतया निराशाजनक हो ऐसा प्राय: नहीं होता और यह मूलभूत अंतर भारतीय और पश्चिमी समाज में सदैव रहेगा।

अमेरिकी और भारतीय संस्कृति के मिश्रित परिवेश में लिखीं यह कहानियाँ निश्चय ही पाठकों को पसन्द आएंगी। कहानी संग्रह का प्रकाशन स्तरीय है।

मीनाक्षी रावत, ए०टू०ए०-121,
जनक पुरी, नई दिल्ली-58

प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी

[पुस्तक : प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी, लेखक : जगदीश विद्रोही व बलबीर सक्सेना, मूल्य : 20.00रु०, प्रकाशक : सहित्य प्रचारक, 3011 बल्ली मारान, दिल्ली-6]

प्रस्तुत कृति हिंदी-जगत् के सुधी लेखक द्वय श्री जगदीश विद्रोही और श्री बलबीर सक्सेना द्वारा संयुक्त रूप से लिखी गई है। इस पुस्तक से पूर्व दोनों लेखकों की कृतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं।

दोनों लेखक मूलत: कवि हैं, इस कारण पुस्तक की समग्र सामग्री कवितामय बन पड़ी है। विशेपकर अटलजी का कवि-पक्ष अत्यन्त काव्यात्मक एवं कलात्मक ढंग से रचा गया है। बच्चन, नरेन्द्र शर्मा और नीरज-जैसे लब्धप्रतिष्ठ कवियों की रचनाओं के साथ अटलजी की कविताओं का तुलनात्मक विश्लेषण बहुत ही कौशल से किया गया है। इसके साथ-साथ डा. धर्मवीर भारतीकी प्रसिद्ध कविता 'मुनादी 'प्रसंगवश उद्धरित करके सामग्री में चार चाँद लगा दिए हैं। लगता है लेखकों ने, जो हिन्दी के आधुनिक कवियों के बारे में व्यापक जानकारी रखते हैं, अटलजी की रचनाओं को सांगोपांग आत्मसात् किया है। इसके साथ एक अध्याय में अटलजी के अंतरंग संस्मरण अत्यन्त रोचक तरीके से प्रस्तुत किए हैं, जिन्हें लेखकों ने अटलजी के निकट सगे संबंधियों, अध्यापक, सहकर्मियों, एवं सहयोगियों से बड़े जतन से जुटाया है। इन संस्मरणों से अटलजी की प्रकृति, प्रवृत्ति, आदतें तथा उनके स्वभाव का अनुमान लगता है। इनसे माटी की सुगन्ध, आत्मीयता का रंग और अन्तरंग संबंधों की उमंग छलकती हैं। प्रत्येम संस्मरण से अटलजी की सरलता, सौम्यता और निश्छलता झांकती है।

पुस्तक में अअलजी से संबंधित कई भ्रांतियों का निराकरण किया गया है, जिसके लिए दस्जावेजी साक्ष्यों को भी जुटाया गया है। उदाहरणार्थ, 1942 ई० में उनके द्वारा अंगरेजी सरकार का मुखबिर बनना और माफी मांगना इस संबन्ध में इस पुस्तक में स्पष्ट किया गया है कि जिस अटलबिहारी वाजपेयी ने माफ़ी मांगी थी और मुखबिर बना था, उसके पिजा का नाम गौरीशंकर था, जबकि सम्प्रति प्रधामंत्री श्री वाजपेयी जी के पिता का नाम पं० कृष्णबिहारी वाजपेयी है। वर्तमान लोकसभा में स्वयं अटलजी ने स्पष्टीकरण दिया था कि उनके मुकदमे में न्यायमूर्ति वांचू ने अटलजी को बिल्कुल बेदाग प्रमाणित किया था।

समीक्षाधीन पुस्तक में अटलजी के पैतृक इतिहास के साथ उनके बच्चपन, छात्र, संघके प्रचारक, पत्रकार राजनीतिक कार्यकर्ता-जैसे विविध रूपों की झांकियाँ प्रस्तुत की गई हैं और जीवन की अनेक खट्टी-मीठी घटनाओं का उल्लेख अत्यन्त सजीवता के साथ प्रस्तुत किया गया है। यह सर्वविदित है कि अटलजी सहज एवं सरल व्यक्तित्व के धनी हैं। ऐसे व्यक्तित्व पर पंखानुपंख प्रकाश डालना निश्चय ही एक दुरूह काम है, जो इन दोनों सुधि लेखकों ने सफलतापूर्वक और तटस्थ रूप से किया है।

पुस्तक में यदि अटलजी के कुछ अन्तरंग चित्र और दो- एक ऐतिहासिक भाषण और संयोजित कर दिय जाते तो पुस्तक और भी अधिकृत एवं संग्रहणीय हो जाती। वैसे पुस्तक में रोचकता का आभाव कहीं भी नहीं दीख पड़ता। श्री अटलजी के प्रधानमंत्री बनने के उपरान्त हिन्दी में उन पर सर्वप्रथम पुस्तक का प्रणयन कर श्री जगदीश विद्रोही और श्री बलवीर सक्सेना ने जो पहल की है, वह प्रशंनीय है।

इस पुस्तक का हिन्दी जगत् में स्वागत होना चाहिए। लेखक द्वय इस महत् कार्य के लिए बधाई के पात्र हैं।

**डॉ. इन्द्र सेंगर, 30/106, गली नं० 7,
विश्वास नगर, शाहदरा, दिल्ली-32**

सम्मेलन/संगोष्ठी

क्षेत्रीय अनुसंधान प्रयोगशाला, तिरुवन्तपुरम

भारत की आजादी की स्वर्ण जयन्ती के विशेष अवसर पर तथा सरकार की राजभाषा नीति के सफल अनुपालन की दिशा में क्षेत्रीय अनुसंधान प्रयोगशाला, तिरुवनन्तपुरम में दिनांक 6, 7 अगस्त, 1998 के दौरान दो दिवसीय राष्ट्रीय वैज्ञानिक हिन्दी संगोष्ठी का आयोजन किया गया। संगोष्ठी में निम्नलिखित विषयों पर लेख प्रस्तुत किये गये।

1. ग्रामीण विकास में विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी, 2. प्रदूषण नियंत्रण तथा पर्यावरण विकास, 3. प्राकृतिक संसाधनों के विकास पर अनुसंधान, 4. विज्ञान तथा प्रोद्योगिकी के क्षेत्र में राजभाषा का प्रभावी उपयोग

तारीख 6 अगस्त, 1998 को 10 बजे (पूर्वाह्न) संपन्न उद्घाटन समारोह में इलेक्ट्रोनिकी अनुसंधान एवं विकास केन्द्र (ई. आर. एण्ड डी. सी.) के भूतपूर्व निदेशक डा. वी. पी. कुलकर्णी ने संगोष्ठी का उद्घाटन किया। उद्घाटन समारोह के अध्यक्ष थे, प्रयोगशाला के निदेशक डा. जी. विजय नायर।

संगोष्ठी का उद्घाटन करते हुए डा. कुलकर्णी ने कहा कि विज्ञान एवं वैज्ञानिक अनुसंधान से निकाले जा रहे निष्कर्ष प्रयोगशाला की चार दीवार के अन्दर सीमित रहें तो वह स्वान्तः सुखाय है। वह अपेक्षित लक्ष्य समूह या टार्जट ग्रूप के पास पहुंचना चाहिए। यहाँ का लक्ष्य समूह मुख्य रूप से हिन्दी भाषी भारतीय जनता है और गौण रूप से अहिन्दी भाषी भारतीय जनता भी है। विज्ञान में प्राप्त जानकारी का संचरण जन-जन के मन तक पहुंचना चाहिए। इसके लिए अंग्रेजी का प्रयोग पर्याप्त नहीं। जनभाषा हिन्दी में और अन्य क्षेत्रीय भाषाओं में प्रचार सामग्री का प्रकाशन अतिआवश्यक है। इस परिप्रेक्ष्य में हिन्दी माध्यम संगोष्ठियाँ अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। मानव की रक्षा, प्रतिरक्षा, सुरक्षा और संरक्षा के लिए वैज्ञानिक अनुसंधानों को नया मोड़ देना चाहिए। राजभाषा विभाग के उप निदेशक श्री. एम. श्रीधरन तथा संस्कृत कालेज, तिरुवनन्तपुरम के प्रोफसर श्री. माधवनकुट्टि नायर ने अपने प्रशंसा भाषण में भारत के जनसाधारण की भाषा हिन्दी में वैज्ञानिक उपलब्धियों के प्रचार प्रसार पर जोर दिया।

पहला सत्र—विषय : ग्रामीण विकास में विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी

मैसूर स्थित केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिकी अनुसंधान संस्थान की वैज्ञानिक श्रीमती भुपीन्दर कौर सन्धू ने इस तथ्य को उजागर किया कि हमारे देश में खाद्यान्न की कमी नहीं है, बल्कि उसके भण्डारण की ठीक-ठीक व्यवस्था की कमी है। इसकी पूर्ति करने के लिए उनकी संस्था प्रयत्नशील है। उनके यहां के वैज्ञानिक अनुसंधान से निकलने वाले निष्कर्ष जनता की भाषा में उनको पहुँचाती है। उनकी राय में वैज्ञानिक, उत्पादक, निर्माता और उपभोक्ता के बीच की कड़ी है। नापसन्द खाद्य पदार्थों को पसंद की भोजन सामग्री साबित करने की बड़ी भारी जिम्मेदारी उनके यहां के वैज्ञानिक मिलजुल कर कर रहे हैं। इतना ही नहीं किफायती बजट वाले किसानों के लिए कम खर्च पर हाईटेक मशीनों का विकास भी किया जाता है। पेय जल के शुद्धीकरण के सरल तरीकों पर भी निरन्तर प्रयास चल रहे हैं।

निसटाड्स, नई दिल्ली के वैज्ञानिक डा. सोलंकी ने लघु उद्योग की समस्त समस्याओं का सिंहावलोकन करते हुए कहा कि भारी उद्योगों की अपेक्षा लघु उद्योगों का क्षेत्र उपेक्षित है। इसीलिए पारंपरिक उद्योग दिन-ब दिन नष्ट होता जा रहा है। गाँवों में बेरोजगारी बढ़ती जा रही है। इस क्षेत्र में अनुसंधान भी नाम मात्र है, इसलिए काम में बढ़ोत्तरी दिखाई नहीं पड़ रही है। उन्होंने निर्यात की सुविधा, विपणन की सलाह, नई प्रौद्योगिकी की जानकारी न होने की वजह से ग्रामीण उत्पादन की चीजों में गुणवत्ता की कमी है। इसलिए उनकी खपत कम है। बिक्री कम है; अंत में बेचारे लाचार होकर चीजों को कबाड़ी की दुकानों में जमा करके पिंड छुड़ा देते हैं।

अब हमें सोचना चाहिए कि इस गढ़बढ़ी को ठीक करने के लिए वैज्ञानिकों ने क्या किया है ? वैज्ञानिकों और ग्रामीणों के बीच की खाई दिन ब दिन बढ़ती जा रही है। उसे पार लेने के लिये अनुसंधान में अहम् भूमिका निभानी चाहिए। ग्रामीण विकास में विज्ञान और प्रौद्योगिकी का योगदान आधा-अधूरा रह गया है।

जमशेदपुर के एन. एम. एल के डॉ. एल. पी. पाण्डेय ने कहा कि वैज्ञानिक उपलब्धियाँ असंख्य हैं लेकिन ठीक जगह ये पहुंच न पायी हैं। क्योकि हमारे ज्यादातर वैज्ञानिक अंग्रेज परस्त है; राजभाषा के प्रति उदास है और जनता की उपेक्षा कर रहे है। यह उपेक्षा देश के लिए अच्छा नहीं। देर भला लेकिन अंधेरा नहीं। समस्या समग्र रूप से समझ कर समाधान करना वैज्ञानिक की बडी भारी जिम्मेदारी है। आम जनता के रोजमर्रा के चीजों को कम खर्चीले करने के उपायों पर केन्द्रित अनुसंधान की तत्काल मांग है। वैज्ञानिकों को इस मौके पर काम करना चाहिए। मौसम अनुकूल नहीं तो

हाथ पर हाथ धरे बैठना कर्मण्य वैज्ञानिक का लक्षण नहीं। मौसम के अनुकूल कृषि तरीके ढूंढ निकाल कर किसान की कुटिया तक पहुंचाने के लिये वैज्ञानिक को कमर कस लेना है। इस वास्ते ग्राम और वैज्ञानिक के बीच की दूरी को कम किया जाना है। इसके लिए मानसिकता परिवर्तन अत्यन्त आवश्यक है।

सी. एफ.आर. आई., धनवाद के वैज्ञानिक श्री शौलाभ जी ने ठीक कहा कि संतुलित भोजन हमारे ग्रामीणों के लिए कागजी घोड़ा है। विज्ञान को हौवा मत बना रखिए। उनकी राय में यथार्थ से हट्टे-कट्टे अनुसंधान व्यर्थ हवाई उड़ाने हैं। वे खाली है। प्राकृतिक संसाधनों के ठीक-ठीक प्रयोग के लिए जनता जनार्दन को तैयार कर लेना वैज्ञानिकों का कर्त्तव्य है। संक्षेप में नये भारत के निर्माण के लिए वैज्ञानिकों को जनता के बीच में आना चाहिए। शून्य में मस्तिष्क लड़ाने से वह वनफूल रह जाता है। गाँव की फुलवाड़ियों में वैज्ञानिक अपना चिंतन-मंथन करें तो कितना अच्छा होता। ज्ञातव्य है कि गांव वालों के लिए अब भी कम्प्यूटर भूतप्रेत हैं, बुद्धिराक्षस है। भाषा की विसंगति की वजह से ही गांववाले वैज्ञानिक अनुसंधान की उपलब्धियों के रंग में रंग लेने में हम असफल हुए। हर प्रयोगशाला में विस्तारण अनुभाग और उसके अंतर्गत विकास मंच का गठन करके, विज्ञान के फायदे जनहित में कर लेना है। नमूने के कार्यक्षेत्र हर संस्थान के पास हैं। इसको बढ़ाया जाना है- जनभाषा के माध्यम से। प्रयोगशाला से खेत (Lab to Land) की तरफ मार्च करो यही इस संगोष्ठी का दिशाबोध है। मानव संसाधनों का विकास, सिर्फ सिद्धांत हेतु नहीं अपितु उपयोगिता की कसौटी में भी इसे खरी उतरनी चाहिए।

सी. एफ. आर. आई., धनबाद के वैज्ञानिक डा. श्रीवास्तव ने कहा कि वैज्ञानिकों को गांवों में जाकर उनकी सरल-सरस-सुबोध भाषा में विकास की कुंजी देनी है ताकि वे चाहे-अनचाहे, जाने-अनजाने उन्नति कर पायें। प्राकृतिक संतुलन बनाये रखने के लिए प्रदूषण से मुक्त रहने की आवश्यकता पर उन्होंने बल दिया। धूम्ररहित चूल्हे को जलाकर उन्होंने उजियाली फैला दी और धूलि धूसरित ग्रामांचल को पावन भूमि बना दिया।

हमारे देश में कचड़े की कमी नहीं, उससे ऊर्जा पैदा करने के तौर तरीकों का विकास करके नया कीर्तिमान स्थापित करने के लिये उन्होंने आह्वान किया। वैज्ञानिक अनुसंधानों में तथाकथित प्रगति के बावजूद गाँवों का हाल बेहाल है। उदाहरणार्थ बयोगैस परियोजना आदि आधे-अधूरे कार्य रह गये हैं। इसके लिए समर्पण की जरूरत पर उन्होंने जोर दिया।

गांव वालों की जरूरतों को तथा उनकी समस्याओं का समाधान करने में हम चूक गये हैं। अत: मूल सुधार करना है।

दूसरा सत्र: प्रदूषण नियंत्रण तथा पर्यावरण विकास

संगोष्ठी के दूसरे सत्र में, सी. एफ. आर. आई के उपनिदेशक डा. एस. के. श्रीवास्तव ने कोयला निहित उद्योगों द्वारा वायु प्रदूषण एवं उसके नियंत्रण के उपायों पर विस्तार से प्रकाश डाला। तत्संबंधी वैज्ञानिक पुस्तकों के अभाव को उन्होंने हिन्दी के लिए बड़ा भारी संकट कहा। इसे चुनौती मान कर हिन्दी में वैज्ञानिक पुस्तकों की रचना करने का आह्वान किया।

आई. टी. आर. सी., लखनऊ की श्रीमती उषा निगम ने चेतावनी दी कि प्रदूषण से निर्मित जहरीले वातावरण से संरक्षण जरूरी है । इसके कुप्रभाव से सारी मानव जाति के रोगग्रस्त होने का डर लगता है।

राष्ट्रीय समुद्र विज्ञान संस्थान के वैज्ञानिक श्री. राजीव निगम ने समुद्र विज्ञान का विश्लेषण करते हुए कहा कि समुद्री पर्यावरण प्रदूषण अभूतपूर्व ढंग से बढ़ रहा है। प्रदूषण की वजह से समुद्री जीवों के आकृति विकृत होती जा रही है। इस विज्ञानशाखा की जानकारी 99% अंग्रेजी में है। अत: हिन्दी में इस-विषय की ग्रन्थ-रचना की सख्त जरूरत की और उन्होंने संकेत किया।

एन. जी. आर. आई., हैदराबाद के वैज्ञानिक डा. वैकुण्ठनाथ शतपथी ने कहा कि प्रकृति में प्रदूषण की भरमार है। मानव अपनी भौतिकता के लिए, प्रकृति पर विजय पाकर उसका शोषण-प्रदूषण, अपव्यय करने लगा है। उनकी राय में, मानव ही सबसे बडा प्रदूषण प्राणी है। फलस्वरूप पारिस्थिति-विनाश बढ़ता जा रहा है। उन्होंने चेतावनी दी कि भविष्य के सूनहरे स्वप्नों को साकार सार्थक बनाने के लिये प्रकृति की सहायता आवश्यक है। विलास, प्रकृति के प्रदूषण का मूल कारण है। लेकिन औद्योगिक प्रदूषण ही सबसे अधिक विनाशकारी है। यह दिन-ब-दिन धेरोक-टोक बढ़ता जा रहा है। यह विश्वव्यापी समस्या है। इसका निदान ही नहीं निराकरण भी अतिआवश्यक है। वैज्ञानिकों को इस संकट का समाधान करना है।

सी. एफ. आर. आई., धनवाद के वैज्ञानिक श्री जनार्दन सिंह ने दामोदर नदी के पानी में कोयला के कारण उत्पन्न प्रदूषण एवं उसके निवारण पर वैज्ञानिक दृष्टि तथा उपलब्ध उपायों पर प्रकाश डाला।

स्पाइसेस बोर्ड, सिक्किम के वैज्ञानिक डा. जसवीर सिंह ने बड़ी इलायची की विस्तृत खेती के द्वारा पारिस्थितिकीय तंत्र के संरक्षण के तरीकों की ओर इंकित किया।

केन्द्रीय भवन अनुसंधान संस्थान, रुड़की के वैज्ञानिक डा. युद्धवीर सिंह जी ने पर्यावरण मित्र विधियों से भवनों में दीमक नियंत्रण के नये तरीकों पर चर्चा पेश की। कीड़े-मकोड़े से लकड़ी के बचा लेने की प्रक्रियाओं पर तुलनात्मक अध्ययन पेश किया। उनकी चेतावनी थी कि अनियंत्रित पेस्टिसाइड्स के प्रयोग से केंसर आदि घातक बीमारियों के फैल जाने का डर है। इन कृत्रिम कीटनाशी दवाओं की जगह में पेड़ पौधों के फूल फल और पत्तों से प्राकृतिक दवाओं के प्रयोग की सलाह देते हुए, इस दिशा में अधिकाधिक शोध कार्य करने/कराने की सलाह दी। इसके लिए बृहत्तर कार्य योजनाएं बनाकर बड़े पैमाने पर अमल करने का निष्कर्ष निकाला गया।

केन्द्रीय खाद्य प्रौद्योगिकी अनुसंधान संस्थान के अनुवादक डा. वी. के सुब्रमण्यम ने प्रदूषण की परिभाषा देते हुए कहा कि हानिकारक एवं अवांछित पदार्थों का सम्मिलन ही प्रदूषण है। कचड़े को नष्ट करके उसे ऊर्जा व

उर्वरक पैदा करना और उनका इस्तेमाल प्रदूषण को कम करने का एक तरीका है। उन्होंने प्रदूषण के खतरे से जनता को अवगत कराने तथा जागरण-अभियान चलाने की राय दी।

इस प्रकार प्रदूषण नियंत्रण और पर्यावरण विकास विषय पर दूसरा सत्र समाप्त हुआ।

तीसरा सत्र :— प्राकृतिक संसाधनों के विकास पर अनुसंधान

तीसरे सत्र में प्राकृतिक संसाधनों के विकास पर खूब चर्चा चली। निसटाड्स, नई दिल्ली के वैज्ञानिक डा. एस. एस. सोलंकी ने विषय का अवतरण करते हुए कहा कि हमें आने वाली पीढ़ी के हित में कदम उठाने चाहिए। क्योंकि भविष्य वही होगा जो हम आज बनायेंगे। वर्तमान में प्रयुक्त प्राकृतिक संसाधनों की गुणवत्ता बढ़ाने की आवश्यकता पर उन्होंने बल दिया।

एन. जी. आर. आई. के वैज्ञानिक डा. वृजमोहन खन्ना ने कहा कि भूभौतिक अनुसंधान की अहमियत आये दिन बहुत बढ़ गयी है। बढ़ती मांग और घटती जन संपदा को ध्यान में रखते हुए कम मात्रा की चीजों से ज्यादा फायदा पहुंचाने के तौर तरीकों पर खोज कार्य करने की आवश्यकता पर उन्होंने ध्यान आकर्षित किया। जल संसाधन के क्षेत्र में यह सख्ती जरूरी है। किसी काम को आसान महसूस करके आगे की संभावनाओं पर अनुसंधान किये बिना बैठना कर्मठ वैज्ञानिकों को शोभा नहीं देता। अत: सब वैज्ञानिकों को इस मुद्दे पर जूझ जाने का सुझाव आया। उन्होंने आह्वान किया कि अनुसंधान के रास्ते से हटो मत, डटे रहो, मुसीबतों का मुकाबला करते हुए भी।

सी. एफ. टी. आर. आई., मैसूर के वैज्ञानिक डा. एस. एस, चौहान, एन. आई. ओ. गोवा के वैज्ञानिक श्री राजीव निगम, तथा सी. एफ. आर. आई., धनबाद के वैज्ञानिक डा. श्रीवास्तव ने भी इस विषय पर अपनी-अपनी राय प्रकट की। डा. श्रीवास्तव ने बिहार और आस पास के प्रदेशों के सिमेंट उद्योग में प्राकृतिक संपदा के नियंत्रित उपयोग पर निष्पादित अनुसंधान और तदनन्दर प्राप्त परिणामों की तथ्यपरक जानकारी दी।

चौथा सत्र :— विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में राजभाषा का प्रभावी प्रयोग

चौथे सत्र का विषय था विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में राजभाषा का प्रभावी प्रयोग। नारियल विकास बोर्ड का हिन्दी अधिकारी श्रीमती कनकलता ने कहा कि उनके यहाँ राजभाषा हिन्दी का प्रयोग जोर पकड़ता जा रहा है। नयी पारिभाषिक शब्दावली का निर्माण किया गया है। उसका प्रयोग बोर्ड की पत्रिकाओं में और अन्य क्रियाकलापों में करके उस शब्दावली को परिचित एवं आसान बनाया जा रहा है। उनकी राय में तकनीकी शब्दावली में सरलता और सुबोधता चाहिए ताकि उनकी संप्रेषणीयता स्वत: पूर्ण और स्वत: स्पष्ट हो।

राष्ट्रीय वाँतरीक्ष प्रयोगशाला बेंगलूर के वैज्ञानिक श्री अशोक गोडबोले ने कहा कि विज्ञान के क्षेत्र में लेखन सहित सभी क्रियाकलाप हिन्दी माध्यम में होने चाहिए। अंग्रेजी की अपेक्षा हिन्दी की उपादेयता पर उन्होंने अपने विचार व्यक्त किए।

राष्ट्रीय रासायनिक प्रयोगशाला, पूणे के हिन्दी अधिकारी डा. रमाशंकर व्यास ने कहा कि प्रशासन ही नहीं प्रौद्योगिक की बातें भी हिन्दी में होनी चाहिए। देश की वैज्ञानिक प्रगति में सामान्य जनता की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए वैज्ञानिक जानकारी हिन्दी में उपलब्ध करा देने की बड़ी भारी जिम्मेदारी उन्होंने वैज्ञानिकों को सुपुर्द की।

केंद्रीय ईधन अनुसंधान संस्थान, धनबाद के वैज्ञानिक डा. सुनिल कुमार श्रीवास्तव और प्रकाशचन्द्र कुमार ने भाषा के अनुप्रयोग पक्ष पर बल देने का आग्रह किया। कानून के बल पर नहीं, कर्मियों के स्वेच्छा से देशभाषा के प्रयोग के पहलू पर प्रकाश डालकर इस ओर ध्यान देने की इच्छा प्रकट की। प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हिन्दी के प्रयोग का भविष्य उज्ज्वल बताते हुए, तदनुसार सभी संबंधियों द्वारा अनुवर्ती कार्रवाई करने की इच्छा प्रकट की गयी ।

मुद्र विज्ञान संस्थान, गोवा के प्रशासन विभाग के अनुभाग अधिकारी ने कहा कि राष्ट्रभाषा विभाग द्वारा निर्धारित जांच बिन्दुओं को सख्ती से अमल करके, प्रशासन माध्यम के रूप में, अब तक की विदेशी भाषा अंग्रेजी की जगह में राजभाषा हिन्दी को प्रतिस्थापित किया जा सकता है। इसके लिए अनुकूल मानसिकता पैदा करना इस प्रकार की संगोष्ठियों की अहम् भूमिका है।

पाँचवें सत्र में संगोष्ठी का समेकित मूल्यांकन राजभाषा विभाग के सेवा निवृत्त उपनिदेशक श्री डी. कृष्णपणिक्कर ने की। उनकी राय में संगोष्ठी सफल निकली तो भी और अधिक स्तरीय प्रबंधों को पेश करना वांछनीय है। उन्होंने कहा कि संगोष्ठी को परिणामपरक बना लेने के लिए सभी प्रतिभागियों को अपने यहाँ, भले ही अंदरूनी हो, इस प्रकार की संगोष्ठियां हिन्दी माध्यम से चलाने की पहल करनी चाहिए, ताकि वहां भी संघ के प्रयोजनों के लिए हिन्दी भाषा के प्रगामी प्रयोग के लिए अनुकूल वातावरण बन पाए। इतना ही नहीं, अपने-अपने प्रस्तुत पर्चे के विषय को बीज मानकर उसके आधार पर स्वत: पूर्ण वैज्ञानिक ग्रन्थों की रचना करके हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य ग्रन्थों की स्तरीय रचना करने की राय दी गयी, ताकि संगोष्ठी परिणामपरक निकले।

उन्होंने कार्यसमय और संस्थागत संपत्ति के सदुपयोग के लिए ठोस काम हिन्दी में करने कराने की अदम्य इच्छा प्रकट की। अनुसंधान जनहित में करने का समर्थन किया गया। आम जनता के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने के लिए सोद्देश्य से अनुसंधान करके परिणामों को जनभाषा में जन जन के मन मन तक पहुंचाने का उत्तरदायित्व उन्होंने वैज्ञानिक परिवार को सौंप दिया। अन्यथा आने वाली पीढ़ी आज के वैज्ञानिकों पर जाने-अनजाने घोटाला करने के आरोप पत्र दायर करने के खतरे की और उन्होंने उँगली उठायी। समाज के हर संकट को चुनौती मानकर, उस पर अनुसंधान करना स्पृहणीय है । वैज्ञानिकों को प्रयोगशाला की शीशमहलों से बाहर आकर साधारण जनता से मेल मुलाकात करके और उनकी समस्याओं के समाधान को मद्दे नजर रखते हुए खोजपरक कार्य करके और जनभाषा में वैज्ञानिक साहित्य सृजन का निर्णय लेकर उसे ईमानदारी से अमल करना चाहिए। मेहमान संस्थान के निदेशक डा. विजय नायर ने संगोष्ठी की सफलता पर अतीव प्रसन्नता प्रकट की। सी. एस. आई. आर. की विभिन्न संस्थानों के

प्रतिनिधियों का, इस संगोष्ठी के सिलसिले में अपने संस्थान के परिवार में संपन्न हुआ इस स्नेह मिलन और उसमें प्रत्यक्ष आये भ्रातृभाव पर उन्होंने बेहद खुशी जाहिर की। इस पर परिणामपरक अनुवर्ती कार्रवाई की आशा करते हुए, उन्होंने संगोष्ठी का विधिवत् समापन किया।

कार्पोरेट कार्यालय, सी. एम. सी. लिमिटेड, महारानी बाग

भारत सरकार के दिशा निर्देशानुसार कार्पोरेट कार्यालय, महारानी बाग, नई दिल्ली में दिनांक 13 अगस्त, 1998 को राष्ट्र की स्वतन्त्रता के स्वर्ण जयन्ती वर्ष के उपलक्ष में निम्नलिखित विषयों पर हिन्दी संगोष्ठी का आयोजन किया गया :—

1. **हमारा संगठन और राजभाषा हिन्दी : दशा और दिशा**

2. **राजभाषा नीति कार्यान्वयन : मानसिकता और उस पर व्यवस्था का प्रहार**

संगोष्ठी का उद्घाटन संस्थान के अध्यक्ष एवं प्रबन्ध निदेशक, श्री एस. एस. घोष ने किया। संगोष्ठी के उद्घाटन सम्बोधन में श्री घोष ने राष्ट्र की स्वतन्त्रता के लिए बलिदान देने वाले अनन्य महापुरुषों, योद्धाओं के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए इस बात पर जोर दिया कि हमें उन महापुरुषों के सपनों को साकार करना है और वह तभी संभव है जब हम अपने कर्तव्यों का पालन निस्वार्थ एवं सम्पर्ण की भावना से करें, तथा अपने संविधान का आदर करते हुए उसमें दर्शाए नीति-निर्देशों का अनुपालन पूर्ण निष्ठा के साथ करें।

संगोष्ठी का संचालन, श्री मथुरा प्रसाद ने किया तथा प्रेपक की भूमिका श्रीमती सरोज विनायक, एसकेसी माथुर, अनिल सक्सेना क्रमशः कम्पनी की कार्यपालक निदेशक, (सतकर्ता), अतिरिक्त महाप्रबन्धक एवं कम्पनी सचिव, अतिरिक्त महाप्रबन्धक (ग्राहक सेवाएं) ने निभाई। संगोष्ठी में प्रमुख वक्ताओं में सुश्री अंजली उपाध्याय (कार्मिक), काजल प्रजापति एवं सर्वश्री सचिन शर्मा (वित्त एवं लेखा) तथा मुकेश जैन (कम्पनी सचिव) ने अपने प्रखर विचार रखे।

सुश्री अंजली उपाध्याय ने "राजभाषा नीति कार्यान्वयन: मानसिकता और उस पर व्यवस्था का प्रहार" विषय पर बोलते हुए इस बात पर बल दिया कि हमारी संकीर्ण मानसिकता की वजह से हिन्दी कार्यान्वयन में बाधा आ रही है। यह मानसिकता दो प्रकार की है एक उनकी जो अहिन्दी भाषी हैं और हिन्दी का प्रयोग तो करना चाहते हैं परन्तु हिन्दी भाषा के अधूरे ज्ञान तथा गलतियां होने के डर से हिन्दी में कार्य नहीं करते। दूसरे वे लोग हैं—जो हिन्दी तो अच्छी तरह जानते और समझते हैं, परन्तु अंग्रेजी के प्रयोग को ज्यादा आधुनिक मानते हैं। इस मंतव्य की पुष्टि के लिए उन्होंने राष्ट्रकवि एवं ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित महादेवी वर्मा की इन पंक्तियों की ओर ध्यान आकर्षित कराया।

"किसी दूसरी भाषा को जानना सम्मान की बात है, लेकिन दूसरी भाषा को अपनी राष्ट्रभाषा के बराबर दर्जा देना शर्म की बात है।"

उनका कहना था कि हिन्दी में जब कर्म, धर्म और दर्शन की चर्चा हो सकती है तो सरकारी कार्य क्यों नहीं हो सकता? किसी भी भाषा में परिपूर्ण शब्दावली, साहित्य संवेदनशीलता और सामर्थ्य होना चाहिए और वह सब हिन्दी भाषा में मौजूद है। पाश्चात्य देशों के प्रभाव पर उनका कहना था कि "हमारी संकीर्ण मानसिकता हमें अपनी संस्कृति की गरिमा से दूर पाश्चात्य संस्कृति के भौतिक आकर्षणों की ओर खींच रही है तथा तकनीकी क्षेत्र में आए दिन हो रहे विकास कार्य अंग्रेजी भाषा के माध्यम से ही हमें मिल रहे हैं। अतः तकनीकी व्यवस्था ठीक न होने के कारण भी कर्मचारियों को विवश होकर अंग्रेजी भाषा में ही करना पड़ रहा है"। वस्तुतः तकनीकी बदलावों का मुकाबला, उपकरणों की कमी एवं लोगों के उत्साह में कमी के कारण भी हिन्दी कार्यान्वयन की क्षमता पर असर पड़ रहा है।

सुश्री काजल प्रजापति ने "हमारा संगठन और राजभाषा हिन्दी-दशा और दिशा" विषय पर हिन्दी की दशा पर पूरे भारत वर्ष में प्रयोग पर प्रकाश डालते हुए प्रश्न किया कि हमारे देश की राजभाषा क्या है। इस सरल से प्रश्न का उत्तर है कि हमारे देश की राष्ट्रभाषा हिन्दी है। लेकिन आज यह उत्तर स्वयं में ही प्रश्न बन कर रह गया है कि क्या हिन्दी ही हमारे देश की राष्ट्रभाषा है? क्योंकि आज हमारे अपने ही देश में चाहे वह हमारा कार्यालय हो या कोई अन्य प्रतिष्ठान सब ओर अंग्रेजी का ही बोलबाला है। अंग्रेजी का यह बहुतायत प्रयोग दर्शाता है हमारी गुलामी की मानसिकता को। यद्यपि हमारी संस्कृति 5000 वर्ष पुरानी है फिर भी भारतवर्ष जैसा विशाल देश स्वतंत्र होते हुए भी अंग्रेजों की गुलामी की मानसिकता से ग्रस्त है अपने संगठन के सन्दर्भ में उनका मानना है कि हमारा संगठन भी इसी गुलाम मानसिकता का परिचायक है तथा अथक परिश्रम एवं प्रयत्नों के बावजूद भी हिन्दी के प्रसार व प्रयोग की दशा बहुत ज्यादा अच्छी नहीं है। लेकिन फिर भी हमारे हिन्दी विभाग ने पिछले कुछ वर्षों में इस दिशा में काफी परिश्रम किया है। लेकिन जब तक हम सब एकजुट होकर इनका साथ नहीं देंगे तब तक दिशाविहीन ही रहेंगे। हिन्दी को सही दिशा दिलाने के लिए आवश्यकता है हमारे सहयोग रूपी प्रकाश की।"

इसी विषय पर श्री सचिन शर्मा ने अपने वक्तव्य में जोर दिया कि हिन्दी को व्यावहारिक राष्ट्रभाषा का दर्जा तब ही दिया जा सकता है, जब वह भाषा न सिर्फ विचारों की अभिव्यक्ति के लिए प्रयुक्त हो बल्कि इसका उपयोग शासकीय, विज्ञान, तकनीकी, शिक्षा तथा अनुसंधान में भी बहुतायत से किया जाए। इसके अतिरिक्त उनका मानना था कि राजभाषा हिन्दी के प्रभावी रूप से कार्यान्वयन के लिए आवश्यक है कि लोगों की मानसिकता में बदलाव लाया जाए। उनको यह विश्वास दिलाना जरूरी है कि राष्ट्रभाषा हिन्दी सक्षम है, सतत है तथा सर्वगौण है। अपने वक्तव्य में उन्होंने आह्वान किया कि सभी वर्ग मंत्री, शासन अधिकारी, अध्यापक, वकील, डॉक्टर एवं सबसे जरूरी आम नागरिक राष्ट्रभाषा के व्यवहार पक्ष को सबल बनाने में और जुट जाएं। इसके लिए हम स्वतन्त्र राष्ट्र के स्वाभिमानी नागरिक का

सबूत दें, और एक दूसरे की प्रतीक्षा न करते हुए, स्वयं पहल करें, अकेले चलें, सहयात्री अपने आप मिल जाएंगे।

हमारा संगठन और राजभाषा हिन्दी-दशा और दिशा विषय पर ही **श्री मुकेश जैन** का कहना था कि हिन्दी किसी एक व्यक्तिविशेष की बपौती नहीं है वरन् हम सबकी भाषा है और इसके लिए आवश्यक है कि हम सब इसके प्रयोग के लिए मानसिकता में बदलाव लाएं तथा राजभाषा हिन्दी को आगे से आगे ले जाते हुए गर्व का अनुभव करें। जिस प्रकार आज सभी विकसित देश चीन, जापान, रूस, जर्मनी, इंग्लैंड की अपनी भाषा है उसी प्रकार हमें भी अपनी भाषा का गर्व के साथ से प्रयोग करना चाहिए। अपने वक्तव्य में, उन्होंने राजभाषा सम्बंधी संवैधानिक धाराओं, नियमों का भी उल्लेख करते हुए विस्तृत पहलुओं पर विचार रखे तथा संगठन में हिन्दी विभाग के विभिन्न सीमितताओं के साथ कार्य करते हुए भी उल्लेखनीय कार्य पर अपनी सहमति जताते हुए, प्रसन्नता जाहिर की। अपने वक्तव्य में उन्होंने इलेक्ट्रॉनिकी विभाग के संयुक्त निदेशक श्री कामेश्वर प्रसाद द्वारा निरीक्षण के दौरान दिए गए सुझावों की ओर भी ध्यान आकर्षित किया कि यदि कार्मिक, लेखा, जन सम्पर्क व प्रशासन विभाग हिन्दी में यथासम्भव कार्य करें तो हिन्दी कार्यों की संख्या में उत्तरोतर बढ़ोतरी होगी।

बैठक में ध्वनिमत से यह सुझाव भी रखा गया कि कार्पोरेट कार्यालय, महारानी बाग के प्रमुख विभागों में कार्मिक, जनसम्पर्क एवं संचार, प्रशासन तथा लेखा विभाग यदि हिन्दी को प्रोत्साहित करते हुए हिन्दी में कार्य करें तो कार्पोरेट कार्यालय सीएमसी के क्षेत्रीय/शाखा कार्यालयों के लिए आदर्श प्रस्तुत कर सकता है।

सभी प्रतिभागियों का एकमत था कि जहां लेखा विभाग तथा प्रशासन विभाग में कुछ कार्य हिन्दी में हो रहा है वहां विशेषकर कार्मिक विभाग में हिन्दी कार्य अपेक्षित है। अत: कार्मिक विभाग को चाहिए कि नीतियां, परिपत्र, कार्मिक मेन्यूवल इत्यादि जारी करने से पूर्व सुनिश्चित करें कि हिन्दी अनुवाद भी साथ ही साथ जारी हो। इस पर श्री अनिल सक्सेना का सुझाव था कि बल्कि पहले हिन्दी अनुवादित दस्तावेज, हस्ताक्षर होने चाहिए, तथा बाद में अंग्रेजी के, ताकि राजभाषा नियमों का उल्लघंन न हो।

श्रीमती सरोज विनायक ने कार्पोरेट कार्यालय के संसदीय राजभाषा समिति द्वारा निरीक्षण के सम्बन्ध में आगाह किया कि '**संसदीय राजभाषा समिति**' बहुत प्रभावी समिति है तथा किसी भी कार्यालय को उनकी कटु आलोचनाओं से बचना चाहिए। सुझाव के रूप में उनका मत था कि विशेषकर धारा 3(3) का हमें पूर्णत: पालन करना चाहिए क्योंकि कार्पोरेट कार्यालय नियम 10(4) के अन्तर्गत अधिसूचित है, अत: आवश्यक है कि कार्मिक विभाग और जनसम्पर्क विभाग इस ओर विशेष ध्यान दें।

श्री एस.के.सी. माथुर, अध्यक्ष कार्पोरेट कार्यालय राजभाषा कार्यान्वयन समिति ने पूरे सत्र की विवेचना करते हुए कहा कि सभी वक्ताओं ने आज अच्छे एवं निष्पक्ष विचार रखे हैं तथा हम आशा करते हैं सभी विभाग एक जुट होकर हिन्दी कार्यों को बढ़ावा देंगे तथा कार्पोरेट कार्यालय अपने अधीनस्थ कार्यालयों के लिए आदर्श स्थापित कर सकेगा साथ ही साथ उन्होंने इस पर भी निराशा व्यक्त की कि हमारे बार-बार सुझावों के बावजूद कम्पनी प्रबन्धन की महत्वपूर्ण बैठकों जैसे 'केप्स मीटिंग' तथा हर माह होने वाली 'ओपेरा' बैठकों में हिन्दी कार्यान्वयन को उचित प्रतिनिधित्व नहीं मिलता।

अन्तत: बैठक में उपस्थित सभी प्रतिभागियों द्वारा सक्रिय भागीदारी तथा श्रीमती सरोज विनायक, सर्वश्री एसकेसी माथुर, सुधीर सक्सेना, अनिल सक्सेना व एस शेखर के महत्वपूर्ण सुझावों के लिए मथुरा प्रसाद द्वारा धन्यवाद ज्ञापन के साथ बड़े सौहार्दपूर्ण वातावरण में संगोष्ठी का समापन हुआ।

हिन्दुस्तान लैटेक्स लिमिटेड

भारत की स्वर्ण जयन्ती समारोह के सिलसिले में हिन्दुस्तान लैटेक्स लिमिटेड ने "संघ की राजभाषा हिन्दी की प्रगति—दशा और दिशा" पर 14 अगस्त, 1998 को एक संगोष्ठी आयोजित की। संगोष्ठी का उद्घाटन स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय के निदेशक (राजभाषा), श्री कमल सिंह ने किया।

कार्यापालक निदेशक (तकनीकी) डॉ० एस० एन० पॉल ने संगोष्ठी में सभी विशिष्ट व्यक्तियों का स्वागत किया। उन्होंने अपने भाषण में कहा कि भारत की स्वतंत्रता के 50 वर्ष के बाद राजभाषा के कार्यान्वयन के क्षेत्र में प्रगति ज़रूर हुई है।

अध्यक्ष एवं प्रबन्ध निदेशक तथा संगोष्ठी के अध्यक्ष श्री जी० राजमोहन ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि हिन्दी को सदियों पूर्व राजभाषा के रूप में अमल किया जाता था तथा विदेशियों ने भी अपने व्यवसाय को सुस्थिर करने के लिए हिन्दी सीखा। इसके अलावा स्वतंत्रता संग्राम में गांधी जी जैसे लोगों ने हिन्दी को राजभाषा का गौरव देने के संबन्ध में योगदान किया। वे जानते थे कि भारत जैसे वैविध्यपूर्ण देश को एक माला में पिरोए जाने के लिए एक भाषा की ज़रूरत थी। उसकी ताकत भारत की भाषाओं में हिन्दी को है क्योंकि भारत के बहुभाग लोगों द्वारा समझने की भाषा के रूप में हिन्दी ही उसके लिए काबिल है।

श्री कमल सिंह ने भद्रदीप प्रज्वलित कर संगोष्ठी का उद्घाटन किया। उन्होंने अपने भाषण में कहा कि स्वतंत्रता के पच्चास वर्ष की समाप्ति के अवसर पर राजभाषा संगोष्ठी आयोजित की रही है जो सराहनीय है तथा हिन्दुस्तान लैटेक्स लिमिटेड की राजभाषा का भविष्य उज्ज्वल रहने की कामना की।

श्री एम० श्रीधरन, उप निदेशक (कार्यान्वयन), क्षेत्रीय कार्यान्वयन कार्यालय (द० प०), विल्लनशेरियल भवन, कोच्चि ने राजभाषा के प्रगामी प्रयोग में उत्तरोत्तर प्रगति हासिल करने की सराहना की।

श्री डी० कृष्णपणिक्कर सेवानिवृत्त उप निदेशक (कार्यान्वयन) ने अपने आशीर्वाद भाषण में बताया कि हिन्दुस्तान लैटेक्स लिमिटेड में राजभाषा के कार्य की सबूत है यह संगोष्ठी। संगोष्ठी के लिए उन्होंने कामनाएं अदा करके भाषण समाप्त किया।

श्री एस० आर० पणिक्कर, उप महा प्रबन्धक (परियोजना तथा इंजीनियरी), निरोध फैक्टरी के धन्यवाद भाषण के साथ उद्घाटन सत्र समाप्त हुआ।

अगला सत्र रहा पेपर प्रस्तुतीकरण का। डॉ० परमेश्वरन, सेवा निवृत्त प्रिन्सीपल, यूनिवर्सिटी कॉलिज, तिरुवनंतपुरम ने ''राजभाषा हिन्दी सदियों पूर्व राजकाज में'' विषय पर पेपर प्रस्तुत किया। उन्होंने भारत में राजभाषा के रूप में हिन्दी की जो स्थिति थी उस पर कई उदाहरणों सहित विस्तृत रूप से चर्चा की और हिन्दी का उद्भव और विकास से लेकर विदेशी शासन काल में हिन्दी की स्थिति के संबन्ध में अपने पेपर में जोड़े। इसमें मुगल शासन काल, मराठा तथा अन्य मुसलमान शासकों के युग में हिन्दी के प्रयोग के संबन्ध में विवरण दिया।

दूसरा पेपर श्री राजपूत, राजभाषा अधिकारी, द्रवणोदन प्रणाली केन्द्र, वलियमला ने संविधानिक प्रावधानों के संबन्ध में था। उन्होंने स्वतंत्रता संग्राम के बाद निर्माताओं द्वारा राजभाषा-राष्ट्रभाषा पर हुई निर्णयों तथा तत्पश्चात् संविधान में बनाये गए प्रावधानों का प्रकाश डाला। राजभाषा अधिनियम, 1963, राजभाषा नियम 1976, वार्षिक कार्यक्रम, राजभाषा पर बनी हुई समितियों, बैठकें, अनुपालन के लिए प्रकाशित पत्र-पत्रिकाएं, मैनुअल आदि के संबन्ध में चर्चा की। उन्होंने राजभाषा आयोग, राजभाषा समिति का गठन, 1960 का राष्ट्रपति का आदेश, आठवीं अनुसूची, संसद में प्रयुक्त होने वाली भाषा से लेकर संघ की राजभाषा नीति पर विस्तृत रूप से चर्चा की।

तीसरा पेपर प्रस्तुत किया मुख्य प्रोस्टमास्टर जनरल तिरुवनंतपुरम के कार्यालय के सहायक निदेशक हिन्दी एवं टोलिक का सदस्य सचिव श्रीमती एम० विशालाक्षी। उन्होंने ''राजभाषा कार्यान्वयन की वर्तमान स्थिति-एक विचारात्मक अध्ययन'' प्रस्तुत किया। उनके पेपर में स्वतंत्रता के पचास वर्षों में भारत की राजभाषा हिन्दी पर हुई प्रगति पर और उसके कारगर बनाने में उठाये जाने वाली बाधाओं पर चर्चा की। उन्होंने कहा कि कार्यालय का काम केवल हिन्दी कर्मियों द्वारा संभव नहीं है बल्कि उच्च अधिकारियों के राजभाषा कार्यान्वयन पर दिलचस्पी रखना चाहिए। उनके मार्गदर्शन और रुचि के आधार पर राजभाषा का कार्यान्वयन सुचारू रूप से संभव है। उन्होंने कई साधक तत्वों जैसे हिन्दी प्रशिक्षण, कार्यशालाएं, हिन्दी किताबें वितरण करने, संगोष्ठी, पखवाड़े समारोह, काम करने के लिए पुरस्कार देना आदि साधक तत्वों पर चर्चा की। उन्होंने बताया कि इन साधक तत्वों में भी बाधक तत्व छिप रहा है। कार्यशालाएं आयोजित करके प्रशिक्षण देने से कर्मचारी अपना काम द्विभाषिक रूप में करने के लिए तैयार नहीं है क्योंकि उनका काम दुगना है। उन्होंने जोड़ा कि इंगलैंड, चीन, जापान, रूस आदि देशों जैसे हमारा देश भी अपनी राजभाषा में ही काम करने का सख्त आदेश दें तो राजभाषा का कार्यान्वयन आसानी से संभव होगा है।

भारतीय आज़ादी के 50 वर्षों के परिप्रेय में राजभाषा के भविष्य के बारे में कैनरा बैंक के प्रबन्धक (राजभाषा), डॉ० रामचन्द्र ने बताया कि भारत में हिन्दी को राजभाषा के रूप में इसीलिए चुना गया कि भारत के बहुभाग लोगों समझने तथा बोलने की भाषा हिन्दी है। उन्होंने कहा कि सभी क्षेत्रों में प्रगति ज़रूर हुई है। हिन्दी को छोटे बच्चे के समान मानते है। धीरे-धीरे बच्चों में एक-एक अवस्थाएं आती हैं। धीरे-धीरे वह बैठना सीखता है फिर चलना, बाद में दौड़ना वैसे ही हिन्दी भी धीरे-धीरे केवल भारत में ही नहीं विदेशों में भी चाहे तकनीकी क्षेत्र में हो, साहित्यिक, कला, विज्ञान किसी भी क्षेत्र में हो प्रगति हासित कर रही है और उन्होंने विश्वास प्रकट किया कि आगामी युग हिन्दी का युग है। हिन्दी विश्व भर में आसीन होकर गौरवान्वित होगी।

अंतिम पेपर ''हमारी कंपनी और राजभाषा कार्यान्वयन'' पर कंपनी के वरिष्ठ सहायक प्रबन्धक, हिन्दी ने पेपर प्रस्तुत किए। उन्होंने हिन्दुस्तान लैटेक्स में हुई राजभाषा कार्यान्वयन की प्रगति पर नज़र दौड़ा और कहा कि कंपनी एक वाणिज्यिक कंपनी है तो भी कंपनी के अन्य कार्यों के साथ-साथ ज़रा भी पीछे न जाकर राजभाषा का कार्य भी बहुत आगे चल रहा है। उन्होंने जोड़ा कि उसके लिए कंपनी में बाधक से ज़्यादा साधक तत्व है और वरिष्ठ अधिकारियों तथा कर्मचारियों का सहयोग मिलता रहता है। यह संगोष्ठी ही हमारी कंपनी के राजभाषा कार्यान्वयन पर एक मील का पत्थर है। आगे दक्षिण में प्रथम स्थान ग्रहण करने की ओर अथक कोशिश की जा रही है।

संगोष्ठी के बीच में प्रतिभागियों के मनोरंजन के लिए कमल सिंह ने अपनी कविता और अन्य देशभक्ति गीतों का कैसट सुनवाया। श्री कमलसिंह जी ने एक-एक पेपर प्रस्तुतीकरण के बाद उस पर चर्चा की।

समापन सत्र में भागीदारियों ने संगोष्ठी के बारे में अपनी राय प्रकट की। हिन्दुस्तान लैटेक्स के कंपनी सचिव श्री वी० ए० शशिधरन नायर ने राजभाषा संगोष्ठी आयोजित करने के लिए स्वास्थ्य मंत्रालय से अनुदेश देने तथा निदेशक (राजभाषा) को इसके संचालन के लिए अपना आभार प्रकट किया तथा बताया कि आगे भी राजभाषा का कार्यान्वयन और भी मज़बूत बनाने के लिए हम अनवरत कोशिश करते रहेंगे।

निदेशक डाक लेखा, उ० प्र० कार्यालय

''अपने ही दूधपूत से हारी है, ये हिन्दी।''

सितम्बर '98 माह में ''हिन्दी पखवाड़ा'' के आयोजनों की श्रृंखला में उत्तर प्रदेश परिमंडल के निदेशक, डाक लेखा कार्यालय में दिनांक 16-4-98 को एक रोचक और उपयोगी विचार गोष्ठी का आयोजन हुआ। जिसमें ''सरकारी कार्यालयों में हिन्दी-प्रयोग, प्रगति और भविष्य'' विषय पर समाज के विभिन्न क्षेत्रों के अधिकारी विद्वानों ने सार्थक और उपयोगी विचार प्रस्तुत किये। विचार गोष्ठी का शुभारम्भ श्री उदय कृष्ण, निदेशक डाक लेखा ने माँ

सरस्वती के चित्र पर माल्यार्पण कर किया। कार्यालय के कर्मचारी श्री के०पी० शुक्ल ने सस्वर ''वाणी वन्दना'' प्रस्तुत की।

अतिथि वक्ताओं का स्वागत करते हुए कार्यालय के सहायक निदेशक (राजभाषा) डॉ० विजय कुमार सक्सेना ने विचार गोष्ठी का विषय-प्रवर्तन किया। उन्होंने कहा कि सरकारी कार्यालयों में हिन्दी का प्रयोग निरन्तर प्रगति करते हुए 21वीं सदी के द्वार तक आ पहुंचा है।

गोष्ठी के प्रखर वक्ता डॉ. सुरेन्द्र विक्रम, अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, क्रिश्चयन डिग्री कालेज, लखनऊ ने हिन्दी को भारत माता के माथे पर चमकने वाली बिंदी बतलाते हुए हिन्दी दिवस का ऐतिहासिक महत्व प्रतिपादित किया। उन्होंने सरकारी कार्यालयों में दिन प्रति दिन बढ़ रहे हिन्दी के प्रयोग को स्पष्ट शब्दों में स्वीकार किया। उन्होंने राजभाषा हिन्दी के भविष्य को उज्ज्वल बताया।

भारत सरकार द्वारा हिन्दी कार्य के लिए पुरस्कृत पी. जी.टी. अध्यापक श्री राम प्रकाश त्रिपाठी 'प्रकाश' ने अपने ओजस्वी कविता उद्धरणों से यह सिद्ध किया कि हिन्दी भाषा हर कहीं विजयी हुई है, यदि यह हारी है तो अपनों से ही हारी है :—

''अपने ही दूधपूत से हारी है ये हिन्दी
कहता है कौन है नहीं दुखियारी ये हिन्दी
दामन लहू लुहान, है नखदंश वक्ष पर—
खुद अपनी ही कोख से स्वयं यह हारी है हिन्दी''

हिन्दी संस्थान उ. प्र. की उप निदेशक श्रीमती विद्या बिंदु सिंह ने विदेशों में बहुतायत से हो रहे हिन्दी के प्रचार-प्रसार का महत्वपूर्ण व ज्ञानवर्द्धक विवरण प्रस्तुत करते हुए यह प्रश्न उठाया कि आज जब विदेशी लोग श्री ''प्रकाश'' जी ने हिन्दी को कार्यालयों में आदर देने पर बल प्रदान किया—

''मान माँ का करें, यह बड़ी बात है।
मान माँ का हरें, आत्म प्रतिघात है॥

आत्म प्रतिघात और इस बड़ी बात में—

लोग खुद ही चुनें क्या अहम् बात है''

उनके शब्दों में हिन्दी की सच्चे अर्थों में राष्ट्रभाषा न बन पा सकने की पीड़ा स्पष्ट झलक रही थी—

''हम हैं जो माँ का हक उसे नहीं दिला सके।
कुछ लोग हैं लुका छुपी रहे सराहते

दशकों का अन्तराल गया यों ही तो गुजर—
माँ की जगह न माँ को मुहैया करा सके''

सुकवि प्रकाश जी ने राष्ट्रभाषा सम्मान का प्रतीक बताते हुए अतीत का स्मरण कराया—

''दर्शन का देश आज प्रदर्शन में फंस गया
कंचन स्वदेश कल का प्रवचन में रस गया
चिन्तर का देश इतना चिंतनीय हो गया—
सृजन का देश आज विसर्जन में धंस गया''

हिंदी संस्थान उ. प्र. की उप निदेशक श्रीमती विद्या बिंदु सिंह ने विदेशों में बहुतायत से हो रहे हिंदी के प्रचार-प्रसार का महत्वपूर्ण व ज्ञानवर्द्धक विवरण प्रस्तुत करते हुए यह प्रश्न उठाया कि आज जब विदेशी लोग हिन्दी की ओर आकर्षित हो रहे हैं तो हमें तो इसे शत प्रतिशत अपनाना ही चाहिए। उन्होंने कहा कि केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों को अधिक से अधिक पत्राचार हिन्दी में ही करना चाहिए और इसमें कोई कठिनाई नहीं होनी चाहिए। हिन्दी संस्थान द्वारा प्रकाशित पुस्तकों व पत्र-पत्रिकाओं का परिचय देते हुए डॉ. विद्या बिंदु सिंह ने सुझाव दिया कि सरकारी कार्यालयों में पुस्तकालयों के लिए ऐसी पुस्तकें खरीदने से भी हिन्दी प्रयोग के प्रति प्रेरक वातावरण बनता है।

श्री ओम प्रकाश तिवारी, सहायक निदेशक (राजभाषा), स्टेट बैंक एवं सचिव, नराकास (बैंक) ने राजभाषा हिन्दी से संबंधित महत्वपूर्ण संवैधानिक और ऐतिहासिक जानकारी प्रस्तुत की। उन्होंने अधिकारियों का राजभाषा कार्यान्वयन में एकजुट होकर सक्रियता से सहयोग करने हेतु आह्वान किया। श्री तिवारी ने वैज्ञानिक युग की चुनौतियों के अनुरूप हिन्दी को सन्नद करने और सामूहिक रूप से बाधाओं का निराकरण करने पर विशेष बल दिया ताकि राजभाषा का प्रवाह निरंतर बना रहे।

लखनऊ विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में रीडर डॉ. (श्रीमती) कैलाश देवी सिंह ने कहा कि हिन्दी कभी भी राज्याश्रय की भाषा नहीं रही वह सदियों से जनता के हाथों ही फलती-फूलती चली आ रही है। उन्होंने जोरदार शब्दों में स्वीकार किया कि सरकारी कार्यालयों में निस्संदेह हिन्दी का कार्य बढ़ रहा है। उन्होंने भाषा को सरल और सुग्राह्य बनाने पर विशेष बल दिया। लखनऊ वि. वि. द्वारा चलाए जा रहे रोजगार परक पाठ्यक्रमों का परिचय देते हुए उन्होंने हिन्दी भाषा को रोजगार से जोड़ने का महत्व प्रतिपादित किया।

गोष्ठी की अध्यक्षता करते हुए श्री उदय कृष्ण, आई. पी. एस., निदेशक डाक लेखा एवं आंतरिक वित्त सलाहकार, उ. प्र. डाक परिमंडल ने कहा कि बड़े गर्व की बात है कि कार्यालय में आयोजित इस विचार गोष्ठी में लखनऊ के विभिन्न विद्वानों ने पधार कर महत्वपूर्ण विषय पर विश्लेषणात्मक चर्चा की। विभिन्न वक्ताओं के विचारों को समेकित करते हुए उन्होंने कहा कि हिन्दी का प्रयोग करने के लिए हमें दृढ़ संकल्प और इच्छा शक्ति की आवश्यकता है। उन्होंने कहा कि इस विचार गोष्ठी का उद्देश्य एक ऐसा विचार स्रोत करना था जो हमें यह सोचने पर विवश करे कि हम सरकारी कार्यालयों में हिन्दी का प्रयोग किस तरह बढ़ायें, अपने इस उद्देश्य में यह गोष्ठी पूरी तरह सफल हुई है।

उप निदेशक डाक लेखा श्री दीपक आर्शीष कौल ने अतिथि वक्ताओं और श्रोताओं का आभार व्यक्त किया और धन्यवाद ज्ञापित किया। गोष्ठी का संचालन डॉ. विजय कुमार सक्सेना, सहा. निदेशक (रा. भा.) ने किया। इस प्रकार यह सार्थक विचार गोष्ठी डाक लेखा कार्यालय के अधिकारियों व कर्मचारियों के मन में हिन्दी प्रयोग के प्रति नवीन प्रेरणा जागृत करने में पूर्णत: सफल रही।

आंध्रा बैंक, हैदराबाद

दिनांक 13-8-98 को आंध्रा बैंक प्रधान कार्यालय के सभागृह में ''हमारा संगठन और राजभाषा हिन्दी : दशा और दिशा'' विषय पर बैंक के कार्यपालकों और वरिष्ठ अधिकारियों के लिए राजभाषा संगोष्ठी का आयोजन किया गया। संगोष्ठी का उद्घाटन बैंक के अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक श्री टी जे ए गनिगा ने किया। अपने उद्घाटन भाषण में अध्यक्ष ने दैनंदिन बैंकिंग कार्य में, कार्यपालकों और वरिष्ठ अधिकारियों द्वारा हिन्दी के कार्यान्वयन की भूमिका पर अधिक जोर दिया। उन्होंने वरिष्ठ अधिकारियों से अपील की कि वे हिन्दी के कार्यान्वयन पर अधिक ध्यान दें।

संगोष्ठी की अध्यक्षता महा प्रबन्धक श्री सुबोध कुमार गोयल ने की। अपने अध्यक्षीय भाषण में श्री गोयल ने आन्ध्रा बैंक में हिन्दी कार्यान्वयन और उसकी प्रगति का विस्तृत ब्यौरा प्रस्तुत किया। उन्होंने हिन्दी कार्यान्वयन में और अधिक प्रगति लाने के लिए नयी रणनीति अपनाने पर जोर दिया और विविध पहलुओं पर प्रकाश डाला।

श्री योगेश्वर कुमार, उप महा प्रबंधक ने हिन्दी में कम्प्यूटर साफ्टवेयर की उपलब्धता आन्ध्रा बैंक में कम्प्यूटरों में हिन्दी के प्रयोग की स्थिति, भावी योजना आदि का विवरण दिया। श्री के वी गोविन्द राव, सहायक महा प्रबंधक ने राजभाषा कार्यान्वयन में तीव्रता लाने के लिए अनेक कदम सुझाये।

संगोष्ठी के खुले सत्र में कई वरिष्ठ अधिकारियों ने भाग लिया। चर्चा में श्री मनधीर थौर, सहायक महा प्रबंधक, श्री एस एस वी प्रसाद राव, बोर्ड सचिव, श्री एम एम एल कुमार, उप महा प्रबंधक, श्री शंकर राव गुप्ता, सहायक महा प्रबंधक आदि ने सक्रिय रूप से भाग लिया।

संगोष्ठी में 45 कार्यपालक और वरिष्ठ अधिकारियों ने भाग लिया। इस संगोष्ठी के आयोजन से कार्यपालकों और वरिष्ठ अधिकारियों में हिन्दी कार्यान्वयन के प्रति नयी स्फूर्ति और और उमंग आयी है। कुल मिलाकर यह संगोष्ठी बहुत ही सफल रही।

हिन्दी वह धागा है, जो विभिन्न मातृ-भाषाओं रूपी फूलों को पिरो कर भारत माता के लिए सुन्दर हार का सृजन करेगा।

-डॉ. जाकिर हुसैन

कार्यशाला

भारतीय डाक व दूरसंचार विभाग

तूतीकोरिन स्थित केन्द्र सरकार के भारतीय डाक व दूरसंचार विभाग द्वारा संयुक्त रूप से दो दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन तूतीकोरिन पत्तन न्याय के अतिथि गृह में दिनांक 03 व 04 अगस्त 1998 को किया गया। इस संयुक्त हिंदी कार्यशाला में दोनों विभागों के कुल 30 कर्मचारियों/अधिकारियों ने भाग लिया।

इस हिंदी कार्यशाला का उद्घाटन श्रीमती के. नूरजहां, भा. डा. से., पोस्ट मास्टर जनरल (दक्षिण क्षेत्र), मदुरै ने किया। उन्होंने कहा कि देश की पहचान उसके राष्ट्रध्वज, राष्ट्रगान व राष्ट्रभाषा से होती है। हिंदी देश के सभी क्षेत्रों में बोली जाती है। सरकारी कर्मचारी होने के नाते हमारा नैतिक कर्तव्य है कि हम राजभाषा के रूप में स्वीकार की गई हिंदी को बढ़ावा दें। राजभाषा हिंदी के विकास के लिए सभी लोगों को मिलकर निरंतर प्रयास करना चाहिए।

श्री ए. सुब्बैया, भा. डा. से., वरिष्ठ डाक अधीक्षक, तूतीकोरिन मंडल ने डाकघरों में हिन्दी के प्रयोग संबंधी रिपोर्ट प्रस्तुत की। उन्होंने बताया कि तूतीकोरिन मंडल के अन्तर्गत आने वाले सभी बड़े डाकघरों में राजभाषा कार्यान्वयन समिति की स्थापना की गयी है। सभी रबड़ की मोहरें, नाम बोर्ड इत्यादि द्विभाषिक रूप में बनवाये गये हैं। तूतीकोरिन नगर राजभाषा कार्यान्व्यन समिति की पहली बैठक में इस तरह की संयुक्त हिंदी कार्यशाला आयोजित करने का निर्णया लिया गया था।

श्री एस. सत्यनारायण रेड्डी, भा. दू. से., दूरसंचार जिला प्रबंधक ने अपने भाषण में बताया कि हिंदी देश की अधिक से अधिक जनता द्वारा बोली और समझी जानेवाली भाषा है। इसे सीखना आसान है। तूतीकोरिन में इस कार्यालय को सर्वकार्याभारी अधिकारी, हिंदी शिक्षण योजना के रूप में नामित किया गया है। इसलिए हमारा यह दायित्व है कि तूतीकोरिन स्थित केन्द्र सरकार के सभी कर्मचारियों को हिंदी शिक्षण योजना द्वारा प्रशिक्षित किया जा सके।

संकाय-सदस्यों ने इस दो दिवसीय हिंदी कार्यशाला में भारत सरकार की राजभाषा नीति के तहत विभिन्न कार्यक्रमों, हिंदी कार्यान्वयन, हिंदी शिक्षण योजना, प्रोत्साहन योजनायें, हिंदी भाषा संरचना, व्याकरण तथा राजभाषा नियम संबंधी व्याख्यान दिये।

समापन सत्र के दौरान श्रीमती के. नूरजहाँ, भा. डा. से., ने सभी प्रतिभागियों से अनुरोध किया कि वे अपने कार्यालयों में राजभाषा हिंदी का प्रयोग करें। तदनंतर, श्री ए. सुब्बैया, भा. डा. से., ने इस संयुक्त कार्यशाला की सफलता व आयोजन हेतु पत्तन न्यास के सभी पदाधिकारियों का आभार प्रकट किया। सभी प्रतिभागियों को प्रमाण-पत्र वितरित किये गये। अंत में, धन्यवाद ज्ञापन के साथ कार्यशाला समाप्त हुई।

भारत हैवी प्लेट एंड वेसल्स लिमिटेड विशाखापट्टणम

आंध्र प्रदेश के औद्योगिक नगर विशाखापट्टणम में स्थित भारत हेवी प्लेट एण्ड वेसल्स लिमिटेड के मानव संसाधन विकास एवं प्रशिक्षण संस्थान में 03 और 04 अगस्त, 1998 को राजभाषा कार्यान्वयन कक्ष के तत्वावधान में संस्था के विविध विभागों के कर्मचारियों के लिए दो दिवसीय हिंदी कार्यशाला चलाई गई। 03 अगस्त को राजभाषा कार्यान्वयन समिति की संयोजक एवं सामान्य प्रशासन विभाग की प्रबंधक श्रीमती बी. सरोजिनी ने हिन्दी कार्यशाला के उद्घाटन समारोह का स्वागत किया। अनुसंधान एवं विकास प्रभाग के महाप्रबंधक श्री एम. टी. एस. राजू द्वारा हिंदी कार्यशाला का उद्घाटन किया गया। उन्होंने अपने भाषण में कहा कि विश्व की संस्कृतियों की तुलना में भारत देश की संस्कृति एवं सभ्यता भिन्न है। इसकी पहचान हमारी राष्ट्र भाषा हिन्दी है। उन्होंने यह भी कहा कि राष्ट्र ध्वज और राष्ट्र गान की तरह हमारी राष्ट्र भाषा हिन्दी भी आदरणीय स्थान पर है और इसकेप्रचार-प्रसार में हम सब मिलकर अपना योगदान दें।

सामग्री प्रबंधन प्रभाग के वरिष्ठ प्रबंधक एवं बी एच पी वी राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्य श्री एम. ए. पापा ने समारोह के अध्यक्षता की। उन्होंने सभा को संबोधित करते हुए कहा कि हिन्दी कार्यशालाओं में बार-बार भाग लेने से हिन्दी में काम करने की मानसिकता कर्मचारियों में उत्पन्न होती है।

हिन्दी शिक्षण योजना के सहायक निदेशक श्री नागेश्वर ठाकुर समारोह के मुख्य अतिथि थे। उन्होंने दक्षिण भारत में हिन्दी भाषा के विकास एवं प्रचार का विश्लेषण करते हुए कहा कि प्रत्येक कर्मचारी हिन्दी को आत्मसात करने से देश की राजभाषा और राष्ट्रभाषा हिन्दी होने का उद्देश्य सफल होगा।

दो दिन चली इस हिन्दी कार्यशाला में नगर के विविध संस्थाओं में हिन्दी से जुड़े हुए अधिकारियों द्वारा राजभाषा नीति एवं अधिनियम, पत्राचार की पद्धतियां, पारिभाषिक शब्दावली, टिप्पणी एवं प्रारूप लेखन का अभ्यास इत्यादि विषयों पर व्याख्यान प्रस्तुत किए गए।

राष्ट्रीय आवास बैंक, प्रधान कार्यालय नई दिल्ली

दिनांक 30 जून, 1998 को राष्ट्रीय आवास बैंक के नई दिल्ली स्थित प्रधान कार्यालय सहायक प्रबंधक वर्ग के अधिकारियों के लिए एक हिन्दी कार्यशाला का आयोजन किया गया। इस अवसर पर बैंक के सहायक महाप्रबंधक श्री यू. एस. पांडे ने कार्यशाला का उद्घाटन किया एवं उपस्थित अधिकारियों को संबोधित करते हुए कहा कि बैंक के दैनंदिन कामकाज में हिन्दी के प्रयोग को अधिकाधिक बढ़ावा देना हमारा कर्त्तव्य है। इस अवसर पर विशेष वक्ता के रूप में उपस्थित श्री अशोक कुमार शर्मा, उप प्रबंधक (हिन्दी), भारत हैवी इलैक्ट्रिकल लि. ने कार्यशाला में उपस्थित अधिकारियों को "राजभाषा हिन्दी के प्रयोग में आने वाली समस्याओं एवं उनके समाधान पर सारगर्भित जानकारी दी। साथ ही उन्होंने हिन्दी भाषा के वर्तमान स्वरूप को भी स्पष्ट किया।

केन्द्रीय औषधि अनुसंधान संस्थान, लखनऊ

राजभाषा कार्यान्वयन के प्रगामी प्रयोग में गति लाने के उद्देश्य से नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, केन्द्रीय औषधि अनुसंधान संस्थान लखनऊ द्वारा नगर के केन्द्र सरकार के कार्यालयों के प्रशासनिक/हिन्दी अधिकारियों के लिए 29-30 जून, 1998 को एक दो-दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन किया गया। इस कार्यशाला का उद्घाटन 29-6-98 को संस्थान के लघु प्रेक्षाग्रह में लखनऊ विश्वविद्यालय के हिन्दी विभागाध्यक्ष प्रो. सूर्यप्रसाद दीक्षित ने किया। कार्यक्रम का शुभारम्भ नगर के ख्याति प्राप्त कवि श्री वाहिद अली 'वाहिद' की वाणी वंदना से हुआ। मुख्य अतिथि प्रो. दीक्षित ने अपने उद्घाटन भाषण में सर्वप्रथम नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति लखनऊ का दायित्व संभालने के लिए संस्थान के निदेशक एवं अध्यक्ष डॉ. सी. एम. गुप्ता तथा संस्थान के हिन्दी अधिकारी एवं सचिव, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, लखनऊ, डॉ. विजय नारायण तिवारी को हार्दिक बधाई दी और यह आशा व्यक्त की कि संस्थान इस गुरुतर दायित्व का निर्वाह बेहतर ढंग से कर सकेगा। प्रो० दीक्षित ने इतनी बड़ी संख्या में प्रशासनिक अधिकारियों को एक साथ उपस्थित देखकर प्रसन्नता व्यक्त की। अपने उद्घाटन भाषण में प्रो. दीक्षित ने शब्दावली के मानकीकरण, एकरूपता पर विशेष बल देते हुए नये-नये संकेताक्षरों के निर्माण एवं उसके व्यवहारिक प्रयोग पर भी बल दिया। कंप्यूटरों पर हिन्दी के प्रयोग की उपयोगिता बताते हुए इसके अधिकाधिक प्रयोग एवं हिन्दी में कंप्यूटर प्रोग्रामिंग के विकास की चर्चा करते हुए बताया कि जितने आधुनिक यांत्रिक उपकरण आते जा रहे हैं उसका हिन्दी के माध्यम से यदि हम उपयोग न कर पाये तो निश्चित रूप से अपेक्षित प्रगति राजभाषा के स्तर पर नहीं हो पायेगी। इसी अवसर पर विशिष्ट अतिथि के रूप में पधारे वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग के सेवानिवृत्त उप निदेशक डॉ. हरि मोहन कृष्ण सक्सेना ने पारिभाषिक शब्दावली एवं इस तरह की कार्यशालाओं के आयोजन की व्यवहारिक उपयोगिता के बारे में विस्तार से बताया। संस्थान के हिन्दी अधिकारी एवं सचिव, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति ने कार्यशाला की संपूर्ण रूप रेखा प्रस्तुत की उन्होंने यह बताया कि नगर के 40 कार्यालयों के लगभग 90 प्रशासनिक अधिकारी/हिन्दी अधिकारी इस कार्यशाला में भाग ले रहे हैं और यह अत्यन्त हर्ष का विषय है कि लगभग एक दर्जन कार्यालय प्रमुख भी इस कार्यशाला के उद्घाटन सत्र में उपस्थित थे।

उद्घाटन सत्र के बाद प्रथम सत्र में डॉ. हरिमोहन कृष्ण सक्सेना ने प्रशासनिक शब्दावली स्वरूप और प्रयोग विषय पर अपना अत्यन्त उपयोगी व्याख्यान प्रस्तुत किया। द्वितीय सत्र में क्रिश्चियन पी. पी. कालेज के हिन्दी विभागाध्यक्ष डॉ. सुरेन्द्र विक्रम ने सभी प्रतिभागियों को राजभाषा नीति, अधिनियम एवं नियमों की समेकित जानकारी दी।

कार्यशाला के दूसरे दिन कुल चार सत्र आयोजित किए गये। प्रथम सत्र में संस्थान के हिन्दी अधिकारी डॉ. विजय नारायण तिवारी, ने वार्षिक कार्यक्रम पर विस्तार से चर्चा की। दूसरे सत्र में पूर्वोत्तर रेलवे के अवकाश प्राप्त वरिष्ठ राजभाषा अधिकारी श्री जगतपित शरण निगम ने अधिकारियों द्वारा फाइलों पर लिखी जाने वाली टिप्पणी के स्वरूप और शिल्प पर बड़े ही रोचक ढंग से चर्चा की। संस्थान के प्रतिभाशाली वैज्ञानिक डॉ. प्रदीप कुमार श्रीवास्तव ने साइंटून के माध्यम से सभी प्रतिभागियों को सी. डी. आर. आई. के बारे बताया। भोजनोपरांत दूसरे दिन के चौथे सत्र में संस्थान के हिन्दी अधिकारी एवं सचिव नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा स्ट्रेस मैनेजमेंट पर बड़ा ही व्यवहारिक, उपयोगी एवं सारगर्भित व्याख्यान प्रस्तुत किया गया। इस व्याख्यान की उपस्थित सभी अधिकारियों ने भूरि-भूरि प्रशंसा की।

30-6-98 को इस दो-दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का समापन समारोह आयोजित किया गया। इस समारोह में नराकास बैंक के सदस्य सचिव श्री रमेश चन्द्र गुप्त भी उपस्थित थे। उन्होंने अपने वक्तव्य में दोनों समितियों के आपसी समन्वय से राजभाषा कार्यान्वयन में गति लाने के प्रयासों पर विशेष बल दिया। इस अवसर पर संस्थान के निदेशक एवं नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति के अध्यक्ष डॉ. सी. एम. गुप्ता ने कार्यशाला में भाग लेने वाले उपस्थित सभी 90 अधिकारियों को प्रमाण-पत्र वितरित किये एवं अपने अध्यक्षीय भाषण में सभी कार्यालयों के अधिकारियों को यह आश्वासन दिया

कि हम राजभाषा कार्यान्वयन में अपेक्षित गति लाने के लिए प्रतिबद्ध हैं और जो भी व्यवहारिक कठिनाई इस संबंध में आ रही हो उसे आप सब हमारे समक्ष रखें। हम उसे आपस में मिलकर निराकरण के सार्थक उपाय करेंगे।

केन्द्रीय इलेक्ट्रॉनिकी अभियांत्रिकी अनुसंधान संस्थान

देश की स्वाधीनता की 50वीं वर्षगांठ के उपलक्ष्य में केन्द्रीय इलेक्ट्रॉनिकी अभियांत्रिकी अनुसंधान संस्थान, सीरी, पिलानी की राजभाषा कार्यान्वयन समिति ने दिनांक 21-22 जुलाई, 98 को प्रशासनिक हिंदी कार्यशाला का विधिवत आयोजन किया। संस्थान के विभिन्न प्रशासनिक अनुभागों में कार्यरत लगभग 110 कर्मचारियों/अधिकारियों ने इस कार्यशाला में सक्रिय रूप से भाग लिया। इस अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में श्री तुरशन पाल पाठक, वरिष्ठ वैज्ञानिक (सेवानिवृत्त), राष्ट्रीय विज्ञान सूचना संस्थान, नई दिल्ली, तथा श्री कृष्ण कुमार ग्रोवर, पूर्व सचिव, संसदीय राजभाषा समिति, श्री ललित राज मीणा, प्रशासन नियंत्रक, राष्ट्रीय भौतिकी प्रयोगशाला, नई दिल्ली तथा श्री पूरन पाल, हिन्दी अधिकारी, परिषद् मुख्यालय, नई दिल्ली संकाय सदस्य के रूप में उपस्थित थे।

संस्थान के हिंदी अधिकारी एवं कार्यशाला के संयोजक श्री श्यामनारायण मिश्र ने उद्घाटन सत्र का संचालन करते हुए प्रशासनिक कर्मचारियों के लिए ऐसी कार्यशालाओं की उपयोगिता एवं अनिवार्यता पर प्रकाश डालते हुए बताया कि इन कार्यशालाओं के माध्यम से ही कर्मचारियों को हिंदी में काम करने के लिए प्रेरित, प्रोत्साहित एवं प्रशिक्षित किया जा सकता है। उन्होंने प्रतिभागियों को आश्वासन दिया कि इस प्रकार के प्रयास निरंतर होते रहेंगे।

उद्घाटन सत्र में अपने स्वागत भाषण में प्रशासनिक अधिकारी श्री स्वतन्त्र कुमार सदाना ने मुख्य अतिथि, संकाय सदस्यों, आयोजन समिति के अध्यक्ष, राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्यों, निदेशक महोदय एवं कार्यशाला के प्रतिभागियों का स्वागत करते हुए उनसे सक्रिय सहयोग देने की अपेक्षा की।

प्रशासनिक हिंदी कार्यशाला की आयोजन समिति के अध्यक्ष श्री नरेश पाल, प्रशासन नियंत्रक ने बड़े रोचक ढंग से कार्यशाला की पृष्ठभूमि, इसके महत्व एवं उदेश्यों पर प्रकाश डाला। उनके अनुसार इस कार्यशाला का उद्देश्य किसी को हिंदी वर्णमाला अथवा वर्तनी का ज्ञान कराना नहीं है बल्कि कर्मचारियों को एक अनुकूल वातावरण बनाकर उन्हें अपने कामकाज में अधिक से अधिक हिंदी का प्रयोग करने के लिए प्रेरित व प्रोत्साहित करना है। उन्होंने जोर देकर कहा कि प्रशासन वह सभी सुविधाएं उपलब्ध करने का प्रयास कर रहा है जिससे कि हिंदी का काम उत्तरोत्तर बढ़ता रहे। उन्होंने कर्मचारियों से यह अनुरोध किया कि वे अपने कामकाज में हर स्तर पर हिंदी का प्रयोग करने का प्रयास करें।

उद्घाटन सत्र में मुख्य अतिथि एवं संकाय सदस्यों का परिचय कराते हुए परिषद मुख्यालय के हिंदी अधिकारी श्री पूरन पाल ने कहा कि यह संस्थान राजभाषा के प्रगामी प्रयोग की दिशा में निरंतर प्रयासरत रहा है। परिषद मुख्यालय की और से उन्होंने हर संभव सहायता देने का आश्वासन देते हुए निदेशक महोदय से अनुरोध किया कि इस प्रकार के आयोजन निरंतर करवाते रहने का प्रयास किया जाय।

प्रशासनिक हिंदी कार्यशाला में उद्घाटन सत्र पर मुख्य अतिथि के रूप में व्याख्यान देते हुए श्री तुरशन पाल पाठक ने निदेशक को उन्हें यह अवसर प्रदान करने के लिए धन्यवाद दिया और कहा कि परिषद् मुख्यालय द्वारा व्यय की गई धनराशि से उन्हें जो भी अब तक अनुभव मिले हैं उन्हें इस संस्थान के सहकर्मियों के साथ बांटना उनका कर्त्तव्य है। उनके अनुसार परिषद् में हिंदी का काम दो स्तरों पर किया जाता है। एक स्तर पर तो वैज्ञानिक वर्ग अपनी उपलब्धियों को जनमानस तक पहुंचाने का प्रयास हिंदी भाषा के माध्यम से करते हैं और दूसरे स्तर पर प्रशासनिक कर्मचारी इन कामों को आगे बढ़ाने में उनकी सहायता करते हैं। उन्होंने कहा कि भारत में अपार संपदा है, संभावनाएं है, कच्चा माल है, बाजार है, जिसे विदेशी बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने स्वीकार किया और वे यहां पर आकर हर क्षेत्रीय भाषा के माध्यम से आम जनता तक अपनी पकड़ मजबूत करती जा रहीं हैं। यहां तक कि विदेशों के ज्ञानपरक तकनीकी ज्ञान को डिस्कवरी चैनल व अन्य चैनलों की सहायता से हिंदी माध्यम से जनसाधारण तक पहुंचाएं जा रहे हैं। इस बात को अब हमारे देशवासी भी जान चुके हैं और उन्होंने विभिन्न समाचार पत्र/पत्रिकाओं के माध्यम से तकनीकी ज्ञान को आम जनता तक पहुंचाना शुरू किया है। भारत की संपदा नामक विश्वकोश भी अब उपलब्ध हो गया है। परिषद् मुख्यालय की ओर से ली जाने वाली उच्चस्तरीय परीक्षाओं में द्विभाषी प्रश्न पत्रों की सुविधा उपलब्ध है। शायद ही ऐसा कोई विषय हो जिसे हिंदी के माध्यम से अभिव्यक्त करने में कठिनाई प्रतीत होती हो। उन्होंने संस्थान के वैज्ञानिकों व अन्य कर्मचारियों का आह्वान करते हुए परामर्श दिया कि संस्थान द्वारा अर्जित उपलब्धियों व सफलता-कथाओं को छोटी-छोटी पुस्तकों के रूप में हिंदी माध्यम से जनसाधारण तक पहुंचाने का प्रयास किया जाय। उन्होंने अपने व्याख्यान का समापन लघुकथा के माध्यम से "आशावादी दृष्टिकोण" के साथ काम करने के परामर्श के साथ किया।

अपने संक्षिप्त व्याख्यान में संस्थान के निदेशक प्रो. र. बिश्वास ने श्री पाठक जी के व्याख्यान की प्रशंसा की और आश्वासन दिया कि उनके द्वारा बढ़ाए गए जोश व उम्मीद के साथ हम सभी भविष्य में कार्य करेंगे। प्रशासनिक कामकाज के संबंध में उन्होंने कहा कि हमारा यह दायित्व है कि हम अपने कामकाज में हिंदी का अधिकाधिक प्रयोग करें परन्तु दुर्भाग्य का विषय है कि कुछ साथी हिंदी में काम करने पर होने वाली गलतियों के पकड़े जाने के डर से निरंतर अंग्रेजी में ही काम करते रहते हैं क्योंकि उनका मानना है कि अंग्रेजी में काम करने पर होने वाली गलतियों पर उनका उपहास नहीं होगा जबकि हिंदी में ऐसा करने पर उपहास अवश्य होगा। तथापि उन्होंने बताया कि संस्थान में हिंदी का प्रयोग निरंतर बढ़ रहा है। राजभाषा कार्यान्वयन समिति इस दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है और इस कार्यशाला के बाद हिंदी का प्रयोग और भी बढ़ेगा। इसी विश्वास के साथ उन्होंने मुख्य अतिथि सहित सभी संकाय सदस्यों व प्रतिभागियों का हार्दिक धन्यवाद किया।

भूमि तथा विकास कार्यालय

भूमि तथा विकास कार्यालय (शहरी कार्य और रोजगार मंत्रालय के अधीन एक अधीनस्थ कार्यालय) में 24 से 26 जून, 1998 तक तीन दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन किया गया । यह कार्यशाला कार्यालय के तकनीकी विंग में कार्यरत तकनीकी स्टाफ को हिन्दी में कार्य करने में आने वाली कठिनाइयों का समाधान करने के उद्देश्य से चलाई गयी। इस कार्यशाला में इंजीनियर अधिकारी श्री लक्ष्मण दास गनोत्रा के नेतृत्व में 20 कार्मिकों ने भाग लिया । कार्यशाला का उद्घाटन भूमि तथा विकास अधिकारी डा. राजेश कुमार ने दीप प्रज्वलित करके किया ।

अपने उद्घाटन संबोधन में डा. राजेश कुमार ने सहभागियों का आह्वाहन किया कि अपना यथा सम्भव कार्य राजभाषा हिन्दी में करके अपने संवैधानिक दायित्व का पूरी निष्ठा से निर्वाह करें । उन्होंने आशा व्यक्त की कि इस कार्यालय में हिन्दी कार्यान्वयन के कार्यकलापों का जो सिलसिला अब शुरू हुआ है, वह भविष्य में और तेज होगा और इसमें सभी कार्मिकों का सार्थक सहयोग मिलेगा । कार्यशाला के सफल आयोजन के लिए उन्होंने जन-संपर्क अधिकारी, हिन्दी अधिकारी और हिन्दी अनुवादक को बधाई दी ।

इस कार्यशाला के प्रथम सत्र में व्याख्यान देने के लिए पधारे सूचना और प्रसारण मंत्रालय के निदेशक (राजभाषा) श्री समय सिंह कटारिया ने सहभागियों को कुछ व्यावहारिक नुक्ते बताये और सभी से हीन भावना और झिझक त्याग कर खुले दिमाग से सरल बोलचाल की भाषा में अपना कार्य हिन्दी में करने का रास्ता दिखाया । दूसरे सत्र में निर्माण महानिदेशालय में उप-निदेशक (राजभाषा) श्री बलदेव राज ने हिन्दी वर्तनी की जानकारी दी जिसे सभी सहभागियों ने बड़ी लगन से सीखा और सराहा । इसके बाद कार्यालय में हिन्दी अधिकारी श्री मनोज आबूसरिया ने हिन्दी वर्णमाला की वैज्ञानिकता विषय पर अपना व्याख्यान दिया जो सभी के लिए एक नई तथा रोचक जानकारी थी ।

तीसरे सत्र में मुख्य इंजिनियर अंचल-1 (के.लो.नि.वि.) में कार्यरत सहायक निदेशक (राजभाषा) श्री डी.एस. नेगी ने सहभागियों से हिन्दी में टिप्पण/प्रारूप लेखन का अभ्यास कराया और रोजमरां सरकारी कार्य में प्रयुक्त होने वाले हिन्दी तथा अंग्रेजी के शब्दों की जानकारी दी । इसके तुरन्त बाद एक परीक्षा ली गयी । इसमें श्री आर.एल. सिंगला, भवन अधिकारी ने प्रथम, श्री ब्रह्मपाल सिंह, ओवरसीयर ने द्वितीय और सुलेख मलिक, ओवरसीयर ने तृतीय स्थान प्राप्त करके क्रमश: 500/-रु.; 400/-रु. और 300/-रु. के पुरस्कार जीते । शेष सहभागियों को भी प्रमाण-पत्र के साथ-साथ प्रोत्साहन पुरस्कार प्रदान करने की घोषणा की गई है । पुरस्कार विजेताओं को पुरस्कारों का वितरण शीघ्र ही किया जायेगा ।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, जालंधर

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की 19-8-98 को आयोजित बैठक में किए गए निर्णय के अनुसार—भारतीय जीवन बीमा निगम, मण्डल कार्यालय, जालंधर के प्रशिक्षण हाल में आज संयुक्त हिन्दी कार्यशाला का आयोजन किया गया । इसमें केंन्द्रीय सरकार के विभिन्न कार्यालयों, बैंकों, निगमों आदि से बड़ी संख्या में कर्मचारियों ने भाग लिया ।

संयुक्त कार्यशाला का उद्घाटन भारतीय जीवन बीमा निगम, जालन्धर के वरिष्ठ मण्डल प्रबन्धक श्री आर.सी. मधु के करकमलों से हुआ। अपने संक्षिप्त किन्तु सारगर्मित वक्तव्य में उन्होंने सभी प्रतिभागियों को सरकारी कामकाज में बोलचाल की सरल हिन्दी का प्रयोग करने का अनुरोध किया। उन्होंने आशा की कि आज की संयुक्त हिन्दी कार्यशाला के बाद सभी प्रतिभागी अपनी दृढ़ शक्ति से हिन्दी में कामकाज करना प्रारम्भ करेंगें ।

कार्यशाला में प्रतिभागियों को, संघ की राजभाषा नीति, हिन्दी में नोटिंग, ड्राफ्टिंग व पत्राचार करने सम्बन्धी प्रशिक्षण दिया गया । राजभाषा शब्दावली तथा हिन्दी में काम करने में आने वाली समस्याओं पर भी चर्चा की गई । कार्याशाला के आयोजन में भारतीय जीवन बीमा निगम के प्रबन्धक (का. एवं औ. सं.) श्री आई.जी. गुप्ता ने सक्रिय सहयोग प्रदान किया । कार्यशाला में केनरा बैंक, पंजाब एण्ड सिंध बैंक, दूरदर्शन केन्द्र, भारतीय जीवन बीमा निगम के राजभाषा अधिकारियों ने प्रशिक्षण दिया । कार्यशाला का संचालन सहायक निदेशक व सचिव नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, जालन्धर द्वारा किया गया ।

हिंदी दिवस

भारतीय पेट्रोलियम संस्थान, देहरादून

भारतीय प्रेट्रोलियम संस्थान, देहरादून में हिंदी दिवस समारोह का शुभारंभ प्रख्यात आलोचक एवं साहित्यकार प्रो. विजयेन्द्र स्नातक ने दीप प्रज्वलित कर किया । राष्ट्रभाषा का आह्वान करते हुए उन्होंने कहा कि स्वतंत्र राष्ट्र में राष्ट्र ध्वज और राष्ट्रगान तो प्रतीकात्मक रूप में राष्ट्र की पहचान हैं । राष्ट्रभाषा राष्ट्र की धमनियों में संचरित होने वाली राष्ट्रीयता की जीवन्त रुधिर-धारा है । इसके बिना जन-जन का न तो पारस्परिक सम्पर्क संभव है और न एकत्व की भावना को ही प्रश्रय प्राप्त हो सकता है। राष्ट्रभाषा के बिना हमें अन्य देशवासियों के समक्ष हीन भावना का अनुभव होता है। किसी भी राष्ट्र को अपनी अस्मिता की पहचान के लिए जिन प्रतीकों, चिन्हों, उपकरणों, साधनों आदि की आवश्यकता होती है उनमें भाषा का विशेष महत्व है। राजभाषा हिंदी को संवैधानिक दृष्टि से प्राप्त अधिकार व पद नहीं मिल रहा है इसके पीछे कुछ भय, संदेह और मिथ्यास्पर्धा का वातावरण है। भय कल्पित है, संदेह भ्रममूलक है। स्पर्धा व्यर्थ और अनावश्यक है। इसके साथ ही अपनी संस्कृति और सभ्यता के प्रति अनास्था भी एक कारण है। अंग्रेजों ने अपने शासनकाल में पढ़े-लिखे भारतीयों के मन में भारतीय संस्कार, भारतीय जीवनदर्शन, स्वदेशी वस्तु और स्वधर्म के प्रति अनास्था उत्पन्न करने का भरसक प्रयास किया और उन्हें सफलता भी मिली। शिक्षा के माध्यम का निर्णय करने तथा शिक्षा पद्धति में आवश्यक परिवर्तन करने में पांच आयोग बन चुके हैं। इन आयोगों की सिफारिशों से जो सुझाव आए उनके दो परिणाम हुए—पहला सुखद परिणाम तो यह हुआ कि कई राज्यों में क्षेत्रीय भाषाओं को माध्यम के रूप में स्वीकार किया गया और अंग्रेजी का बोझ विद्यार्थियों के कंधों से दूर हुआ। दूसरी ओर तमिलनाडु और बंगाल में हिंदी को तो सर्वथा तिरस्कृत कर ही दिया गया साथ ही अपनी क्षेत्रीय भाषा तमिल और बंगला को भी माध्यम के रूप में प्रतिष्ठित नहीं किया। अंग्रेजी का मिथ्यामोह या व्यामोह उन्हें आज भी भटका रहा है और इन राज्यों में अंग्रेजी की परवरिश पूरे समारोह के साथ की जा रही है। यदि त्रिभाषा फार्मूला प्रारंभ में ही स्पष्ट कर के अनिवार्य रूप से प्रचलित कर दिया जाता तो हिंदी की स्थिति मजबूत हो जाती।

समारोह में आगे बोलते हुए प्रो. स्नातक ने कहा कि भारत में पुनर्जागरण की लहर पहले बंगाल में तदनंतर उत्तर भारत में आई। बंगाल में राजाराम मोहन राय इसके कर्णधार बने और उन्होंने सामाजिक सुधार के श्रेष्ठ कार्य किए। बंगला भाषा में क्रांतियुग उसी समय आया। उत्तर भारत में पुनर्जागरण का श्रेय स्वामी दयानंद सरस्वती का है। स्वामी जी ने अपनी मातृभाषा गुजराती व प्रयत्नलब्ध संस्कृत को छोड़कर हिंदी द्वारा सुधार आंदोलन चलाया और एक दर्जन से अधिक ग्रंथों का हिंदी में निर्माण किया। पुनर्जागरण की उस लहर में भारतेन्दु हरिशचन्द्र युग के लेखक जैसे—महाबीर प्रसाद द्विवेदी, प्रेमचन्द, मैथिलीशरण गुप्त व श्रीधर पाठक उसी युग की देन हैं।

हिंदी के उन्नयन में विदेशी विद्वानों का भी बहुत हाथ रहा है। 1868 में समकालीन ले. गवर्नर सर टामसन ने विज्ञप्ति निकालकर हिंदी में पुस्तकें लिखवाई और श्रेष्ठ ग्रंथों का हिंदी में अनुवाद कराया। ईसाई पादरियों ने उस समय जिस निष्ठा से हिंदी सीखी वह भी चकित करने वाली बात है। पादरी एथरिंगटन का "भाषा भावना" नामक हिंदी व्याकरण तो बहुत अर्से तक हिंदी स्कूलों में पाठ्यग्रंथ बना रहा। साथ ही सत्रहवीं सदी में जॉनकेटेलर सूरत में व्यापार के लिए आया था हिंदुस्तान में आकर डच भाषा में उसने हिंदी का व्याकरण 1685 में लिखा। अल्डहाम, रुडाल्फ, टसिटरी, पिनकाट आदि विद्वानों ने हिंदी को भारत की प्रमुख भाषा स्वीकार करते हुए प्रशासन को परामर्श दिया था कि इस भाषा के साहित्य की रक्षा की जाए और हिंदी भाषा को शिक्षा का माध्यम बनाया जाए। उन्होंने बताया कि आज तक 'उदंत मार्तण्ड' को हिंदी का सर्वप्रथम प्रकाशित पत्र माना जाता था जबकि इससे भी पहले 'समाचार सुधावर्षण' सन् 1854 में कलकत्ता में प्रकाशित किया जा चुका था। अतः हिंदी का सर्वप्रथम समाचार पत्र 'सुधावर्षण' ही था। हिंदी के विकास में अहिंदी भाषी प्रांतों के हिंदी प्रेमी विद्वानों का अभूतपूर्व योगदान रहा जिसमें बंकिम चन्द्र, श्यामचरण मित्र, स्वामी दयानंद सरस्वती, केशवचन्द्र सेन, अमृत लाल चक्रवर्ती, डॉ इकबाल, लज्जाराम मेहता, पंडित लक्ष्मण नारायण गर्ड आदि के नाम उल्लेखनीय है। अंत में उन्होंने भाषाई एकता पर बल देते हुए कहा कि हमें भाषाई विवाद में न पड़ते हुए अपने स्वाभिमान की रक्षा करनी चाहिए और भाषा के प्रति हममें आत्मगौरव का संचार होना चाहिए । उन्होंने संस्थान से प्रकाशित 'विकल्प' पत्रिका के स्तरीय सम्पादन की भी भूरि-भूरि प्रशंसा की ।

'विकल्प' पत्रिका के सम्पादक एवं युवासाहित्यकार डॉ दिनेश चमोला की बाल साहित्य की पुस्तकों पर बोलते हुए प्रो. स्नातक ने कहा कि बच्चों के लिए लिखने वाले सच्चे अर्थों में आज बहुत कम लोग हैं। बाल साहित्य लिखना एक नितांत जोखिम भरा कार्य है और इसे यह युवा लेखक डॉ. दिनेश चमोला बखूबी निभा रहे हैं। जो उनके उज्ज्वल भविष्य का प्रतीक है। इस अवसर पर उन्होंने डॉ चमोला की हाल ही में प्रकाशित 20 बाल पुस्तकों— ''फूलों का राजकुमार'', ''सौनचिरैया का देश'', ''भिखारी की अंगूठी'', ''अहंकारी लकड़हारा'', ''स्वप्नपरी का महल'', ''चोर की दाढ़ी में तिनका'', ''चंपा का राजकुमार'', ''ईमानदार गडेरिया'', ''फूलों का देवता'', ''सत्य की परीक्षा'', ''ईमानदार देवदास'', ''नामदेव की निष्ठा'', ''स्वप्नदेश की राजकन्या'', ''टीनू की सूझबूझ'', ''माता-पिता की सीख'', '' सत्यमेव जयते'', ''लालची बुढ़िया'', ''खुशियों का गांव'', ''उपकार का बदला'' एवं ''सांच को आँच नहीं'' का भी लोकार्पण किया।

संस्थान के कार्यकारी निदेशक डॉ. अरुणाभा दत्ता ने इस अवसर पर बोलते हुए कहा कि विज्ञान को सहज व सरल रूप में अभिव्यक्त करने की मानसिकता होनी चाहिए। भाषा के क्लिष्ट पक्ष को ध्यान में न रखकर हमें सहज व सरल रूप को ही महत्व देना चाहिए। उन्होंने सभी वैज्ञानिकों को अपने-अपने क्षेत्रों में यथासंभव हिंदी के प्रयोग करने का आह्वान किया।

समारोह का संचालन करते हुए डॉ. दिनेश चमोला ने कहा कि अंग्रेजी हमें आसमान की ऊँचाइयों तक भले ही ले जाती हो उसी के समानांतर हिंदी हमें जन-जीवन की गहराइयों से यथार्थता पूर्वक जोड़ती है। राजभाषा हिंदी तोड़ती नहीं। अपितु संबंधों को निकट लाकर जोड़ती है। जितना इसका वैज्ञानिक क्षेत्र में प्रयोग बढ़ेगा उतनी ही वैज्ञानिक लोकप्रियता भी जनसाधारण तक पहुँच पाएगी। मौलिक अभिव्यक्ति को राजभाषा हिंदी में यथार्थ परक अभिव्यक्ति देना आज के वैज्ञानिक परिवेश की विशेष चुनौती है।

समारोह के दूसरे वक्ता डॉ. हरीश नवल ने हिंदी के अंतर्राष्ट्रीय स्वरूप को उजागर करते हुए इस बात पर बल दिया कि आज हिंदी का विश्व के अनेक देशों में महत्वपूर्ण रूप से प्रयोग हो रहा है। इस संदर्भ में उन्होंने विभिन्न देशों में हुए अपने व्यक्तिगत अनुभवों को भाषाई एकता एवं राजभाषा हिंदी की वैज्ञानिकता से जोड़ते हुए इसके महत्व को रेखांकित किया। उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि विश्वस्तर पर अलग-अलग देशों में रहकर भी हिंदी प्रेमी विद्वान इसके व्याकरण, भाषा विज्ञान एवं उन्नयन के प्रति न केवल सतत प्रयासरत हैं अपितु महत्वपूर्ण योगदान भी निरंतर जारी रखे हुए हैं। उन्होंने कई विदेशी विद्वानों जैसे डॉ. अभिमन्यु अनत, प्रहलाद रामशरण, डॉ लोथार लुत्से, डॉ ओदोलेन स्मेकल, प्रो. ब्रिस्की, डॉ लुईसिंग, बिलग्रेट्स आदि विद्वानों के न केवल हिंदी विपयक संस्मरण सुनाए अपितु उनके हिंदी में किए जा रहे विशेप योगदान को भी रेखांकित किया। उन्होंने इस दिवस को औपचारिक रूप में न मनाने की बात कह कर यह भी स्पष्ट किया कि हमारा विरोध अन्य भाषाओं से नहीं है केवल अपनी भाषा के संरक्षण एवं परिवर्द्धन से है। उन्होंने कई विदेशी विद्वानों के हिंदी प्रेम की सराहना करते हुए कहा कि कई विद्वानों ने भारत को अपनी कर्मभूमि बनाया जबकि कई अन्य विद्वानों ने विदेशों में रहकर भी हिंदी की वह सेवा की है जो हिंदी प्रदेशों के विद्वान भी नहीं कर सके हैं।

इस अवसर पर हिंदी माह के दौरान आयोजित की गई विभिन्न प्रतियोगिताओं तथा वर्प-भर में किए गए हिंदी काम-काज करने वाले कर्मचारियों/निर्णायकगणों को भी मुख्य अतिथि प्रो. विजयेन्द्र स्नातक तथा कार्यकारी निदेशक डॉ. अरुणाभा दत्ता ने पुरस्कार वितरित किए।

समारोह के अंत में संस्थान के प्रशासन नियंत्रक श्री ए. मुत्तुकृष्णन ने धन्यवाद ज्ञापित करते हुए कहा कि हिंदी में अधिकाधिक योगदान देना हम सबका नैतिक कर्त्तव्य है। इसलिए प्रत्येक अधिकारी-कर्मचारी को इसको बढ़ावा देने में पहल करनी चाहिए।

इस समारोह को सफल बनाने में संस्थान के अन्य कर्मचारियों के अतिरिक्त राजभापा अनुभाग का विशेप योगदान रहा।

इफको कांडला

इफको कांडला उत्पादन, गुणवत्ता, सुरक्षा, सामाजिक व सांस्कृतिक क्षेत्रों के साथ-साथ भारत सरकार की राजभाषा, नीति के अनुपालन की दृष्टि से प्रतिवर्ष की भांति इस वर्ष भी इकाई में 13 से 21 सितम्बर, 1998 तक हिन्दी पखवाड़ा मनाया गया।

13 सितम्बर, 1998 को **हिन्दी दिवस** की पूर्व संध्या पर इफको कांडला के उदयनगर टाउनशिप, गांधीधाम में एक हास्य कवि सम्मेलन का आयोजन किया गया। कवि सम्मेलन में कवियों ने अपनी हास्य व अन्य रस की कविताओं से दर्शकों को भाव विभोर कर दिया। श्री एस. के. मिश्रा, महाप्रबंधक ने अपने कर-कमलों द्वारा दीप जलाकर **हिंदी पखवाड़े** का शुभारंभ किया। इस अवसर पर उन्होंने हिन्दी दिवस के ऐतिहासिक महत्व को बताते हुए कहा कि यह कैसी विडम्बना है कि हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा होते हुए अपने ही देश में हमें हिन्दी पखवाड़ा मनाना पड़ रहा है। उन्होंने हिन्दी में काम करने के संकल्प को दोहराते हुए कहा कि हम हिन्दी पखवाड़ा नहीं हिन्दी वर्ष मनायें। उन्होंने हिन्दी पखवाड़े की प्रतियोगिताओं के विधिवत् उद्घाटन की घोपणा करते हुए कहा कि राजभाषा कार्यान्वयन के क्षेत्र में कांडला ने जो स्थान बनाया है इसी परम्परा को आप सभी बनायें रखेंगे। ऐसी मैं आशा करता हूँ। इस पर उन्होंने कर्मचारियों को हिन्दी में काम करने के लिए एक अपील जारी की।

श्री एस.पी. यादव, संयुक्त महा प्रबंधक (प्रचालन)-व-अध्यक्ष, राजभाषा कार्यान्वयन समिति ने सभी का स्वागत करते हुए राजभाषा हिन्दी के कार्यान्वयन के क्षेत्र में इफको कांडला की उपलब्धियों के बारे में बताने के साथ उन्होंने यह भी बताया कि हिन्दी पखवाड़े की प्रतियोगिता के अतिरिक्त कांडला इकाई में कार्यालयीन कामकाज में हिन्दी को प्रोत्साहित करने की दृष्टि से हिन्दी में मूल टिप्पण व प्रारूप लेखन नकद प्रोत्साहन योजना, हिन्दी टाइपिंग नकद प्रोत्साहन योजना, हिन्दी कार्यशालाएं, हिन्दी कम्प्यूटर प्रशिक्षण, हिन्दी अनुवाद प्रशिक्षण के साथ केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिपद, नई दिल्ली की प्रतियोगिताओं का भी आयोजन किया जाता है।

हिन्दी पखवाड़ा के दौरान कर्मचारियों के लिए हिन्दी निबंध प्रतियोगिता, हिन्दी अनुवाद प्रतियोगिता, हिन्दी टिप्पण व प्रारूप लेखन प्रतियोगिता तथा

हिन्दी कम्प्यूटर प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। इसके अतिरिक्त कर्मचारियों के पारिवारिक सदस्यों के लिए निबंध प्रतियोगिता भी आयोजित की गई । छोटे बच्चों के लिए हिन्दी सुलेख प्रतियोगिता का भी आयोजन किया गया जिसमें कक्षा 1 से 4 तक के बच्चों ने भाग लिया। इन प्रतियोगिताओं में कर्मचारियों व उनके आश्रित पारिवारिक सदस्यों ने उत्साह के साथ बड़ी संख्या में भाग लिया। इस वर्ष भी कर्मचारियों के लिए अखिल इफको स्तरीय निबंध व पारिभाषिक शब्द ज्ञान प्रतियोगिता का भी आयोजन किया गया।

केंद्रीय रेशम उत्पादन अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान

दिनांक 01-09-98 से 14-09-98 तक केन्द्रीय रेशम उत्पादन अनुसंधान एवं प्रशिक्षण संस्थान, बहरमपुर (प. बंगाल) में हिन्दी पखवाड़ा का आयोजन किया गया। उक्त पखवाड़ा के अन्तर्गत विभिन्न हिन्दी प्रतियोगिताओं एवं अभिविन्यास कार्यक्रम का आयोजन किया गया। इसमें संस्थान के सभी 23 अनुभागों के लगभग 200 अधिकारियों/कर्मचारियों ने भाग लिया ।

दिनांक 01-09-98 को हिन्दी पखवाड़ा का उद्घाटन किया गया। उद्घाटन समारोह की अध्यक्षता संस्थान के संयुक्त निदेशक (अनुसंधान व समन्वय), डॉ एस. के. सेन ने की। उक्त अवसर पर अपने अध्यक्षीय भाषण में डॉ. सेन ने हिन्दी भाषा के महत्व पर प्रकाश डाला । इस अवसर पर सभी अधिकारियों/कर्मचारियों से यह अपील की गई कि वे हिन्दी पखवाड़ा के दौरान समस्त सरकारी कामकाज हिन्दी में ही करें ।

दिनांक 02-09-98 से 11-09-98 तक टिप्पण एवं आलेखन प्रतियोगिता, शब्दावली प्रतियोगिता, निबन्ध प्रतियोगिता तथा प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। इसके अतिरिक्त संस्थान के 23 अनुभागों के अधिकारियों/कर्मचारियों के लिए अभिविन्यास कार्यक्रम का आयोजन भी किया गया। जिसमें उन्हें राजभाषा नियम/अधिनियम के बारे में विस्तृत जानकारी दी गई। अभिविन्यास कार्यक्रम का संचालन संस्थान के हिन्दी अधिकारी, श्री एस. के. उपाध्याय ने किया।

दिनांक 14-09-98 को हिन्दी दिवस तथा हिन्दी पखवाड़ा के मुख्य समारोह का आयोजन किया गया। इस अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में पश्चिम बंगाल सरकार के जिला पादप संरक्षण पदाधिकारी, श्री आर. एस. पाठक मुख्य अतिथि के रूप में मौजूद थे। समारोह की अध्यक्षता संस्थान के निदेशक, डॉ. बी. शरतचन्द्र ने की।

मुख्य अतिथि पद से बोलते हुए श्री पाठक ने हिन्दी भाषा को भारतीयता का प्रतीक बताया। उन्होंने भाषा एवं संस्कृति में अटूट सम्बन्ध बताते हुए यह कहा कि वर्तमान समय की यह माँग है कि हम भारतीय भाषाओं के साथ-साथ हिन्दी की समृद्धि सुनिश्चित करें। उन्होंने कहा कि संविधान के प्रावधानों के अनुसार हर प्रदेश की मुख्य भाषा को उस राज्य की राजभाषा का दर्जा दिया जाना चाहिए तथा हिन्दी को अन्तर्राज्यीय पत्राचार तथा संघ के साथ पत्राचार के उद्देश्य के लिए प्रयोग में लाया जाना चाहिए।

अपने अध्यक्षीय भाषण में डॉ. बी. शरतचन्द्र ने कहा कि भाषा चाहे कोई भी हो वह प्रेम एवं सद्भाव की प्रतीक होती है तथा एक व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति से जोड़ती है। हिन्दी भाषा की विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए उन्होंने कहा कि हिन्दी भाषा एक ऐसी भाषा है जो कश्मीर से कन्याकुमारी तथा दक्षिणी राज्यों से पूर्वोत्तर राज्यों को एकता के सूत्र में बाँधती है। उन्होनें कहा कि विडम्बना है कि भारत एक ही प्रदेश के नागरिक को दूसरे प्रदेश के नागरिक के साथ सम्पर्क स्थापित करने हेतु विदेशी भाषा का सहारा लेना पड़ता है। इस अवसर पर अन्य वक्ताओं में संस्थान के संयुक्त निदेशक श्री के. सी. मंडल तथा संयुक्त सचिव (तकनीकी), श्री जे. मानि एवं क्षेत्रीय रेशम उत्पादन अनुसंधान केन्द्र, राँची से आये उप-निदेशक, डॉ. वासुदेव सिंह ने भी अपने विचार अभिव्यक्त किए।

हिन्दी पखवाड़ा के मुख्य समारोह के अवसर पर संस्थान में आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं के विजेता प्रतिभागिओं को प्रथम, द्वितीय, तृतीय एवं सांत्वना पुरस्कार प्रदान किए गए। सर्वश्रेष्ठ सरकारी काम करने वाले अनुभाग तथा अधीनस्थ केन्दों को राजभाषा चलशील्ड का वितरण किया गया। हिन्दी में सर्वाधिक शब्द संख्या लिखने वाले अधिकारियों/कर्मचारियों को प्रशस्ति-पत्र तथा पुरस्कार राशि भी प्रदान किए गए। इस अवसर पर संस्थान के लगभग 200 अधिकारी/कर्मचारी उपस्थित थे। राजभाषा के वार्षिक प्रगति रिपोर्ट का प्रस्तुतीकरण तथा पूरे कार्यक्रम का संचालन संस्थान के हिन्दी अधिकारी श्री एस. के. उपाध्याय ने किया।

धन्यवाद ज्ञापन श्री के. सी. मंडल, संयुक्त निदेशक, केन्द्रीय रेशम उत्पादन अनुसंधान एंव प्रशिक्षण संस्थान, बहरमपुर (पं. बंगाल) ने किया। कार्यक्रम के अन्त में संस्थान के अधिकारियों/कर्मचारियों के द्वारा एक भव्य सांस्कृतिक कार्यक्रम का आयोजन किया गया जिसमें लोकगीत, समूह गान,कविता पाठ के अलावा लोकनृत्य आदि का भव्य आयोजन किया गया।

कार्यालय आयुक्त, केंद्रीय उत्पाद शुल्क एवं सीमा शुल्क, इन्दौर

माणिक बाग पैलेस स्थित केन्द्रीय उत्पाद शुल्क व सीमा शुल्क आयुक्तालय में 1 से 14 सितम्बर तक हिन्दी पखवाड़ा मनाया गया, इसके अन्तर्गत हिन्दी टकंण, शुद्ध लेखन, सामान्य ज्ञान, निबंध व तात्कालिक भाषण प्रतियोगिताएं आयोजित की गईं।

हिन्दी दिवस के अवसर पर पखवाड़े का समापन हुआ। अपर आयुक्त श्री चन्द्रशेखर प्रसाद व उपायुक्त श्री शोभाराम ने विजयी प्रतियोगियों सर्वश्री नितिन जैन, अनिल पचौरी, बी. एस. बामनिया, हर्षकुमार पाण्डे, रूद्रमणि मिश्र, रवीन्द्र भोकरीकर, श्रीमती बी. ए. रॉक, घनश्याम गुप्ता, हरिओम पंडित, जयदेव सिंह, किशोर पटेल, सुरेश पोखरीयाल, एस. बेपारी,

श्रीमति आर. वी. चक्रवर्ती, जी. एस. राठौर, देवेन्द्र परमार, श्रीमति इलारानी मुस्तफी और पी. के. शुक्ला को प्रशस्ति पत्र व नगद पुरस्कार प्रदान किए।

इसी अवसर पर एक कवि सम्मेलन आयेजित किया गया जिसमें सर्वश्री चन्द्रसेन विराट, कृष्णकांत निलोसे, राज केसरवानी, सदाशिवकोतुक, प्रदीप नवीन, अरूण जैन, शिवलाल बैरवा, लक्ष्मण शिंदे और हरिओम पंडित ने अपनी रचनाएं सुनाईं। अतिथियों का स्वागत सहायक आयुक्त वेदप्रकाश शुक्ल, राजेश पुरी, अधीक्षक रविशंकर रायचौधरी, संजय प्रधान, पंकज पाण्डे व प्रशासनिक अधिकारी एम. के. काली ने किया। कार्यक्रम का संचालन व आभार प्रदर्शन विभाग के सहायक निदेशक (राजभापा) राज के सरवानी ने किया।

आकाशवाणी, सूरत

आकाशवाणी, सूरत केन्द्र ने दिनांक 1 सितम्बर—98 से 15 सितम्बर—98 तक ''हिन्दी पखवाड़ा'' उत्साह से मनाया। स्थानिक रेडियो केन्द्र होने की वजह से ''बजट'' कम होना स्वाभाविक है, किन्तु कर्मचारियों का उत्साह अत्यधिक था। इस केन्द्र पर उप निदेशक—श्री ऋषिकुमार शास्त्री ने केवल दो महीने पूर्व ही कार्यभार संभाला था। लेकिन इनकी राजभाषा के कार्यान्वयन का पूर्वानुभव से हिन्दी पखवाड़ा मनाने का आयोजन सुचारू ढंग से हुआ। बताते हुए अति प्रसन्नता होती है कि ''घ'' वर्ग के कर्मचारी एवं छुट्टी पर रहे कर्मचारियों को छोड़कर सभी कर्मचारियों ने प्रतियोगिता में सोत्साह भाग लिया।

पखवाड़ा के आरंभ में ही कार्यालय टिप्पण, कार्यक्रम अनुसूची, प्रसारण रिपोर्ट, स्टुडियो का मांग पत्र, बैंक में कार्याध्यक्ष के हस्ताक्षर एवं पंजीपत्र में कर्मचारियों के हस्ताक्षर, इत्यादि हिन्दी में लिखना आरंभ कर दिया।

दिनांक 3 सितम्बर—98 को कार्यालय में राजभाषा समिति के गठन एवं कार्यसूची संबंध में बैठक आयोजित की गई। उप निदेशक श्री शास्त्री ने अध्यक्ष का स्थान ग्रहण करते हुए कार्यालय में राजभाषा का कार्यान्वयन सुचारू रूप से चलाने का संकल्प दोहराया। इस सभा में प्रतियोगिता एवं पुरस्कार राशि के संबंध में विचार किया गया। प्रथम पुरस्कार राशि रु. 200/- द्वितीय—रु. 150/-, तृतीय—रु. 100/-, एवं आश्वासन 50/-रु. पुरस्कार एवं रु. 25/- का विशेष पुरस्कार भी देना निश्चय किया, जिसका निर्णय केन्द्राध्यक्ष को स्वयं करना था। प्रतियोगिता के विषय संबंध में चर्चा की गई। टिप्पण एवं शब्दावली के पेम्फलेट तैयार किए। करीब 300 पारिभाषिक शब्द, तार का स्वरूप, वाक्यांश इत्यादि के 8 (आठ) पेम्फलेट जारी किए गये। महानिदेशालय की सूचनानुसार प्रतियोगिताएं एक सप्ताह चलीं। शुद्ध हिन्दी एवं आलेखन में वर्तनी के महत्व संबंधी कार्यशाला का भी आयोजन हुआ।

''हिन्दी दिवस'' पर विशेष समारोह आयोजन तथा आकाशवाणी—सूरत केन्द्र से परिचर्चा ''हिन्दी-राजभाषा की प्रचार-प्रसार नीति'' प्रसारित की गई। इस चर्चा में सूरत महानगर पालिका के महापौर सुश्री सविता शारदा एवं बैंक ऑफ इन्डिया के प्रबंधक श्री सुरेश नाथ भट्ट ने भाग लिया। इस चर्चा का संचालन श्री पियुष त्रिवेदी ने किया जो हिन्दी प्रचार मंडल सूरत के मंत्री हैं और 25 साल से हिन्दी प्रचार-प्रसार कार्य से जुड़े हैं। हिन्दी दिवस के अवसर पर राजभाषा के संबंध में गीत भी प्रसारित किया गया। 14 सितम्बर को हिन्दी प्रचार समिति के कार्य सम्बन्धी जानकारी भी वार्ता रूप में प्रसारित की गई। 14 सितम्बर हिन्दी दिवस के मुख्य समारोह में प्रतियोगिताओं में विजयी प्रतिभागियों को पुरस्कार दिए गए तथा श्री पियुष त्रिवेदी और श्रीमती बंसरी-बहन त्रिवेदी (निवृत्त आचार्या) ने हिन्दी कार्यान्वयन सम्बन्ध में प्रेरक वक्तव्य दिया।

सभी कर्मचारियों ने हिन्दी में कार्य करने के अपने संकल्प को दोहराया। हिन्दी पखवाड़ा का समापन दूसरे दिन से निष्ठा राजभाषा में कार्य करने के संकल्प से हुआ। इस कार्यालय में हिन्दी पखवाड़े के दौरान बड़े ही शानदार ढंग से, उत्साहपूर्वक एवं लगन के साथ प्रतियोगिताओं का आयोजन का कार्य सफल हुआ। इस हिन्दी पखवाड़े के विजेता प्रतियोगियों को पुरस्कार भी दिए गए।

नाभिकीय ईंधन सम्मिश्र

नाभकीय ईंधन सम्मिश्र, हैदराबाद में राजभाषा पखवाड़े के दौरान 14 सितम्बर 1998 को ''हिन्दी दिवस'' का आयोजन किया गया। इस अवसर पर बड़ी संख्या में सम्मिश्र के वरिष्ठ अधिकारीगण उपस्थित थे। मुख्य अतिथि प्रो० योगेश भटनागर (जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली) ने अपने संबोधन में कहा कि यदि हमें हिंदी का प्रचार-प्रसार करना है तो क्षेत्रीय भाषा के प्रचलित शब्दों को अपनाना होगा तथा अनुवाद की प्रकिया को अत्यंत सरल बनाना होगा। इस अर्थ में यदि हम हिंदी को जन-जन की भाषा बनाना चाहते हैं तो संस्कृतनिष्ठ भाषा के इस्तेमाल का आग्रह पर जोर न देते हुए भारतीय भाषाओं के प्रयोग पर बल देना चाहिए। हिंदी की शब्दावली में हमें अन्य क्षेत्रीय भाषाओं के शब्दों को सहर्ष स्वीकार करना चाहिए तभी हिंदी अधिक समृद्ध और जनप्रिय बन पायेगी।

कार्यक्रम के अध्यक्ष एवं एन. एफ. सी. के मुख्य कार्यपालक डॉ. सी. गांगुली ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि हम आज भी अपनी भाषा का दिवस मना रहे हैं, यह स्थिति निंदनीय हैं इसका अनुभव हमें तब होता है जब हम विदेश जाते हैं। वे हमारे अंग्रेजी पत्राचार को देखकर पूछते हैं कि क्या आपके देश की कोई भाषा नहीं है? उस समय हमें बहुत बुरा लगता है। अत: मैं इस मंच से आह्वान करता हूं कि—आप लोग अपने ''वर्क स्पाट'' पर हिंदी में बात करें तथा अपने रोजमर्रा के कामों में हिन्दी का प्रयोग करना शुरू कर दें। मैं भी अपने कामों में से 5 कार्य हिन्दी में करने की कोशिश करुंगा।

यूरेनियम कारपोरेशन ऑफ इंडिया लि०

परमाणु ऊर्जा विभाग द्वारा बताये गये सुझावों के अनुसार युरेनियम कारपोरेशन ऑफ इंडिया लि०, जादुगोड़ा में हिन्दी सप्ताह का समापन

समारोह बड़े ही उत्साहपूर्ण ढंग से युसील के मिल कान्फ्रेंस रूम में 14 सितम्बर, 98 को मनाया गया। इसमें विभिन्न विभागों के विभागाध्यक्षों के अलावा हिन्दी कार्यान्वयन समिति के सभी सदस्यगण, हिन्दी प्रतियोगिता में पुरस्कार पाने वाले, विभिन्न स्तर के अधिकारियों एवं कर्मचारियों सहित जादुगोड़ा लेबर यूनियन, यूरेनियम मजदूर संघ, यूरेनियम कामगार यूनियन के जनरल सेक्रेटरी, सर्वश्री वी०एन० चौधरी, राम नरेश कुमार एवं राम रतन सिंह भी उपस्थित थे। इस अवसर पर यूसील हिन्दी कार्यान्वयन समिति के अध्यक्ष श्री उमा कान्त तिवारी ने सभी का स्वागत करते हुए हिन्दी की प्रगति पर अपने विचार प्रस्तुत किये। सहायक प्रबंधक (राजभाषा) ने यूरेनियम कारपोरेशन में वर्ष 1997-98 में किये गये हिन्दी कार्यों का विस्तृत ब्यौरा प्रस्तुत किया। इस अवसर पर उन्होंने प्रधान मंत्री महामहिम श्री अटल बिहारी बाजपेयी की एक कविता भी सुनाई जिसमें बतलाया गया कि : ''हम पड़ाव को समझे मंजिल, लक्ष्य हुआ आंखों से ओझल। वर्तमान के मोहजाल में आने वाला कल न भुलायें,..... आओ फिर से दीप जलायें॥''

वित्तीय सलाहकार एवं मुख्य अधिकारी, श्री शिवरमण ने अपने विचार प्रस्तुत करते हुए इस अवसर पर बतायी कि हिन्दी भाषियों को चाहिए कि वे समाज में रहने वाले अन्य भाषा-भाषियों के भावों को समझें। उनकी भाषा सम्बन्धी कठिनाईयों को महसूस करें तथा उन्हें हिन्दी सिखाने का यथासंभव प्रयास करें तभी हम एक दूसरे के विचारों का आदर कर सकेगें। इस अवसर पर श्री राम रतन सिंह जनरल सेक्रेटरी, यूरेनियम कामगार यूनियन ने अपने विचारों को रखते हुए बताया कि इस कार्यालय में हिन्दी में काम कराने की जो पद्धति है उसमें कुछ ऐसे भाव या विचार आ जाते हैं जिससे कि वह हिन्दी में काम करने वाले लोगों के मन को ठेस पहुंचाती है। यह ठीक नहीं है। इसका कार्यालय स्तर पर निराकरण किया जाना चाहिए तथा कार्यालय में हिन्दी में लिखे गये आवेदनों/पत्रों एवं विचारों का प्रमुखता से स्वागत किया जाना चाहिए।

विभिन्न प्रतियोगिताओं के पुरस्कार वितरण के पूर्व अपने विचार प्रस्तुत करते हुए मुख्य अतिथि श्री के० के० बेरी, निदेशक (तकनीकी) ने बताया कि एक लम्बी अवधि तक की गुलामी के उपरांत अभी भी हमारी मानसिकता इस ऊंचाई तक नहीं पहुंच पाई है कि हम अपनी भाषा को सम्मानित कर सकें। आज भी हम अंग्रेजी की चमक-दमक में इस तरह मोह ग्रस्त हो गये हैं कि हम उसी में अपना स्वाभिमान, बड़प्पन एवं उत्कर्ष समझते हैं। यह मानसिकता अब बदलनी चाहिए तभी सही मायने में राष्ट्रभाषा के प्रति सच्ची श्रद्धा दिखा सकते हैं। हमारी मानसिकता ऐसी होनी चाहिए कि हमें अपनी ही भाषा के लिए अलग से सम्मेलन या संगोष्ठी करने की जरूरत नहीं रहे। हिन्दी स्वयं में एक सशक्त एवं जानदार भाषा है इसके लिए आज हमें हिन्दी दिवस या हिन्दी सप्ताह मनाने की कोई आवश्यकता नहीं है। इसके बाद विभिन्न प्रतियोगिताओं में सफल होने वाले प्रतिभागियों को पुरस्कार वितरण किया गया।

अंत में श्री राम उदार चौधरी, अपर अधीक्षक (नि०अनु० एवं वि०) ने उपस्थित सभी विभागाध्यक्षों, अधिकारियों एवं कर्मचारियों का हार्दिक धन्यवाद ज्ञापन करते हुए बताया कि यह सब आप सभी के सामूहिक प्रयास का फल है कि आज हम देश की भाषा के प्रति श्रद्धा सुमन अर्पित कर पा रहे हैं। इस अवसर पर उन्होंने सभी को धन्यवाद दिया एवं कामना की कि सभी लोगों के प्रयासों से ही हिन्दी को देश में उच्च गरिमा प्राप्त होगी।

दूर संचार, पुणे

दूर संचार कार्यालय, पुणे में दि० 1 सितम्बर से 15 सितम्बर, 98 तक बड़े उत्साह के साथ हिन्दी पखवाड़ा मनाया गया। 1 सितम्बर को उद्घाटन समारोह आयोज़ित किया गया। इस अवसर पर ''लैंग्वेज सर्व्हिसेस व्यूरो'' की प्रबंधक श्रीमती माधुरी दातार प्रमुख अतिथि के रूप में उपस्थित थी। पखवाड़े के दौरान टिप्पणी लेखन, निबंध, परिसंवाद, शब्दार्थ, अनुवाद, हिंदी टंकण जैसी प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। इस में बहुसंख्यक कर्मचारियों ने हिस्सा लिया। इस दौरान कथाकथन, कैलाश मानसरोवर यात्रा कथन, बच्चों के कार्यक्रम जैसे कार्यक्रम भी संपन्न हुए। दि. 14 सितम्बर, 98 को पखवाड़े का समापन एवं पुरस्कार वितरण समारोह संपन्न हुआ। पुणे दूरसंचार के प्रधान महाप्रबंधक श्री निर्मल सरूप द्वारा सभी प्रतियोगियों को पुरस्कार वितरित किए गए। इस अवसर पर प्रधान महाप्रबंधक जी ने राष्ट्र भाषा हिंदी का महत्व विशद करते हुए अपील की कि कामकाज में हिंदी का अधिकाधिक प्रयोग करना जारी रखें। उन्होंने यह भी बताया कि हिंदी पखवाड़ा जहां समाप्त हुआ वहीं से हिंदी का अधिकाधिक प्रयोग आरंभ होना चाहिए। लिखने में, बोलने में हिन्दी का प्रयोग मन से किया जाना चाहिए। हिंदी सभी पर थोपी नहीं जा रहीं है, परंतु अपनी भाषा के प्रयोग के जरिये उसे सम्मानित करने के लिए सभी से अपील की जा रही है।

सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया, सागर

सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया क्षेत्रीय कार्यालय के तत्वाधान में दिनांक 01-09-98 से 15-09-98 तक राजभाषा पखवाड़ा का आयोजन किया गया। इस पखवाड़े के दौरान दिनांक 09-09-98 को स्थानीय सागर सिटी शाखा में ''आनुषांगिक सेवायें एवं लाभ-प्रदता'' तात्कालिक निबंध प्रतियोगिता आयोजित की गई जिसमें प्रथम श्री राजेश सिंघई, द्वितीय श्री एच. जी. चौरसिया तथा तृतीय श्री बी. बी. माहेश्वरी एवं श्री जे. वी. एस. रायकवाड़ रहे। प्रतियोगिता के अगले चरण में दिनांक 10-09-98 को एक हिंदी शब्द ज्ञान एवं सामान्य ज्ञान प्रतियोगिता क्षेत्रीय कार्यालय एवं अग्रणी जिला प्रबंधक कार्यालय के सभी कर्मचारियों के लिये आयोजित की गई जिसमें प्रथम श्री एम. के. श्रीवास्तव, द्वितीय श्री अवधेश कुमार शुक्ला, तृतीय श्री सुनील कुमार एवं श्री मिथलेश ठाकुर रहे। सांत्वना पुरस्कार श्री जी. एस. प्रसादी को दिया गया। प्रतियोगिता के तृतीय चरण में एक प्रतियोगिता ''हिंदी भाषा ज्ञान प्रतियोगिता'' स्थानीय सागर कैंट तथा गोपालगंज शाखा के कर्मचारियों के लिये आयोजित की गई जिसमें प्रथम श्री आर. बी. पंडित, द्वितीय श्री जी. पी. अहिरवाल तथा तृतीय श्री देवी सिंह नरगवे रहे।

दिनांक 14-09-98 को क्षेत्रीय कार्यालय में हिन्दी दिवस का आयोजन किया गया। इसी दिन सभी प्रथम, द्वितीय व तृतीय स्थान पर आये प्रतियोगियों को पुरस्कार वितरण किए गए। हिंदी दिवस कार्यक्रम की अध्यक्षता सहायक

क्षेत्रीय प्रबंधक श्री चन्द्रशेखर दुबे ने की। उन्होंने अपने उद्‌बोधन में हिन्दी को उच्च प्रतिष्ठा दिलाने तथा सभी स्तरों पर इसको लागू करने पर जोर दिया। उन्होंने कहा कि यदि सभी साथी मन में ठान लें तो वह दिन दूर नहीं जब हिन्दी विश्वभाषा बनेगी। उन्होंने सभी कर्मचारियों से अपने दैनिक जीवन में अधिक-से-अधिक हिंदी को मन से अपनाने की अपील की।

कार्यक्रम का संचालन क्षेत्रीय राजभाषा अधिकारी श्री महेन्द्र जैन ने किया। उन्होंने अपने उद्‌बोधन में हिन्दी दिवस की महत्ता एवं इसके मनाये जाने के विषय में अपने विचार रखे। आयोजित प्रतियोगिताओं का संचालन, धन्यवाद प्रस्ताव एवं आभार प्रदर्शन राजभाषा अधिकारी द्वारा किया गया।

दि जूट कॉर्पोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड

1 सितम्बर से 15 सितम्बर (15 दिन) तक निगम के प्रधान कार्यालय में हिंदी पखवाड़ा मनाया गया तथा इस कार्यालय के अधीनस्थ 6 राज्यों में स्थित 16 क्षेत्रीय कार्यालयों में हिन्दी पखवाड़ा मनाने के लिए निर्देश दिया गया।

हिन्दी पखवाड़े के दौरान 14 सितम्बर, 1998 को मुख्य समारोह ''हिन्दी दिवस'' के रूप में प्रधान कार्यालय एवं क्षेत्रीय कार्यालयों में मनाया गया। इस अवसर पर मुख्यालय में एक सांस्कृतिक कार्यक्रम भी किया गया तथा इससे पहले निगम के अध्यक्ष-सह-प्रबन्ध निदेशक एवं वरिष्ठतम कार्यपालक व अधिकारियों द्वारा हिन्दी की प्रगति पर जोर दिया गया। निगम के अध्यक्ष-सह-प्रबन्ध निदेशक का संदेश भी इस अवसर पर पढ़ा गया एवं मार्गदर्शन के लिए वितरित किया गया। क्षेत्रीय कार्यालयों को इसकी प्रतियां पहले ही भेजी गई थीं जिससे हिन्दी दिवस के दिन क्षेत्रीय कार्यालयों में हिन्दी दिवस आयोजन के समय पढ़ सके। हिंदी पखवाड़ा को ''भारतीय भाषाओं के सौहार्द'' के रूप में मनाया गया। हिंदी दिवस के दिन मुख्यालय के प्रवेश द्वार पर ध्वजा एवं कार्यालय के अन्दर हिंदी में लिखे पोस्टरों का प्रदर्शन किया गया। निगम का मुख्यालय ''ग'' क्षेत्र में स्थित होने के कारण पखवाड़े के दौरान निगम के कर्मचारियों व अधिकारियों से आग्रह किया गया कि वे जहां तक सम्भव हो हिन्दी में बोलने व लिखने का प्रयत्न करें तथा अंग्रेजी में लिखे पत्रों पर हिन्दी में हस्ताक्षर किये जा सकते हैं। हिन्दी पखवाड़ा के दौरान सभी कर्मचारियों को सलाह दी गई कि वे अपने हस्ताक्षर उपस्थिति रजिस्टर में जहां तक सम्भव हो हिन्दी में करें।

हिंदी पखवाड़ा के दौरान निगम के प्रधान कार्यालय में दिनांक 1-9-98 को हिंदी सुलेख प्रतियोगिता, 4-9-98 को हिन्दी टंकण प्रतियोगिता तथा 8-9-98 को हिन्दी से अंग्रेजी एवं अंग्रेजी से हिंदी 'शब्दावली' प्रतियोगिता आयोजित की गई। प्रतियोगिताओं में प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय अंक प्राप्त करने वाले निगम के कर्मचारियों को नगद पुरस्कार से पुरस्कृत किया गया।

निगम के प्रधान कार्यालय में हिन्दी दिवस समारोह के सांस्कृतिक कार्यक्रम में भाग लेने वाले सभी कर्मचारियों को हिन्दी दिवस के दिन ही पुरस्कृत किया गया। हिंदी पखवाड़ा के दौरान प्रतियोगिताओं के अतिरिक्त हिंदी कार्यक्रमों, चर्चाओं आदि का भी आयोजन किया गया।

राष्ट्रीय जन सहयोग एवं बाल विकास संस्थान

राष्ट्रीय जन सहयोग एवं बाल विकास संस्थान में 1 से 14 सितम्बर, 1998 तक हिंदी पखवाड़े का आयोजन किया गया। इस अवसर पर संस्थान में निबंध, अनुवाद और टाइपिंग प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। इन प्रतियोगिताओं में संस्थान के अनेक अधिकारियों/कर्मचारियों ने उत्साहपूर्वक हिस्सा लिया। इसके अलावा पखवाड़े के दौरान हिंदी पुस्तकों की एक प्रदर्शनी भी लगाई गई। इस पखवाड़े का समापन समारोह 14 सितम्बर, 1998 को आयोजित किया गया। जानी मानी लेखिका और कवयित्री डॉ. (श्रीमती) अनामिका इस समारोह की मुख्य अतिथि थीं। यह कार्यक्रम संस्थान के निदेशक श्री एस. के मुट्टू की अध्यक्षता में संपन्न हुआ।

कार्यक्रम का शुभारंभ करते हुए निदेशक महोदय ने मुख्य अतिथि तथा सभी उपस्थितों का स्वागत किया। उन्होंने प्रभावपूर्ण शब्दों में हिन्दी के महत्व पर प्रकाश डालते हुए संस्थान के कामकाज में हो रहे हिंदी के इस्तेमाल का ब्यौरा दिया। उन्होंने कहा कि संस्थान में हिन्दी का प्रयोग लगातार बढ़ रहा है।

मुख्य अतिथि डॉ. (श्रीमती) अनामिका ने अपने भाषण में उल्लेख किया कि हिन्दी भाषा के विकास में हिन्दी भाषी लोगों के साथ-साथ गैर हिन्दी भाषा भाषियों का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा है। उन्होंने इस बात पर प्रसन्नता व्यक्त की कि संस्थान के अधिकारी/कर्मचारी राजभाषा हिंदी से संबंधित कार्यों में रूचि लेते हैं। उन्होंने इस अवसर पर अपनी कुछ कविताएं भी सुनाईं।

अंत में मुख्य अतिथि ने विभिन्न प्रतियोगिताओं के विजेताओं को पुरस्कार प्रदान किए। निबंध प्रतियोगिता में ''क'' तथा ''ख'' वर्ग का प्रथम पुरस्कार डॉ. ओमराज सिंह, अनुसंधान सहायक तथा प्रथम पुरस्कार सुश्री रश्मि लाल, वरिष्ठ आर्टिस्ट को दिया गया। ''ग'' तथा ''घ'' वर्ग का पुरस्कार श्री देशराज मान, तकनीकी सहायक को और द्वितीय पुरस्कार सुश्री प्रेमा पांडे अनुसंधान अन्वेषक को दिया गया। इस प्रतियोगिता का प्रोत्साहन पुरस्कार श्री नन्द किशोर शर्मा, अनुसंधान सहायक को मिला। अनुवाद प्रतियोगिता का ''क'' तथा ''ख'' वर्ग का प्रथम पुरस्कार सुश्री अनिता चौहान, सहायक को तथा द्वितीय पुरस्कार संयुक्त रूप से सुश्री पिंकी गर्ग, परियोजना सहायक और डॉ. ओमराज सिंह, अनुसंधान सहायक को दिया गया। ''ग'' तथा ''घ'' का प्रथम पुरस्कार श्री हुकुम सिंह, उच्च श्रेणी लिपिक तथा द्वितीय पुरस्कार सुश्री प्रेमा पांडे अनुसंधान अन्वेषक को दिया गया। प्रोत्साहन पुरस्कार के विजेता श्री आनंद कुमार, अनुसंधान सहायक रहे। टाइपिंग प्रतियोगिता के प्रथम पुरस्कार के विजेता श्री विजेन्द्र कुमार, अवर श्रेणी लिपिक तथा इस प्रतियोगिता का द्वितीय और तृतीय पुरस्कार क्रमशः सुश्री पूनम बजाज और श्री राकेश कुमार, अवर श्रेणी लिपिकों को मिला। इन पुरस्कारों के अतिरिक्त वर्ष 1997-98 की हिन्दी में नोटिंग और

ड्राफ्टिंग तथा डिक्टेशन हेतु प्रोत्साहन पुरस्कार योजनाओं के विजेताओं को भी पुरस्कार प्रदान किए गए।

केन्द्रीय हिंदी निदेशालय

देश में राजभाषा हिंदी के प्रचार-प्रसार में केन्द्रीय हिंदी निदेशालय की अहम् भूमिका है। चाहे वह हिंदीभाषी क्षेत्र हो या अहिंदीभाषी। आज भी केन्द्रीय हिंदी निदेशालय द्वारा प्रकाशित शब्द कोश और संदर्भ साहित्य देश के तमाम केन्द्रीय सरकार एवं अर्ध सरकारी कार्यालयों, प्रतिष्ठानों द्वारा उपयोग में लाए जाते हैं।

निदेशालय द्वारा (स्थापना से लेकर अब तक) पहली बार दिनांक 9 से 14 सितंबर, 1998 तक हिन्दी सप्ताह का आयोजन किया गया। इसके प्रेरणा स्त्रोत निदेशक, श्री समय सिंह एवं उप निदेशक, श्रीमती पुष्पलता तनेजा हैं।

दिनांक 9 सितंबर, 98 को निदेशक, श्री समय सिंह द्वारा ''हिंदी सप्ताह'' का उद्घाटन किया गया। आरंभ में श्री उमाकांत खुबालकर, स. शि. अ. ने आमंत्रितों का स्वागत किया। कुमारी (डॉ.) गुड्डी कौल ने समुधुर आवाज में ''सरस्वती वंदना'' करके कार्यक्रम का श्रीगणेश किया। तत्पश्चात् श्री प्रीतम सिंह द्वारा प्रस्तुत गीत ''ऐ मेरे वतन के लोगों जरा आँख में भर में लो पानी'' ने सभी का मनमोह लिया। यह प्रतियोगिता द्वितीय एवं तृतीय वर्ग के अधिकारियों/कर्मचारियों के लिए आयोजित की गई थी। इस प्रतियोगिता के समय पालक, श्री हुकम चंद मीणा, अनु. सहायक थे। अंत में श्रीमती पुष्पलता तनेजा ने आभार प्रदर्शन की औपचारिकता का कुशलतापूर्वक निर्वाह किया।

इसी परिप्रेक्ष्य में दिनांक 10-9-1998 को तृतीय श्रेणी कर्मचारियों हेतु ''हिंदी निबंध प्रतियोगिता'' का आयोजन किया गया, जिसका विषय था'' दूरदर्शन समाज के लिए वरदान है या अभिशाप''। प्रतियोगिता के निर्णायक मंडल में श्री प्रेमानंद चंदोला (सुप्रसिद्ध विज्ञान लेखक), श्री ओम प्रकाश वर्मा, भूतपूर्व निदेशक (राजभाषा,) संचार मंत्रालय, श्री राजेन्द्र प्रसाद तिवारी (भूतपूर्व स. शि. अ.) थे। जिसमें प्रथम स्थान, श्रीमती पंकज राणा, प्र. श्रे. लि., द्वितीय स्थान श्री रविंद्र कुमार, अ.श्रे.लि., तृतीय स्थान,कुमारी रवि माला, आशुलिपिक (क.), चतुर्थ स्थान (सांत्वना) श्रीमती प्रेमलता शर्मा, आशुलिपिक (क.), वैज्ञानिक तकनीकी शब्दावली आयोग ने प्राप्त किया। इस प्रतियोगिता में महिलाओं ने पुरुषों से बाजी मार ली।

दिनांक 11 सितंबर, 1998 को चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों हेतु ''हिंदी शुद्ध लेखन प्रतियोगिता'' का आयोजन किया गया। इसके निर्णायक मंडल में श्री सतपाल अरोड़ा, सहायक निदेशक (वैज्ञानिक तकनीकी शब्दावली आयोग), डॉ. शशि भारद्वाज, सहायक निदेशक (प. पा.) श्रीमंती शीला माथुर (स. शि. अ.) थे। इसमें प्रथम स्थान, श्री योगेन्द्र कुमार, द्वितीय स्थान, श्री राजेश्वर मेहतो, तृतीय स्थान श्री राजेनाथ सिंह तथा चतुर्थ स्थान (सांत्वना) श्री दयानंद ने प्राप्त किया। इस प्रतियोगिता में सर्वाधिक संख्या में कर्मचारियों ने भाग लिया, इसके लिए डॉ. वेद प्रकाश, अनु. सहायक, डॉ. सुबच्चन पांडेय, अनु. सहायक ने भी सहयोग प्रदान किया।

दिनांक 14 सितम्बर, 1998 को ''हिन्दी सप्ताह'' का समापन समारोह निदेशक महोदय, श्री समय सिंह की अध्यक्षता में संपन्न हुआ। आरम्भ में श्रीमती पुष्पलता तनेजा, उप निदेशक ने अतिथियों का स्वागत करते हुए अगले कार्यक्रम का दायित्व श्री उमाकांत खुबालकर, स. शि. अ. को सौंप दिया। आरम्भ में श्रीमती अर्चना त्रिपाठी, मूल्यांकक ने ''माँ'' शीर्षक की तथा श्री विजय सिंह मीणा ने 'बापू' शीर्षक की कविता से हिन्दी दिवस में रंग ही जमा दिया। श्री प्रीतम सिंह व श्री चंदूलाल ने भी कार्यक्रम में हिस्सा लिया। निदेशक, श्री समय सिंह ने प्रतिभागियों को पुरस्कार देते हुए यह आश्वस्त किया कि वे हमेशा ही हिन्दी में काम कराने की आदत डालें, तभी प्रतियोगिता की सार्थकता प्रमाणित होगी। डॉ. वीरेन्द्र सक्सेना ने राजभाषा हिन्दी की संवैधानिक स्थिति के बारे में अपने विचार व्यक्त किए।

इसके पश्चात् ''हिन्दी वाक् प्रतियोगिता'' आरम्भ हुई, जिसका विषय था ''भारतीय परमाणु परीक्षण'' इसके निर्णायक मंडल में सर्वश्री डा. नरेन्द्र व्यास (भूतपूर्व प्रधान सम्पादक, के. हि. नि.), डॉ. हरीश कुमार, अध्यक्ष, वैज्ञानिक तकनीकी शब्दावली आयोग, डॉ. पुष्पलता तनेजा, उप निदेशक शामिल थे। प्रतियोगिता में प्रथम, डॉ. वेद प्रकाश, अनु. सहायक, श्री नन्द किशोर मिश्रा, स. शि. अधिकारी, द्वितीय, श्री अनिल बी., मूल्यांकक, तृतीय तथा श्री शैलेश बिडालिया, अनु. सहायक ने चौथा स्थान (सांत्वना) प्राप्त किया।

श्री सक्सेना उप निदेशक (प. पा.) ने निदेशालय की हिन्दी के प्रगामी प्रयोग से सम्बन्धित प्रगति का ब्यौरा दिया। अंत में डॉ. शशि भारद्वाज, सहायक निदेशक ने सभी के प्रति आभार प्रदर्शन किया।

पूरे सप्ताह के कार्यक्रमों का सफल संचालन, श्री उमाकांत खुबालकर स. शि. अ. द्वारा किया गया।

नागांव पेपर मिल, असम

हिन्दुस्तान पेपर कॉरपोरेशन लिमिटेड (भारत सरकार का एक उपक्रम) की जागीरोड स्थित नगांव पेपर मिल में राजभाषा विभाग की ओर से दिनांक 14 सितम्बर, 1998 को ''राजभाषा दिवस'' बड़ी सफलता के साथ किया गया। राजभाषा दिवस के शुभ अवसर पर दिनांक 08-09-98 को अहिन्दी भाषी कर्मचारियों के बीच हिन्दी श्रुतलेख प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। श्रुतलेख प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार भारती साइकिया, कनिष्ठ सहायक (प्रशिक्षण), द्वितीय पुरस्कार श्रीमती प्रभा डेका, कनिष्ठ सहायक (प्रशासन) तथा तृतीय एवं सांत्वना पुरस्कार क्रमशः सुश्री हेमा बायन और श्री यदु नाथ गौगई, वरिष्ठ सहायक (प्रशिक्षण) को प्रदान किया गया।

दिनांक 9-9-98 को मिल में कार्यरत हिन्दी भाषी तथा अहिन्दी भाषी कर्मचारियों के बीच एक निबन्ध प्रतियोगिता का आयोजन भी किया

गया। प्रतियोगिता में हिन्दी भाषा में प्रथम पुरस्कार श्री रामसागर गिरि, प्रचालक (का. व क्ल.), द्वितीय पुरस्कार श्री सुजित कुमार झा, लिपिक (वित्त व लेखा) तथा तृतीय पुरस्कार श्री अशोक कुमार राय, प्रचालक (पेपर मशीन) को प्रदान किया गया। असमीया भाषा में क्रमशः श्री अतुल महंत, वरिष्ठ पर्यवेक्षक (इन्स्ट्रुमेंटेशन), श्री विमल कुमार शर्मा, वरिष्ठ सहायक (वित्त), श्रीमती जूनू गायन, लिपिक (पुस्तकालय) को क्रमशः द्वितीय एवं तृतीय पुरस्कार एवं श्री निकुमनी शर्मा को स्वांत्वना पुरस्कार प्रदान किया गया।

दिनांक 10-09-98 और 11-09-98 को स्कूली बच्चों के लिए एक प्रश्न मंच और आकस्मिक भाषण प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। सभी स्कूली बच्चों ने दोनों प्रतियोगिताओं में भाग लेकर अपनी प्रतिभाएं दिखाईं और सभी विजेताओं को पुरस्कार प्रदान किया गया। इसके अतिरिक्त हिन्दी में सर्वाधिक अंक प्राप्त करने के लिए 10वीं कक्षा एवं 12वीं कक्षा पास करने वाले 10 स्कूली बच्चों को राजभाषा प्रोत्साहन राशि प्रदान की गई। निगम की गृह पत्रिका "हिन्दुस्तान पेपर संदेश" में अपने लेख प्रकाशित होने पर कुछ स्कूली बच्चों तथा अध्यापक एवं मिल के कर्मचारियों को भी राजभाषा प्रोत्साहन राशि प्रदान की गई।

दिनांक 14-09-98 को मिल के प्रशिक्षण केन्द्र में राजभाषा दिवस समारोह, मिल के मुख्य अधिशासी श्री पी. एस. निर्वाण की अध्यक्षता में संपन्न हुआ। सबसे पहले श्री के. के. पाण्डेय, प्रभारी सहायक प्रबन्धक, (राजभाषा) ने सभी अतिथियों का स्वागत किया और इसके बाद प्रचालक पेपर मशीन, श्री अशेक कुमार राय ने अपने स्वरचित स्वागत गान का पाठ किया। मिल के ही फिनिसिंग हाउस के एक कर्मचारी श्री शिशुराम साइकिया ने अपने स्वरचित असमीया कविता पाठ करके उपस्थित जनों का मन मोह लिया। इसके बाद कागज नगर स्थित एल. पी. स्कूल के प्रधानाध्यक्ष, श्री मिसिका गौगई ने अपने भाषण में राजभाषा की सरलता पर विचार-विमर्श किया और सभी जनों से राजभाषा में काम-काज करने के लिए अनुरोध किया। प्रबन्धक (भण्डार) श्री एस. एम. क्षेत्री ने अपने भाषण में यह स्पष्ट किया कि क्षेत्रीय भाषा के सहयोग से ही राजभाषा का प्रचार-प्रसार अधिक बढ़ सकता है। उप महाप्रबन्धक (अभियांत्रिकी) श्री बी. एन. पाल ने हिन्दी के बढ़ते हुए कदमों के ऊपर प्रकाश डाला। कुछ स्कूली बच्चों ने भी अपनी राय व्यक्त की। अपने अध्यक्षीय भाषण में श्री निर्वाण ने मिल के कर्मचारियों तथा स्कूली बच्चों को यह सुझाव दिया कि राजभाषा का प्रचार-प्रसार अपने घर से ही शुरू करें। उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि राजभाषा को आगे बढ़ाने के लिए सभी का व्यक्तिगत सहयोग अति आवश्यक है।

समारोह का अंत में वरिष्ठ प्रबन्धक (यूटिलिटि), रिकवरी श्री प्रताप गोस्वामी के धन्यवाद ज्ञापन से हुआ।

संसदीय कार्य मंत्रालय

संसदीय कार्य मंत्रालय में हर वर्ष की भांति इस वर्ष भी दिनांक 1 सितम्बर से 14 सितम्बर, 1998 तक हिन्दी पखवाड़ा मनाया गया। हिन्दी पखवाड़े का उद्घाटन संयुक्त सचिव द्वारा किया गया और इस समारोह में मंत्रालय के सभी अधिकारीगण एवं कर्मचारी सम्मिलित हुए। संयुक्त सचिव ने अपने भाषण में अपील भी जारी की जिसमें मंत्रालय के सभी कर्मचारियों से हिन्दी में अधिकाधिक काम करने का अनुरोध किया।

हिन्दी पखवाड़े के दौरान हिन्दी कार्यशाला का भी आयोजन किया गया जो 2-9-1998 से 11-9-1998 तक चली। इस कार्यशाला में हिन्दी में टिप्पण और प्रारूप लिखने का अभ्यास भी कराया गया।

इस अवसर पर मंत्रालय के अनुभागों का निरीक्षण भी किया गया ताकि हिन्दी में किए जा रहे कार्य में हुई प्रगति की जानकारी प्राप्त की जा सके तथा हिन्दी में काम करने के लिए कर्मचारियों को पेश आ रही कठिनाईयों को दूर किया जा सके।

हिन्दी पखवाड़े के दौरान मंत्रालय की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की तिमाही बैठक भी 7-9-1998 को आयेजित की गई । इस बैठक में मंत्रालय में हिन्दी में किए जा रहे कार्य की समीक्षा 30 जून, 1998 की तमाही रिपोर्ट द्वारा की गई । इस बैठक में हिन्दी में और अधिक कार्य करने के लिए सभी अधिकारियों/कर्मचारियों को प्रेरित किया गया ।

हिन्दी पखवाड़े के दौरान संयुक्त सचिव की अध्यक्षता में सभी अधिकारियों की एक बैठक भी हुई जिसमें राजभाषा अधिनियम, राजभाषा नियम एवं उनके अधीन जारी अनुदेशों की जानकारी दी गई एवं पखवाड़े में की गई कार्रवाई की समीक्षा की गई । अधिकारियों से यह अनुरोध किया गया कि वे अपने कर्मचारियों को ज्यादा काम हिन्दी में करने के लिए प्रेरित करें । विभिन्न अनुभागों में हिन्दी में हो रहे कार्य की भी समीक्षा की गई ।

इस अवसर पर वर्ष भर में कर्मचारियों द्वारा हिन्दी में किए गए टिप्पण-आलेखन की जांच एवं विजेताओं की घोषणा की ।

इसके अतिरिक्त मंत्रालय में हिन्दी की एक आशु टिप्पण-आलेखन प्रतियोगिताएं भी आयोजित की गईं ।

पखवाड़े का मुख्य समारोह 14 सितम्बर, 1998 को आयोजित किया गया । इस अवसर पर माननीय मंत्री जी द्वारा विजेताओं को पुरस्कार प्रदान किए गए ।

इस अवसर पर माननीय मंत्री महोदय जी ने अपने भाषण में कहा कि हिन्दी हमारी अपनी भाषा है और हमें इसमें अधिक से अधिक काम करना चाहिए । उन्होंने उपस्थित अधिकारियों/कर्मचारियों को अपना सरकारी काम-काज हिन्दी में ही करने की प्रेरणा दी । उन्होंने सभी अधिकारियों/कर्मचारियों से कहा कि वे सभी पत्रों आदि चाहे वे अंग्रेजी में हो अथवा हिन्दी में उन पर हिन्दी में हस्ताक्षर करें ।

इस अवसर पर माननीय गृह मंत्री जी का संदेश सामूहिक रूप से पढ़ा गया ।

केनरा बैंक

कर्मचारी प्रशिक्षण महाविद्यालय, बेंगलूर में दिनांक 14-09-1998 को हिन्दी दिवस बड़ी धूम-धाम से मनाया गया ।

श्री राम लाल शर्मा, उप-निदेशक (कार्यकारी), राजभाषा विभाग, क्षेत्रीय कार्यान्वयन कार्यालय, गृह मंत्रालय, बेंगलूर, समारोह के मुख्य अतिथि थे । श्री टी. जी. शेणाय, सहायक महा प्रबंधक ने समारोह की अध्यक्षता की ।

श्रीमती परिमला के प्रार्थना गायन से समारोह का शुभारंभ हुआ । मुख्य अतिथि श्री राम लाल शर्मा ने दीप जलाकर समारोह का उद्घाटन किया । माननीय वित्त मंत्री श्री यशवंत सिन्हा के हिन्दी दिवस संदेश को सुश्री सुजाता द्वारा पढ़कर सुनाया गया । हिन्दी दिवस के उपलक्ष्य में आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं के विजेताओं को पुरस्कार वितरित किए गए । वर्ष 1997-98 हेतु केनरा बैंक राजभाषा पुरस्कार योजना के तहत हिन्दी में बेहतरीन काम करने वाले तीन कर्मचारियों को मेडल, शब्दकोश एवं प्रमाण-पत्र वितरित किए गए ।

मुख्य अतिथि श्री राम लाल शर्मा ने सभा को संबोधित करते हुए कहा कि हिन्दी दिवस भावनाओं का प्रतीक है जो हमें अपने अतीत से लेकर आजादी के 50 वर्षों में राजभाषा को आज तक की स्थिति तक पहुंचाने और इस स्थिति पर चिंतन करने पर मजबूर कर देती है । संविधानकर्ताओं का सपना था कि अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में भी यथा संभव सब कार्य पूर्णत: हिन्दी में करने की क्षमता विकसित हो । हमें उनके सपने को साकार करने में पूरी शक्ति से और निरंतर प्रयत्न करते रहना चाहिए । आगे उन्होंने कहा कि हिन्दी राष्ट्र की एकता की कड़ी है और उसके माध्यम से हम राष्ट्रीय भावना का प्रसार प्रचार भी कर पायेंगे। हिन्दी हमारी जीवन शैली हो जानी चाहिए और यह एक ऐसी भाषा है जिसमें भारतीय संस्कृति झलकती है ।

श्री टी. जी. शेणाय, सहायक महा प्रबंधक ने अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि भाषाएं ग्राहक तक पहुंचने में एक महत्वपूर्ण कड़ी है। अत: हमें राजभाषा में भी कुशलता प्राप्त कर और प्रगति करने का भरसक प्रयास करना चाहिए । उन्होंने कहा कि नई-नई भाषाएं सीखने से प्रशिक्षकों में बेहतर एवं प्रभावी संप्रेषण कुशलता विकसित होगी । उन्होंने कहा कि हिन्दी को एक संवैधानिक आवश्यकता या अधिनियमों का अनुपालन मात्र न समझे । हिन्दी को हमें प्रेम से और दिल से अपनाना है और उसे बोलने और सीखने में गर्व महसूस करना है।

इससे पूर्व श्री टी. ए. पदकी, मंडल प्रबंधक व उप-प्रधानाचार्य ने मुख्य अतिथि का परिचय देते हुए सभी का स्वागत किया। इस अवसर पर कर्मचारियों ने रोचक सांस्कृतिक कार्यक्रम भी प्रस्तुत किया । डॉ. के. के. देव, वरिष्ठ प्रबंधक ने मंच संचालन किया ।

अली यावर जंग राष्ट्रीय श्रवण-विकलांग संस्थान

इस अवसर के ऐतिहासिक महत्व को देखते हुए संस्थान के हिन्दी अनुभाग द्वारा हिन्दी दिवस/सप्ताह (7 सितम्बर से 14 सितम्बर) के उपलक्ष्य में अनेक गतिविधियां की गयी । संस्थान में हिन्दी दिवस समारोह उत्साह और उमंग के साथ मनाया गया । हिन्दी सप्ताह के आयोजन के प्रारम्भ में ही स्वागत कक्ष तथा हिन्दी अनुभाग में राजभाषा का प्रयोग तथा हिन्दी में काम करने पर प्रोत्साहन भत्ता/योजनाएं आदि पर विभिन्न स्लोगन लगाए गए । हिन्दी दिवस/सप्ताह के उपलक्ष्य में विभिन्न प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया । संस्थान के प्रशासनिक एवं तकनीकी कर्मचारियों ने इसमें हिस्सा लिया ।

हिन्दी दिवस/सप्ताह का मुख्य समारोह 18 सितम्बर, 1998 को संस्थान के सम्मेलन सभागृह में सम्पन्न हुआ । इस शुभ अवसर पर अधिकांश अधिकारी, कार्मिक गण उपस्थित थे। संस्थान की निदेशक ने कार्यक्रम की अध्यक्षता की । श्री राम सिंह पवार, निवृत्त उद्घोषक, आकाशवाणी तथा स्पीच कल्चर स्पेशालिस्ट, मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित थे।

कार्यक्रम के प्रारम्भ में हिन्दी अधिकारी द्वारा हिन्दी दिवस की महत्ता तथा मनाने का उद्देश्य के बारे में संक्षिप्त में उपस्थितों को जानकारी दी। उसके बाद निदेशक द्वारा संस्थान में हिन्दी में किये जा रहे कामकाज की प्रगति संक्षिप्त में बताई गई। उपनिदेशक (तक) ने सरकारी कामकाज में राजभाषा का प्रयोग करना तथा कर्मचारियों को प्रोत्साहन एवं प्रेरणा देना आवश्यक बताया। हम ज्यादा से ज्यादा काम हिन्दी में करने का प्रयास करेंगे इन शब्दों में अपने विचार अभिव्यक्त किए । संस्थान की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की नयी अध्यक्षा सुश्री अलका जोशी, विभागाध्यक्ष, मनोविज्ञान विभाग ने राजभाषा समिति के कामकाज पर प्रकाश डाला ।

समारोह के अन्त में मुख्य अतिथि के करकमलों द्वारा विजेताओं को पुरस्कार प्रदान किये गये । पुरस्कार विजेता कर्मचारियों को बधाई देते हुए उन्होने कहा कि मुझे इस बात की खुशी हो रही है कि इस छोटे तकनीकी संस्थान में बहुत सारा काम राजभाषा में हो रहा है और मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि कर्मचारियों को ऐसे ही मार्गदर्शन और प्रोत्साहन/बढ़ावा मिलता रहा तो आपका संस्थान राजभाषा नीति के कार्यान्वयन के लिए निर्धारित लक्ष्य को पूरा कर पायेगा ।

इस शुभ अवसर पर मुख्य आयोजन समारोह में सभी ने संकल्प लिया कि अपने समस्त दैनिक कार्य-कलापों के लिए राष्ट्रभाषा हिन्दी का प्रयोग करेंगे और देश का गौरव बढ़ायेंगे ।

अविनाशिलिंगम विश्वविद्यालय

तमिलनाडु के कोयम्बटूर स्थित अविनाशिलिंगम विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग की छात्राओं एवं अध्यापिकाओं ने मिलकर 24 सितम्बर, 1998 को विश्वविद्यालय के परिसर में हिन्दी सप्ताह के उपलक्ष्य में एक शानदार समारोह का आयोजन किया।

अविनाशिलिंगम विश्वविद्यालय की कुलपति डा. श्रीमती लक्ष्मी शान्ता राजगोपालजी ने अध्यक्षासन ग्रहण किया। भारतीय विमानपत्तन प्राधिकरण, कोयम्बत्तूर के अपर महाप्रबंधक (संचार) श्री एस.डी. अवस्थी विशिष्ट एवं मुख्य अतिथि रहे ।

सभा का भव्य स्वागत इसी विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग की प्रोफेसर एवं अध्यक्षा डा. सु. नागालक्ष्मी ने किया ।

डा. नागालक्ष्मी जी ने हिन्दी सप्ताह समारोह और राजभाषा-नीति के सम्बन्ध में परिचयात्मक विवरण प्रस्तुत किया। हिन्दी सप्ताह के उपलक्ष्य में आयोजित विभिन्न प्रतियोतिगताओं से सम्बन्धित रिपोर्ट, सभा-सचिव, कु. प्रतिभा (द्वितीय वर्ष की [स्नातक स्तर की] छात्रा) द्वारा प्रस्तुत की गयी । अध्यक्षा डा. श्रीमती लक्ष्मी शान्ता राजगोपालजी ने अपने भाषण में संपर्क भाषा के अध्ययन की महत्ता पर जोर दिया । श्री अवस्थीजी ने अपने विशिष्ट भाषण में, प्रयोजनमूलक हिन्दी पाठ्यक्रम की वरीयता, भारत सरकार की राजभाषा नीति एवं कार्यान्वयन सम्बन्धी विषयों पर प्रकाश डाला ।

छात्राओं द्वारा राष्ट्रीय एकीकरण से सम्बन्धित सामूहिक गीत प्रस्तुत किया गया । हिन्दी सप्ताह के उपलक्ष्य में आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं की विजेता छात्राओं को पुरस्कार वितरण प्रमुख अतिथि के हाथों सम्पन्न हुआ। स्नातकोत्तर स्तर की छात्रा कु. श्रीमती ने धन्यवाद समर्पित किया और राष्ट्र-गान के साथ समारोह का समापन हुआ ।

राजस्थान परमाणु बिजलीघर

भारत सरकार की राजभाषा नीति के अनुरूप हर वर्ष की भांति इस वर्ष भी राजस्थान परमाणु बिजलीघर में हिन्दी को बढ़ावा देने के उद्देश्य से 31 अगस्त 1998 से 14 सितम्बर, 1998 के दौरान "राजभाषा पखवाड़ा" मनाया गया जिसमें विभिन्न कार्यक्रम एवं प्रतियोगिताएं आयोजित की गईं ।

31-8-98 को संयंत्र स्थल पर रापबिघ के केन्द्र निदेशक श्री कैलाशपति ओझा ने पखवाड़े का उद्घाटन किया तथा एक अपील जारी कर अनुभागध्यक्षों से अनुरोध किया कि वे राजभाषा के सभी प्रावधानों का सख्ती से पालन करने के साथ ही प्रण करें कि हिन्दी का अधिकाधिक राजकाज में प्रयोग करेंगे। इस अवसर पर राजस्थान परमाणु विद्युत परियोजना (इकाई 1 से 4) के परियोजना निदेशक श्री वी. के. चतुर्वेदी का एक संदेश भी पढ़कर सुनाया गया जिसमें श्री चतुर्वेदी ने राजभाषा के प्रति अधिकारियों/कर्मचारियों को अपने कर्तव्य का स्मरण कराते हुए राजभाषा हिन्दी का मान बढ़ाने का अनुरोध किया। बिजलीघर के प्रशासनिक प्रधान एवं राजभाषा कार्यान्वयन समिति के अध्यक्ष श्री महेन्द्र सिंह ने भी इस अवसर पर एक परिपत्र जारी किया तथा वार्षिक कार्यक्रम के अंतर्गत चैक पॉइन्ट बनाए गए अनुभागों को सख्ती से अपना कार्य करने का निर्देश दिया।

एक सितम्बर, 1998 को प्रात: 09 बजे से सांय 17.30 बजे तक विक्रमनगर स्थित सेमिनार हाल में तृतीय हिन्दी वैज्ञानिक संगोष्ठी का आयोजन किया गया जिसमें लखनऊ से आमंत्रित हिन्दी विद्वान एवं विभिन्न मंत्रालयों एवं विभागों की हिन्दी सलाहकार समितियों के सदस्य डॉ मुकुल चंद पांडेय द्वारा "वैज्ञानिक कार्य व्यवहार में राजभाषा हिन्दी" विषय पर व्याख्यान के अलावा परमाणु ऊर्जा विभाग/न्यूक्लियर पावर कारपोरेशन की विभिन्न इकाइयों/राजस्थान परमाणु बिजलीघर के 12 व्याख्याताओं ने हिन्दी में वैज्ञानिक गूढ़ विषयों पर अपने आलेख पढ़े। संगोष्ठी का उद्घाटन परियोजना निदेशक श्री वी. के. चतुर्वेदी ने तथा समापन केन्द्र निदेशक श्री कैलाशपति ओझा ने किया। इस संगोष्ठी में कुल 40 श्रोताओं ने भाग लिया।

एक सितम्बर, 1998 को ही रात्रि में भाभानगर मनोरंजन क्लब में एक कवि सम्मेलन आयोजित किया गया जिसमें रापबिघ एवं विभिन्न पऊवि/न्यूपाका इकाइयों से पधारे कवियों ने अपनी रचनाओं का पाठ कर संध्या को रंगीन बनाया। कवि सम्मेलन की अध्यक्षता रापबिघ के मुख्य अधीक्षक श्री देव कुमार गोयल ने की। सर्वप्रथम श्री हंसराज चौधरी (रापबिघ) ने अपने मधुर कंठ से सरस्वती वंदना प्रस्तुत कर शुरूआत की तथा भापअके, मुम्बई से पधारे श्री विपुल सेन ने संचालन किया। इसके अलावा रापबिघ के लक्ष्मीदत्त शर्मा "तरुण", महावीर शर्मा, आर. एम. गडरिया, बंशीलाल लोहार, स्थानीय कवि श्री सोहन सिंह केलवा व कवयित्री श्रीमती निर्मला गौर एवं रचना अग्रवाल, बाल कवि परोक्ष शर्मा व गुंजन भारद्वाज, मोहनलाल राव (रापबिघ 3 व 4), नरौरा के सर्व श्री आर. एन. त्रिपाठी व दिगम्बर सिंह, तारापुर से पधारे सर्वश्री राधेश्याम दुबे, यतीन्द्र पांडेय, जयप्रकाश त्रिपाठी, कैगा से पधारे श्री लक्ष्मीनारायण वर्मा, केट, इंदौर से पधारे सर्व श्री मनोज रौतेला व कमलेश कुमार तथा भापासं (बड़ौदा) के श्री उपेन्द्र मेहता व केऔसुब (रावतभाटा) के श्री राम सुन्दर सिंह सुन्दर ने काव्य पाठ किया। अंत में वरिष्ठ प्रबंधक (कार्मिक एवं औद्योगिक संबंध) श्री महेन्द्र सिंह ने सभी कवियों को स्मृतिचिह्न वितरित किए।

इस अवसर पर 3 व 4 सितम्बर, 1998 को महिलाओं के लिए तथा 6-9-98 को सैकण्डरी एवं इससे पर के स्तर के विद्यार्थियों के लिए कल्पनाशक्ति प्रतियोगिता ('चित्र के आधार पर रचना लिखना) आयोजित की गई जिसमें क्र.मश: 37 महिलाओं एवं 170 विद्यर्थियों ने भाग लिया। इस प्रतियोगिता के परिणाम इस प्रकार रहे: श्रीमती मंजूलता शर्मा, एच 2/8, विक्रमनगर-प्रथम, श्रीमती शैल श्रीवास्तव, एच 7/14, विक्रमनगर-द्वितीय, श्रीमती अपर्णा शर्मा, टाइप 3/58 सी, अणुप्रताप कालोनी-तृतीय तथा श्रीमती राजश्री आचार्य, एच 2/16, विक्रमनगर, श्रीमती रेखा त्यागी, एच2/38, विक्रमनगर, सुश्री सेतु माथुर, टाइप-2/40 एच, अणुकिरण कालोनी को सांत्वना पुरस्कार। विद्यार्थियों में कक्षा 9 में ज्योति शर्मा प्रथम व श्वेता रावत द्वितीय, कक्षा 10 में ऋचा वर्मा प्रथम व हिमांशु दुबे द्वितीय, कक्षा 11 में प्रणव चौरसिया प्रथम, गुंजन भारद्वाज द्वितीय व अंकुर गर्ग को सांत्वना, कक्षा 12 में सूर्य प्रकाश सिंह हाड़ा प्रथम, ऋतुराज द्वितीय व राजेन्द्र प्रसाद को सांत्वना तथा कालेज स्तर पर कु. क्षिप्रा सक्सेना प्रथम, देवेन्द्र कुमार जैन द्वितीय व प्रतीक नाटेकर को सांत्वना।

6-9-98 को ही मिडिल एवं प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के लिए श्रुतलेखन/सुलेख प्रतियोगिता आयोजित की गई जिसमें 403 विद्यार्थियों ने भाग लिया। इसमें कक्षा 4 में विकास प्रजापति प्रथम व आलोक दीक्षित द्वितीय, कक्षा 5 में निधि कलकल प्रथम व सुरभि गांधी द्वितीय, कक्षा 6 में मिथिलेश यादव प्रथम व असीम कुमार का द्वितीय, कक्षा 7 में प्रखर गोयल प्रथम व प्रतिभा सिंह द्वितीय, कक्षा 8 में विपाशा शर्मा प्रथम व पूजा निगम द्वितीय रहे।

अहिन्दीभाषी कर्मचारियों के लिए एक शब्दज्ञान प्रतियोगिता 7 दिसम्बर, 1998 को आयोजित की गई जिसमें 15 मिनट से अधिक से अधिक हिन्दी कार्यालयीन शब्द लिखवाए गए। इसमें कुल 6 कर्मचारियों ने भाग लेकर 125 हिन्दी शब्द तक लिखने की क्षमता दिखाई। इस प्रतियोगिता में श्रीमती रैचल वर्गीस, कनिष्ठ सहायक-1, प्रथम, श्री सी. एस. पिल्लै, वरिष्ठ सहायक-1 द्वितीय, श्री सी. एम. जोसफ कुट्टी, वरिष्ठ सहायक-1 तृतीय रहे।

9-9-98 को बिल्कुल अलग तरह की एक प्रतियोगिता "शब्द पहेली" का आयोजन किया गया जिसमें संकेत के आधार पर कर्मचारी शब्दों को पहचानते थे। यह प्रतियोगिता काफी रोचक एवं ज्ञानवर्द्धक रही। इसमें कुल 36 कर्मचारियों ने भाग लिया। इसमें श्री आर. वी. श्रोत्रिय, सहायक सुरक्षा अधिकारी, प्रथम, श्रीमती संजीवा, आशुलिपिक-2, द्वितीय तथा श्री शांताराम श्रृंगी, कार्यदक्ष ई, तृतीय रहे।

11-9-98 को खुला प्रश्न मंच का आयोजन रखा गया जिसमें परमाणु ऊर्जा/नाभकीय संयंत्र की कार्यप्रणाली/परमाणु परीक्षण संबंधी सामान्य ज्ञान से संबंधित केवल दो प्रश्नों के उत्तर देने पर तुरंत कुल 19 पुरस्कार सर्व श्री मनोज मीणा, कनिष्ठ सहायक-2, भारत भूषण, सहायक फोरमेन, आर. वी. श्रेत्रिय, स.सु.अ., वी. के. आत्रेय, कार्यदक्ष एफ, मानसिंह, कार्यदक्ष एफ, मुकेश कुमार वर्मा, कनिष्ठ सहायक-2, एस. एम. नायर, कार्यदक्ष जी. सुभाष सिंह, वै.अ.डी.शांताराम श्रृंगी, कार्यदक्ष ई, शत्रुघ्न प्रसाद पाण्डेय, लेखा सहायक, प्रमोद व्यास, वै. स. बी., एस. सी. वधवा, कार्यदक्ष एफ, आर. एन. सिंह, कार्यदक्ष सी, उमर दराज अली, वे. स. बी., नरेन्द्र खंडेलवाल, वै. स. डी, ए. के. मिश्रा, वै. स. सी., टी. के. व्यास, वै. अ. सी., पी. उन्नीकुमारन्, वै. अ. डी., एवं डी. एस. ठाकुर, वै . अ. डी. को दिए गए। इस प्रतियोगिता में कुल 39 कर्मचारियों ने भाग लिया। यह प्रतियोगिता भी काफी ज्ञानवर्द्धक रही तथा तकनीकी प्रश्नों के उत्तर भी हिन्दी में दिए गए।

14 सितम्बर, 1998 (हिन्दी दिवस) को राजभाषा पखवाड़ा का समापन समारोह एवं पुरस्कार वितरण समारोह का आयोजन किया गया जिसमें प्रबंधक (राजभाषा) श्री वी. के. सक्सेना ने पखवाड़े के कार्यक्रमों पर रिपोर्ट प्रस्तुत की। समारोह में गृहमंत्री का संदेश वाचन भी किया गया। मुख्य अतिथि श्रीमती शारदा ओझा ने पुरस्कार विजेताओं को प्रमाण पत्र एवं पारितोपिक एवं वर्ष के दौरान अपना कार्यालयीन कामकाज हिन्दी में करने वाले कर्मचारियों को केन्द्र निदेशक श्री के पी. ओझा ने प्रशस्ति पत्र वितरित किए।

भारतीय विमानपत्तन प्राधिकरण, क्षेत्रीय कार्यालय, चेन्नई

भारतीय विमानपत्तन प्राधिकरण के क्षेत्रीय कार्यालय, चेन्नई में दि. 01-09-98 से 16-09-98 तक हिन्दी पखवाड़े का भव्य आयोजन किया गया। हिन्दी पखवाड़े का उद्घाटन दि. 01-09-98 को हिन्दी निबंध लेखन प्रतियोगिता से हुआ। वर्ष 1998 के हिन्दी पखवाड़े के दौरान हिन्दी भाषी कर्मचारी, हिन्दीतर भाषी प्राज्ञा उत्तीर्ण कर्मचारी तथा हिन्दीतर भाषी अन्य कर्मचारियों के लिए अलग-अलग प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। हिन्दी पखवाड़े के दौरान हिन्दी निबंध लेखन, अंग्रेजी-हिन्दी एवं हिन्दी-अंग्रेजी अनुवाद, हिन्दी वाद-विवाद, हिन्दी कविता-पाठ एवं गीत गायन, सामूहिक हिन्दी गीत एवं हिन्दी टिप्पणी एवं प्रारूपण आदि प्रतियोगिताएं सुचारु रूप से आयोजित की गईं। इन सभी प्रतियोगिताओं में प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय स्थान प्राप्त करने वाले कर्मचारियों को नकद पुरस्कार और प्रमाणपत्र देकर प्रोत्साहित किया गया।

दि. 16-09-98 को हिन्दी पखवाड़े के समापन समारोह की अध्यक्षता क्षेत्रीय कार्यपालक निदेशक श्री सुरेश चन्द्रजी द्वारा की गइ। इस अवसर पर हिन्दी के सुप्रसिद्ध विद्वान, हिन्दी शिक्षण योजना के उपनिदेशक श्री एम. पी. दुबेजी मुख्य अतिथि के रूप में आमंत्रित थे। मुख्य अतिथि ने अपने वक्तव्य में भारत की भावात्मक एकता के लिए हिन्दी के विशेष योगदान की चर्चा की और बताया कि राजभाषा के रूप में हिन्दी का अधिकाधिक प्रयोग करने की आवश्यकता है। दक्षिण में हिन्दी का चलन भले ही कम हो लेकिन कार्यालयों में प्रयोग अधिक है। अत: राजभाषा प्रयोग में दक्षिण उत्तर से आगे ही रहेगा। उन्होंने अपने अनुभवशील व्याखयन से श्रोताओं को आकर्षित किया। उन्होंने सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों से आग्रह किया कि वे जिस अनुभाग में काम करते है वहां हिन्दी का अधिकाधिक प्रयोग करें और हिन्दी कार्य को हिन्दी पखवाड़े तक सीमित न रखकर उसे दैनिक कामकाज की आदत के रूप में अपनाएं।

क्षेत्रीय कार्यपालक निदेशक ने अपने अध्यक्षीय भाषण में राजभाषा विभाग द्वारा निर्धारित वार्षिक कार्यक्रम के लक्ष्यों की पूर्ति के लिए हिन्दी पत्राचार को बढ़ाने की आवश्यकता पर जोर दिया। उन्होंने प्रतियोगिताओं के विजेताओं को बधाई दी और उनकी प्रशंसा करते हुए पुरस्कार वितरित किए। प्रशासनिक एवं कार्मिक अनुभाग द्वारा देशप्रेम से ओतप्रोत सारे जहां से अच्छा गीत की सुरम्य प्रस्तुति की गई। हिन्दी पखवाड़े के समापन समारोह में अधिकाधिक अधिकारियों एवं कर्मचारियों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया। राष्ट्रगान के साथ हिन्दी पखवाड़े के समापन समारोह भव्य ढंग से संपन्न हुआ।

हिन्दी पखवाड़े के समापन समारोह के अंतिम चरण में हिन्दी अधिकारी एवं हिन्दी अनुवादक द्वारा क्षेत्रीय कार्यालय के विभिन्न अनुभागों में जाकर हिन्दी कार्य की समीक्षा की गई और काम काज में हिन्दी प्रयोग की वृद्धि पाई गई। हिन्दी पखवाड़े के दौरान आयोजित प्रतियोगिताओं से प्रेरित होकर अधिकारियों और कर्मचारियों द्वारा अधिकाधिक कार्य हिन्दी में किया गया। इस प्रकार क्षेत्रीय कार्यालय में हिन्दी पखवाड़े के आयोजन से हिन्दी कार्य में अपेक्षानुसार अभिवृद्धि हुई है और हिन्दी पखवाड़ा आयोजित का उद्देश्य सार्थक सिद्ध हुआ है।

आकाशवाणी, जयपुर

इस केन्द्र पर दिनांक 14-09-98 से 28-9-98 तक हिन्दी दिवस/पखवाड़ा उत्साहपूर्वक मनाया गया। मुख्य समारोह 14-09-98 को लोगों से खचा-खच भरे कैन्टीन हॉल में आयोजित किया गया। इस अवसर पर जाने माने साहित्यकार श्री मोहन श्रोतीय को मुख्य अतिथि के रूप में आमंत्रित किया गया। उन्होंने हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए अपने मूल्यवान विचार प्रस्तुत किये।

पखवाड़े के दौरान विभिन्न प्रतियोगिताएं आयोजित की गयीं। दिनांक 15-09-98 को "शिक्षा का व्यावसायीकरण" विषय पर निबंध प्रतियोगिता हुई। इस प्रतियोगिता में 10 अधिकारियों/कर्मचारियों ने भाग लिया। इस प्रतियोगिता में श्री जी. के. सक्सेना, श्री सुनील कुमार गुप्ता एवं श्री बजरंग लाल पारीक ने क्रमश: प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान प्राप्त किया।

दिनांक 17-09-98 को श्रुतलेख प्रतियोगिता आयोजित की गयी। इसमें 20 प्रतियोगी शामिल हुए। श्री ए. के. गुप्ता, श्री बजरंग लाल पारीक एवं श्री रामावतार विजय ने क्रमश: प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान प्राप्त किया।

दिनांक 21-09-98 को टिप्पण प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। इसमें 9 प्रतियोगी शामिल हुए। श्री कजोडमल बलाई, श्री ए. के. गुप्ता, श्री डी. के. जैन ने क्रमश: प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान प्राप्त किया।

दिनांक 21-09-98 को टिप्पण प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। इसमें 10 प्रतियोगी शामिल हुए। श्री रामअवतार विजय, श्री बजरंग लाल पारकि एवं श्री अशोक कुमार ने क्रमश: प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान प्राप्त किया।

दिनांक 25-09-98 को कवि गोष्ठी का आयोजन किया गया। इसमें 6 प्रतियोगियों ने भाग लिया। श्री के. के. तनेजा, श्री बी. एल. सैनी एवं श्री योगेन्द्र पाल सिंह ने क्रमश: प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान प्राप्त किया।

दिनांक 28-09-98 को "भारतीय संस्कृति और फैशन" विषय पर आशुभाषण प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। इसमें 7 प्रतियोगियों ने भाग लिया। श्री राकेश जैन, श्री शिवदत्त शर्मा एवं श्री जी. के. सक्सेना ने, क्रमश: प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान प्राप्त किया।

हिन्दी पखवाड़े का समापन एवं पुरस्कार वितरण समारोह 28-09-98 को सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर श्री मोती सिंह, हिन्दी अधिकारी ने माननीय गृहमंत्री श्री लालकृष्ण आडवाणी का संदेश पढ़कर सुनाया। इसके पश्चात् मुख्य अतिथि के रूप में उपस्थित डॉ. सुदेश बत्रा ने राजभाषा हिन्दी पर विचार प्रकट किये। अंत में केन्द्र निदेशक एवं केन्द्र अभियंता द्वारा विजेताओं को पुरस्कार वितरित किए गये।

भारतीय रेल सिगनल इंजीनियरी और दूरसंचार संस्थान, सिकंदराबाद

भारतीय रेल सिगनल इंजीनियरी और दूरसंचार संस्थान, सिकंदराबाद (इरिसेट) में हिंदी दिवस के उपलक्ष्य में दिनांक 11-09-98 को एक हिंदी कवि सम्मेलन का आयोजन किया गया। इस अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में दक्षिण मध्य रेलवे महिला कल्याण संगठन की अध्यक्षा श्रीमती मंजरी सिन्हा उपस्थित थीं। श्रीमती सिन्हा एक प्रसिद्ध समालोचक व कला समीक्षक हैं।

मुख्य अतिथि के रूप में उन्होंने कहा कि कविता ही मनुष्य की पहचान है। संवेदनशीलता से कविता मनुष्य के हृदय का मंथन करती है जिससे मनुष्य अपने विकास पथ पर आगे बढ़ता जाता है। कविता हमारे उदात्त तत्व को प्रेरित करती है। अपने भाषण से पूर्व श्रीमती सिन्हा ने दीप प्रज्वलित कर समारोह का उद्घाटन किया।

इरिसेट के निदेशक श्री सुरेश चंद्र गुप्त ने पुष्प गुच्छ से उनका स्वागत किया तथा स्मृति चिह्न से उनको सम्मानित किया।

इसके बाद प्रभारी राजभाषा अधिकारी व प्राध्यापक सिगलन श्री एन. वी. पर्वतीकर ने सभी कवियों का मंच पर स्वागत किया तथा सभी का उनसे परिचय कराया।

इरिसेट के उप मुख्य राजभाषा अधिकारी व डीन श्री एम. सुरेश ने सभी कवियों का पुष्प गुच्छ से स्वागत करने के बाद अपने स्वागत भाषण में उन्होंने इरिसेट में राजभाषा हिन्दी की हो रही प्रगति का परिचय दिया और आशा व्यक्त की कि श्री सुरेश चंद्र गुप्त, निदेशक के नेतृत्व में वह दिन दूर नहीं जब इरिसेट में सारा काम हिंदी में होने लगेगा।

इस कवि सम्मेलन में डा. इन्दु वशिष्ठ, श्री स्वाधीन, श्री एम. ए. समी, श्री नरेंद्र राय, श्री दुर्गा दत्त पांडेय, श्री सुरेश जैन, श्रीमती पुष्पा वर्मा तथा लखनऊ के श्री देवकीनंदन शांत तथा इरिसेट के श्री बं वेकटनारायण, श्री जे. आर. मल्होत्रा, श्रीमती एम. वेकटरमणा चौधरी, श्री मुन्ना लाल शर्मा के साथ-साथ इरिसेट के निदेशक श्री सुरेश चंद्र गुप्त, ने स्वयं भाग लिया इसके संचालन का भार नगर की जानी.मानी कवयित्री डा. अहिल्या मिश्रा पर था तथा इसकी अध्यक्षता नगर के प्रसिद्ध वयोवृद्ध कवि श्री दुलीचंद शशि ने की।

कवि सम्मेलन के पश्चात् सभी कविगणों को इरिसेट के उप मुख्य राजभाषा अधिकारी व डीन श्री एम. सुरेश ने स्मृति चिह्न भेंट किए।

श्रीमती के. स्वरूपा, राजभाषा सहायक के धन्यवाद प्रस्ताव के बाद कार्यक्रम समाप्त हुआ।

कार्यालय : मुख्य अभियंता (अनुसंधान एवं विकास) आकाशवाणी एवं दूरदर्शन, नई दिल्ली

मुख्य अभियंता (अनु. एवं वि.) के कार्यालय में दिनांक 01-09-98 से 15-09-98 तक हिन्दी पखवाड़ा मनाया गया। पखवाड़े का शुभारम्भ मुख्य अभियंता (अनु. एवं वि.) द्वारा अपील जारी करके किया गया, जिसमें उन्होंने राजभाषा नियमों के पालन तथा अधिकाधिक कार्य हिन्दी में करने का आग्रह किया। तत्पश्चात् हिन्दी के संबंध में राजभाषा विभाग से प्राप्त पोस्टर अनुभागों में लगाए गए तथा मुख्य स्थानों पर बैनर लगाए गए।

हिन्दी पखवाड़े के दौरान चार प्रतियोगिताओं निबंध, टंकण, भाषण एवं प्रश्नोत्तरी—का आयोजन किया गया। इन प्रतियोगिताओं में कुल मिलाकर 38 अधिकारियों एवं कर्मचारियों ने भाग लिया। पखवाड़ा के दौरान दो दिवसीय कार्यशाला का भी आयोजन किया गया। कार्यशाला में वरिष्ठ अधिकारियों द्वारा राजभाषा नीति एवं कार्यालय में अनुवाद की समस्या पर विचार आदि व्यक्त किए गए। वर्ष के दौरान जिन कर्मचारियों ने अपना मूल कार्य अधिकाधिक हिन्दी में किया उन्हें प्रोत्साहन योजना के अंतर्गत पुरस्कृत किया गया।

14 सितम्बर को हिन्दी दिवस के शुभ अवसर पर पुरस्कार वितरण समारोह का आयोजन किया गया। सर्वप्रथम हिन्दी अधिकारी ने पखवाड़ा के दौरान आयोजित कार्यक्रमों की विस्तृत जानकारी दी। तत्पश्चात् गृह मंत्री जी का संदेश पढ़कर सुनाया गया। श्री अंशु शेखर, मुख्य अभियंता ने हिन्दी दिवस पर बधाई देते हुए पखवाड़ा के दौरान आयोजित कार्यक्रमों में सफल प्रतियोगियों को पुरस्कार एवं प्रमाण-पत्र देकर सम्मानित किया। मुख्य अभियंता में अपने अध्यक्षीय भाषण में कहा कि हिंदी भाषा हमारी राष्ट्रभाषा और राजभाषा है। राष्ट्रीय स्तर पर जितनी भी भाषाएं हैं उनमें से हिंदी को ही संपर्क भाषा का गौरव प्राप्त हुआ है क्योंकि हिंदी की सरलता और व्यापकता से सभी परिचित हैं। हम अपनी मानसिकता को बदलें और आत्मविश्वास के साथ हिंदी का प्रयोग करें तथा राजभाषा नियमों का आस्था के साथ पालन करते हुए अपना प्रतिदिन का शासकीय कार्य हिंदी में करें। इसके उपरान्त वीडियो फिल्म "यह आकाशवाणी है" दिखाई गई।

अन्त में निदेशक (अनु.) द्वारा हिन्दी पखवाड़ा के सफल आयोजन पर हिंदी एकक को बधाई दी गई एवं पखवाड़ा को सफल बनाने में सभी उपस्थित अधिकारियों एवं कर्मचारियों का धन्यवाद किया।

भारतीय प्रबंध संस्थान बेंगलूर बन्नेरघट्टा रोड, बेंगलूर

संस्थान में 01 सितम्बर, 1998 से लेकर 14 सितम्बर, 1998 को हिन्दी दिवस समारोह तक हिन्दी पखवाड़ा समारोह आयोजित किया गया। हिन्दी पखवाड़ा समारोह के दौरान संस्थान के निदेशक, डॉ. एम राममोहन राव के परिपत्र संख्या भाप्रसंबें/राभा/हिंप/07/98/974 दिनांक 27 अगस्त, 1998 के अनुसार संस्थान के कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त सभी संकाय सदस्यों और अधिकारियों से हिन्दी पखवाड़े के दौरान हिन्दी में हस्ताक्षर करने के लिए कहा गया।

इस पखवाड़े के अंतर्गत अनेक कार्यक्रम, प्रतियोगिताएँ आयोजित की गईं, जिनमें कर्मचारियों एवं अधिकारियों ने अधिक संख्या में भाग लिया। इस दौरान हिन्दी के कार्यान्वयन एवं प्रचार-प्रसार हेतु यथासंभव प्रयास किए गए। इन कार्यक्रमों में सभी कर्मचारियों ने बढ़-चढ़ कर भाग लिया।

01 सितम्बर, 1998 से संस्थान में हिन्दी पखवाड़े का शुभारम्भ किया गया। इस दिन के कार्यक्रम की शुरुआत संस्थान के निदेशक, डॉ. एम. राममोहन राव की अध्यक्षता में सरस्वती वंदना से की गई। संस्थान के वरिष्ठ कार्मिक प्रबंधक, श्री जी. वाई. सुहास ने लोगों को स्वागत भाषण से संबोधित किया।

इसके पश्चात् संस्थान के निदेशक ने लोगों को संबोधित किया। उन्होंने अपने संबोधन में कहा कि भारत में विविध भाषाओं, धर्मों और जातियों के होने पर भी उसकी संस्कृति सदा एक-सी रही है। साथ ही उन्होंने हिन्दी के प्रचार-प्रसार पर अधिक महत्व देते हुए कहा कि इसे समारोह के आयोजन तक ही सीमित नहीं रखना चाहिए, बल्कि हमारे अधिकारियों को स्वयं हिन्दी का अधिक से अधिक प्रयोग करके अपने कर्मचारियों के सामने उदाहरण प्रस्तुत करते हुए उनके मन में हिन्दी में काम करने का उत्साह भी जागृत करना चाहिए। अपने संबोधन में उन्होंने विविधता में एकता को भारत की अपनी एक विशेषता बताया।

निदेशक के संबोधन के पश्चात् फिल्म संगीत प्रतियोगिता प्रारम्भ हुई। इस प्रतियोगिता में संस्थान के अनेक कर्मचारियों ने भाग लिया।

04 सितम्बर, 1998 को निबंध प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। निबंध का शीर्षक था—21वीं सदी में भारत।

08 सितम्बर, 1998 को प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता आयोजित की गई, जिसमें 8 टीमों ने भाग लिया। प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता में हिन्दी के विभिन्न पहलुओं को सम्मिलित किया गया था जैसे—व्याकरण, नेमी टिप्पणीयाँ, कार्यालयीन शब्दावली, हिन्दी साहित्य, सामान्य ज्ञान एवं संगीत। यह प्रतियोगिता अत्यधिक ज्ञानवर्धक एवं रोचक थी, जिसमें संस्थान के कर्मियों ने अत्यधिक रुचि दिखाई।

10 सितम्बर, 1998 को अधिकारियों एवं कर्मचारियों हेतु हिन्दी कार्यशाला का आयोजन किया गया। कार्यशाला का संचालन केन्द्रीय हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान, बेंगलूर के सहायक निदेशक, श्री श्रीकांत दैवज्ञ जी द्वारा किया गया। कार्यशाला में व्याकरण के विभिन्न पहलुओं एवं कार्यालयीन हिन्दी पर विस्तृत चर्चा की गई।

14 सितम्बर, 1998 को हिन्दी दिवस समारोह पर अंत्याक्षरी प्रतियोगिता का आयोजन किया गया, जिसमें छह टीमों ने भाग लिया। अंत्याक्षरी का

संचालन केन्द्रीय विद्यालय डी.आर. डी. ओ. कॉम्प्लेक्स, बेंगलूर-93 की अध्यापिका श्रीमती चित्रा दिवाकर एवं केन्द्रीय विद्यालय आई.आई.एस.सी., बेंगलूर-12 की अध्यापिका श्रीमती टी.वी. उमा द्वारा किया गया। आधुनिक यंत्रों से सुसज्जित दोनों अध्यापिकाओं द्वारा अंत्याक्षरी प्रतियोगिता का आयोजन सराहनीय रहा। अंत्याक्षरी प्रतियोगिता के तुरंत पश्चात् संस्थान के निदेशक एवं राजभाषा कार्यान्वयन समिति के अध्यक्ष डॉ. एम. राममोहन राव द्वारा संस्थान की हिन्दी पत्रिका 'प्रबंध ज्योति' के प्रथम अंक का विमोचन किया गया। इस अवसर पर राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सदस्य एवं वित्त सलाहकार एवं मुख्य लेखा अधिकारी श्री जी. के. देसाई वरिष्ठ कार्मिक प्रबंधक एवं समिति के सदस्य-सचिव श्री जी.वाई. सुहास, संस्थान के प्रकाशक प्रोफेसर के.आर. वेंकटेश एवं वरिष्ठ वित्त अधिकारी श्री चन्द्रशेखर राव भी उपस्थित थे। इसके पश्चात् संस्थान के निदेशक डॉ. एम. राममोहन राव द्वारा प्रतियोगिताओं के विजेताओं को पुरस्कार वितरित किए गए। समस्त प्रतियोगिताओं हेतु पुरस्कार इस प्रकार थे :

प्रथम पुरस्कार	(एक)	रु. 175/-
द्वितीय पुरस्कार	(एक)	रु. 150/-
तृतीय पुरस्कार	(एक)	रु. 125/-
सांत्वना पुरस्कार	(एक)	रु. 100/-

इसी के साथ हिन्दी पखवाड़े का समापन हुआ।

आकाशवाणी, रोहतक

आकाशवाणी, रोहतक द्वारा 1 सितम्बर, 1998 से 15 सितम्बर, 1998 तक हिन्दी पखवाड़ा उत्साहपूर्वक मनाया गया। इस अवसर पर केन्द्र निदेशक श्री श्रीवर्धन कपिल ने एक अपील जारी कर केन्द्र के सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों से सभी कार्य हिन्दी में करने तथा इस दौरान आयोजित की जाने वाली प्रतियोगिताओं में बढ़-चढ़ कर भाग लेने का आग्रह किया। हिन्दी पखवाड़े के दौरान हिन्दी टंकण, हिन्दी निबंध, भाषण तथा कविता पाठ प्रतियोगिताओं के साथ-साथ 3-9-98 को एक दिवसीय हिन्दी कार्यशाला का आयोजन भी किया गया। हिन्दी कार्यशाला के उद्घाटन भाषण में केन्द्र निदेशक ने केन्द्र के सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों का आह्वान किया कि वे अपना सम्पूर्ण कार्य हिन्दी में करें। उन्होंने कहा कि हिन्दी कार्यशाला एक ऐसा मंच है जिस से राजभाषा नीति, अधिनियम की जानकारी के साथ टिप्पण-आलेखन, पत्राचार, शब्दावली, तार आदि लिखने का व्यावहारिक प्रशिक्षण दिया जाता है तथा हिन्दी में कार्य करने में झिझक को दूर करने के साथ-साथ कार्य करने में आने वाली कठिनाइयों का समाधान कर हिन्दी में कार्य करने के लिए उत्साह बढ़ाया जाता है। केन्द्र निदेशक ने कार्यशाला में भाग ले रहे कर्मचारियों को हिन्दी कार्यशाला में प्रशिक्षण प्राप्त कर इसका उपयोग अधिक-से-अधिक हिन्दी में कार्य करने का आग्रह किया।

हिन्दी पखवाड़े के दौरान आयोजित हिन्दी टंकण, निबंध, भाषण तथा कविता पाठ प्रतियोगिता में कर्मचारियों ने बढ़ चढ़ कर भाग लिया तथा विजेताओं को पुरस्कृत किया गया। 14 सितम्बर को हिन्दी दिवस मनाया गया तथा मुख्य समारोह आयोजित किया गया और इसी दिन कविता पाठ प्रतियोगिता का भी आयोजन किया गया। 14 सितम्बर को आयोजित मुख्य समारोह में मुख्य अतिथि के रूप में केन्द्र निदेशक ने अधिकारियों को संबोधित करते हुए इस केन्द्र पर हिन्दी की प्रगति की सराहना की तथा हिन्दी के प्रचार-प्रसार में पूरा योगदान करने का संकल्प लिया। उन्होंने कहा कि हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा है। इस नाते इस का प्रचार-प्रसार बढ़ाने तथा इसे वह सम्मानित स्थान दिलाने के लिए हमें पूरा जोर लगाना है जिस की वह अधिकारी है। हिन्दी में अधिक से अधिक काम करना हमारा कर्तव्य ही नहीं बल्कि हिन्दी के प्रति एक लेवा तथा इसे सम्मान प्रदान कर राष्ट्रीयता की भावना भी जाग्रत करना है। उन्होंने हिन्दी के साथ अन्य भाषाओं को अपनाने तथा उनका सम्मान करने का भी आह्वान किया।

आकाशवाणी, विजयवाड़ा

आकाशवाणी, विजयवाडा केन्द्र में प्रत्येक वर्ष की भाँति इस वर्ष भी "हिन्दी दिवस" एवं "हिन्दी पखवाड़ा" समापन समारोह 14 सितम्बर, 1998 को आयोजित किया गया। टी. जे. पी. एस. विद्यालय, गुंटूरू के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष श्री शेख मौलाली इस समारोह के मुख्य अतिथि थे। उन्होंने कहा कि "आजादी के स्वर्ण जयंती मना रहे भारत में हिन्दी भाषा तथा हिन्दी दिवस की अपनी अलग ही एक विशेषता है। पूरे विश्व में हिन्दी भाषा तीसरे स्थान पर है। गाँधीजी ने हिन्दी भाषा को माँ और अंग्रेजी को सौतेली माँ के रूप में वर्णित किया था। यदि हम अपनी मातृ भाषा को भूल जाएंगे तो हमें विदेश में भी आदर से नहीं देखेंगे"।

अध्यक्ष महोदय श्री सी. टी. राव ने कहा कि यह दिन हमें प्रति वर्ष स्मरण कराता है कि हम वर्ष भर हिन्दी का प्रयोग करें। उन्होंने सभी उपस्थित अधिकारियों/कर्मचारियों को, इस अवसर पर बधाई दी। राजभाषा अधिकारी श्रीमती एन. राजेश्वरी ने उनके विभाग द्वारा किये जा रहे हिन्दी प्रगति/सेवाओं का विवरण दिया। इस वर्ष नराकास द्वारा हमारे कार्यालय को वर्ष 1996-97 हिन्दी प्रगति एक चल शील्ड प्रदान की गई।

अधिकारियों/कर्मचारियों द्वारा एक लघु हास्य नाटक "यह हुई बात" प्रत्यक्ष रूप में प्रस्तुत की गई। इसके प्रभाव से समारोह में हर्षोल्लास का वातावरण समा गया।

विभिन्न प्रतियोगिताओं के सफल विजेताओं को मुख्य अतिथि द्वारा प्रमाण-पत्र/नकद पुरस्कार प्रदान किए गये। इस समारोह का आयोजन हिन्दी टंकण श्री एम. वी. प्रसाद की सहयोग से किया गया। धन्यवाद समर्पण एवं राष्ट्रीय गीत से समारोह का समापन हुआ।

इस समारोह का प्रचार-प्रसाद रेडियो/सीटी केबल एवं स्थानीय दैनिक पत्रिकाओं के माध्यम से भी किया गया।

आकाशवाणी, शिमला

आकाशवाणी, शिमला द्वारा 1 सितम्बर, से 15 सितम्बर,1998 कर अवधि के दौरान हिन्दी पखवाड़ा बड़े ही उत्साह के साथ मनाया गया। दिनांक 26-8-98 को केन्द्र निदेशक महोदय ने एक परिपत्र भी जारी किया, जिसमें समस्त अधिकारियों/कर्मचारियों से अपील की कि सभी केवल हिन्दी पखवाड़े की समयावधि में ही नहीं बल्कि वर्ष भर अधिक से अधिक कार्य राजभाषा में ही करें। पखवाड़े की अविध में निम्नलिखित प्रतियोगितायें भी आयोजित की गईं :—

कर्मचारियों को हिन्दी में टिप्पण और प्रारूपण करने की प्रेरणा देने हेतु यह प्रतियोगिता दिनांक 4-9-98 को आयोजित की गई।

दिनांक 8-09-98 को टंकण प्रतियोगिता आयोजित की गई, जिसमें कार्यालय के टंकणों ने बड़े उत्साह से भाग लिया और हर्ष का विषय है कि प्रथम स्थान अंग्रेजी के आशुलिपिक श्री मदन लाल वर्मा ने प्राप्त किया।

दिनांक 10-9-98 को श्रुत लेख एवं सुन्दर लेख प्रतियोगिता का आयोजन किया गया इसमें भी कार्यालय के अधिकारियों/कर्मचारियों ने उत्साह से भाग लिया।

दिनांक 14-9-98 को हिन्दी कविता पाठ प्रतियोगिता आयोजित की गई। इसमें उत्साहजनक प्रतिभागिता रही।

हिन्दी दिवस के उपलक्ष्य में मुख्य समारोह का आयोजन 14 सितम्बर को निश्चित था, परन्तु अचानक ही केन्द्रीय सूचना एवं प्रसारण मन्त्री के मण्डी क्षेत्र के दौरे की सूचना मिलने के कारण अधिकारियों को वहाँ जाना पड़ा। इस कारण मुख्य समारोह 18 सितम्बर को आयोजित किया गया।

मुख्य समारोह में उपर्युक्त प्रतियोगिताओं के विजेताओं और वर्ष 1997-98 की अवधि में हिन्दी में सराहनीय कार्य करने वाले अधिकारियों एवं कर्मचारियों को हिन्दी प्रोत्साहन योजना के अन्तर्गत, केन्द्र निदेशक तथा अधीक्षण अभियन्ता महोदय द्वारा नगद पुरस्कार तथा प्रमाण-पत्र प्रदान किए गये।

इस अवसर पर केन्द्र निदेशक महोदय अधीक्षण अभियन्ता महोदय तथा कार्यकारी निर्माता महोदय ने अधिकारियों/कर्मचारियों को सम्बोधित किया तथा सभी वक्ताओं ने इस बात पर बल दिया कि हमें हिन्दी में अधिक से अधिक कार्य करना चाहिये। केन्द्र निदेशक महोदय ने कहा कि हिन्दी में काम करना हमारी संवैधानिक आवश्यकता ही नहीं अपितु राजभाषा के प्रति हमें अपने कर्तव्य का निर्वाह पूरी लगन और निष्ठा से करना चाहिये।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, शिमला द्वारा आयोजित प्रतियोगिताओ में भी आकाशवाणी, शिमला के अधिकारियों ने भाग लिया और दो अधिकारियों ने प्रश्न मंच प्रतियोगिता में प्रथम स्थान प्राप्त किया। केन्द्र के एक अधिकारी नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, शिमला द्वारा प्रकाशित की जाने वाली वार्षिक पत्रिका "यात्रा" के सम्पादक मण्डल में भी है।

इस पखवाड़े में आकाशवाणी, शिमला में यह हर्ष का विषय रहा कि सभी अनुभागों के अधिकारियों/कर्मचारियों ने प्रतियोगिताओं में बढ़-चढ़कर भाग लिया।

केन्द्रीय गृह मन्त्री श्री लाल कृष्ण आडवाणी का संदेश तथा महानिदेशक आकाशवाणी श्री ओम प्रकाश केजरीवाल की अपील इस केन्द्र पर क्रमश. 21-9-98 तथा 18-9-98 को प्राप्त हुए इसलिए इन्हें समारोह में नहीं पढ़ा जा सका, लेकिन बाद में सभी अनुभागों में वितरित कर दिया गया।

आई. डी. पी. एल., हैदराबाद

इंडियन ड्रग्स एण्ड फार्मास्यूटिकल्स लिमिटेड, हैदराबाद में सितम्बर के तीसरे सप्ताह में हिन्दी दिवस/सप्ताह का आयोजन किया गया तथा दिनांक 21 सितम्बर, 1998 को 'हिन्दी दिवस/सप्ताह' का समारोह का शुभारम्भ कार्मिक प्रबन्धक डा. भगत राम ने किया।

कम्पनी के कार्मिक प्रबन्धक डा. भगत राम ने सभा को संबोधित किया। उन्होंने विचार व्यक्त किया कि कम्पनी की आर्थिक विषमताओं के बावजूद भी हिन्दी समारोह का आयोजन किया जा रहा है। इस अवसर पर अध्यक्ष एवं प्रबन्ध निदेशक श्री वी.के. सरीन का संदेश सभा को पढ़कर सुनाया गया।

इस अवसर पर महाप्रबंधक श्री ए. के. सूर ने कहा कि राजभाषा अधिनियम के प्रावधानों के कार्यान्वयन का उत्तरदायित्व हम सभी पर है। अत: हम सब का यह कर्तव्य है कि सरकारी कामकाज में हिन्दी को अधिक से अधिक प्रयोग में लाएं तथा सरकारी कामकाज को आम जनता की योगदान को हिन्दी में करें तो जनता और सरकार के बीच की दूरी कम हो जाती है। उक्त उद्देश्य के प्रति हमारा यह कर्त्तव्य हो जाता है कि सरकारी कामकाज में आम योगदान को हिन्दी का प्रयोग करें और यदि किसी अंग्रेजी शब्द का समुचित हिन्दी शब्द न मिलता हो तो उसे ज्यों का त्यों रखकर आगे बढ़ते जाएं।

हिन्दी दिवस/सप्ताह समारोह के दौरान आयोजित शुद्ध लेखन, श्रुतलेखन, निबन्ध तथा भाषण प्रतियोगिताओं में विजयी कर्मचारियों को पुरस्कार दिए गए तथा सभी प्रतिभागियों को प्रमाण पत्र भी दिए गए। पुरस्कार वितरण प्लान्ट के महाप्रबन्धक श्री ए.के. सूर ने किया। समारोह में श्री डोभाल, श्री प्रेम कुमार, डा. भगत राम, एस.डी. शर्मा, चाराघुलू, रामास्वामी तथा श्री शरपांजे जी ने भी भाग लिया।

प्लान्ट के उप कार्मिक प्रबन्धक श्री बी.एन. डोभाल के धन्यवाद ज्ञापन के साथ हिन्दी दिवस/सप्ताह का कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

विज्ञान और प्रौद्योगिकी मंत्रालय, विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग

विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग, वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान विभाग तथा वेतन एवं लेखा कार्यालय ने संयुक्त रूप से हिन्दी पखवाड़े का आयोजिन 1 से 14 सितम्बर, 1998 तक किया। हिन्दी पखवाड़े का उद्घाटन 1 सितम्बर को राष्ट्रीय विज्ञान और प्रौद्योगिकी संचार परिषद (एन सी एस टी सी) के प्रमुख व सलाहकार डॉ नरेन्द्र कुमार सहगल ने किया। इस अवसर पर उन्होंने स्टाफ से अधिक-से-अधिक संख्या में प्रतियोगिताओं में भाग लेने का आग्रह किया।

आरम्भ में श्रीमति विमला यादव, निदेशक (प्रशा) ने हिन्दी पखवाड़े के दौरान आयोजित हिन्दी वाक् प्रतियोगिता, निबंध प्रतियोगिता, क्विज प्रतियोगिता, टिप्पण और आलेखन प्रतियोगिता, हिन्दी टंकण, हिन्दी आशुलिपि, हास्य प्रधान लघु नाटक कविता, गायन आदि प्रतियोगिता की रूपरेखा प्रस्तुत की।

इस समारोह में मुख्य अतिथि के रूप में डॅा० (श्रीमति) मंजू शर्मा, सचिव, बायोटैक्नोलोजी विभाग को आमंत्रित किया गया। समारोह में सचिव, संयुक्त सचिव (प्रशा.), निदेशक (प्रशा.), आदि ने हिन्दी दिवस की महत्ता को बताते हुए मंत्रालय के सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों से अनुरोध किया कि वे अपने रोजमर्रा के काम में हिन्दी का अधिक-से-अधिक प्रयोग करे ताकि हिन्दी का और अधिक प्रचार एवं प्रसार हो सके।

डॉ (श्रीमती) मंजू शर्मा, मुख्य अतिथि ने प्रसन्नता व्यक्त की कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी मंत्रालय के अधिकारियों और कर्मचारियों ने उत्साहपूर्वक हिन्दी पखवाड़े में भाग लेते हुए इसका सफल आयोजन किया है। उन्होंने हिन्दी दिवस की महत्ता को बताते हुए विज्ञान को हिन्दी माध्यम से आम आदमी तक जोड़ने की बात कही। उन्होंने सभी से आग्रह किया कि वे हिन्दी का अधिकाधिक प्रयोग करें। उन्होंने इस अवसर पर एक स्वरचित कविता भी सुनाई। इसके उपरान्त, मुख्य अतिथि द्वारा सभी प्रतियोगियों को नकद पुरस्कार प्रदान किए गये। पुरस्कार वितरण के पश्चात् प्रतियोगिता के माध्यम से हुए "सांस्कृतिक-कार्यक्रम" को कुछ चुनिंदा झलकियां भी मुख्य अतिथि की उपस्थिति में प्रस्तुत की गई।

अंत में श्री गुरदेव सिंह बसरा अवर सचिव (प्रशा), डी एस आई आर ने मुख्य अतिथि व उपस्थित सभी सदस्यों व संचालक श्री अश्विनी कुमार को धन्यवाद ज्ञापित किया।

भौतिक अनुसंधान प्रयोगशाला, अहमदाबाद

भौतिक अनुसंधान प्रयोगशाला, में हिन्दी सप्ताह का शुभारंभ, सोमवार, दिनांक 14-9-98 को हुआ। गुजरात हिन्दी साहित्य परिषद के अध्यक्ष डॉ. अम्बाशंकर नागर ने इसका उदघाटन दीप जला कर किया। उन्होंने अपने वक्तव्य में हिन्दी भाषा की महत्ता और उपयोगिता को रेखांकित किया और इसके सरल रूप के प्रयोग पर बल दिया। उन्होंने कहा कि विज्ञान व साहित्य एक दूसरे के पूरक हैं। साहित्य तभी सफल होता है जब वह जन-जन तक पहुंचे और उन्हें अभिव्यक्ति दे। विज्ञान को भी अपनी बात जन-जन तक पहुंचानी है व उसका एक सशक्त माध्यम हमारी भारतीय भाषाएं खासकर हिन्दी ही हो सकती है। प्रो. ए. आर. प्रसन्ना, डीन पी आर एल ने प्रतिभागियों का उत्साह बढ़ाते हुए इस कार्यक्रम की सफलता की कामना की। इस समारोह में निदेशक महोदय का संदेश भी पढ़कर सुनाया गया। इस दिन निबंध प्रतियोगिता का आयोजन हुआ। जिसके विषय थे :

1. क्या परमाणु परीक्षण जरुरी था, 2. कश्मीर में आंतकवाद 3. आर्थिक प्रतिबंध और हम 4. स्थिरता बनाम मिली-जुली सरकारें 5. खतरनाक तीर्थ यात्राओं का औचित्य ।

इस प्रतियोगिता में करीब 40 लोगों ने भाग लिया। इसमें हिन्दी और हिन्दीतर के दो वर्ग थे। हिन्दी भाषा में द्वितीय स्थान पर एस.एम. यादव रहे। हिन्दीतर वर्ग में प्रथम किन्नरी जोशी, द्वितीय ए.जे. श्रोफ एवं तृतीय पर के. एम. सुथार व वी.एम. शाह रहे।

निबंध प्रतियोगिता की श्रृंखला में एक निबंध घर से लिखकर लाना था। जिसका विषय था भारत का परमाणु परीक्षण-एक वैज्ञानिक उपलब्धि। इसमें 5 लोगों ने भाग लिया। इस प्रतियोगिता में एस.एम. यादव-प्रथम, एस.एल. कास्यथ- द्वितीय रहे।

इसी दिन भाषण प्रतियोगिता की श्रृंखला में कार्य संपन्न हुआ। कार्य प्रतियोगिता में प्रयोगशाला के 8 क्षेत्रों ने अपने-अपने क्षेत्र में होने वाले कार्यों, विशेषकर पिछले वर्ष किए गए कार्यों का वर्णन किया। इसे प्रतियोगिता में समुद्र विज्ञान और जलवायु अध्ययन क्षेत्र विजेता रहा और उनको चल शील्ड प्राप्त हुई। इस क्षेत्र का प्रतिनिधित्व डॉ. एस. के गुप्ता ने किया था।

इसी दिन हिन्दी में एक लोक व्याख्यान का भी आयोजन किया गया। इसके वक्ता थे—टाटा इंस्टीट्यूट आफ फन्डामेंटल रिसर्च (टी आई एफ आर) मुबंई के प्रोफसर राम। इनका विषय था पांच रत्नों की कहानी, मेरी जुबानी, पानी ही पानी । उन्होंने अपने भाषण में पानी के संरक्षण व उसके बुद्धिमता पूर्ण उपयोग के कई सुझाव दिए। लोगों ने इस भाषण को काफी सराहा, जो व्याख्यान के बाद उनके द्वारा पूछे जाने वाले प्रश्नों के स्पष्ट परिलक्षित होता था। विद्वान वक्ता ने श्रोताओं के प्रश्नों के जवाब हिन्दी/अंग्रेजी दोनों भाषाओं में समान अधिकार से दिए।

दिनांक 18-9-98 को अंत्याक्षरी कार्यक्रम का आयोजिन किया गया 19-9-98, शनिवार को पी. आर एल के सदस्य एवं उनके परिवार के सदस्यों के लिए भाषण प्रतियोगिता आयोजित की गई। इसमें दो वर्ग थे (1) 15 वर्ष के कम आयु वर्ग तथा (2) 15 वर्ष से अधिक आयु वर्ग । 15 वर्ष से अधिक के वर्ग में हिन्दी और हिन्दीतर वर्ग थे। इन प्रतियोगिताओं के लिए विषय पहले प्रतियोगिताओं के पूर्ण हाने पर पूरे सप्ताह चली प्रतियोगिताओं के लिए पुरस्कार वितरण हुआ। सफल रहें प्रतियोगयों के

अतिरिक्त प्रतियोगिताओं में भाग लेने वाले अन्य सदस्यों को प्रोत्साहन पुरस्कार प्रदान किया गया। पुरस्कार वितरण सुश्री शीला कुसुमगर, श्रीमती आर.आर. भरुचा और श्री बी. एल. पंचाल के कर कमलों से संपन्न हुआ। पूरे वर्ष भर हिन्दी में कार्य करने के लिए नकद पुरस्कार देने की योजना है। तत्संबंधी पुरस्कार वितरण श्री एस.डी. शुक्ल, अध्यक्ष प्रोत्साहन समिति के कर कमलों से वितरित किया गया। पुरस्कार में चांदी के मैडल (जिन पर भौतिक अनुसंधान प्रयोगशाला एवं हिन्दी समारोह अंकित थे), प्रदान किए गए। इसका मुख्य उद्देश्य यह था कि ये पुरस्कार न केवल प्रतिभागी वरन उसके स्वजनों को हिन्दी समारोह के प्रतीक के रूप में हिन्दी प्रयोग के महत्व को लगातार याद दिलाते रहेंगे।

हिन्दी सप्ताह समारोह आयोजन समिति के अध्यक्ष डॉ. यू.सी जोशी ने अपने धन्यवाद ज्ञापन में कहा कि हिन्दी सप्ताह अपनी प्रयोगशाला में एक महत्वपूर्ण सांस्कृतिक कार्यक्रमों के रूप में उभरा है। इस कार्यक्रम में सभी वर्गों के कर्मचारी व परिवारों के सदस्य समान रूप से उत्साह पूर्वक भाग लेते हैं। इस सप्ताह के सफल आयोजन में योगदान के लिए उन्होंने आमंत्रित वक्ताओं, निदेशक, प्रशासन एवं निर्णायकों, संचालकों तथा इस कार्यक्रम से जुड़े हरेक व्यक्ति के प्रति अपना आभार व्यक्त किया ।

केन्द्रीय जालमा कुष्ठ रोग संस्थान, ताजगंज, आगरा

केन्द्रीय जालमा कुष्ठ रोग संस्थान ताजगंज, आगरा में दिनांक 01 से 15 सितम्बर, 98 तक "हिन्दी पखवाड़े" का आयोजन किया गया। पखवाड़े का उद्घाटन आगरा कालेज, आगरा के प्राचार्य डा. चन्द्रशेखर शर्मा ने दीप प्रज्वलित कर किया एवं अध्यक्षता डा. यू. सेनगुप्ता ने की। अपने उद्घाटन भाषण में बोलते हुए डा. शर्मा ने कहा कि हिन्दी राजभाषा ही नही वरन् राष्ट्रभाषा भी है क्योंकि देश के अधिकांश भागों में इसे बोला एवं समझा जाता है। उन्होंने कहा कि किसी भी भाषा के विकास के लिए आवश्यक है लिपि का मजबूत होना और हिन्दी भाषा की लिपि मजबूत है। हिन्दी भाषा आज की भाषा नहीं है अपितु प्राचीन काल में भी हिन्दी विद्यमान थी लेकिन इसके रूप अलग-अलग थे। डा. वी.एम. कटोच, उपनिदेशक ने कहा कि हिन्दी में कार्य करना आसान है लेकिन वैज्ञानिक क्षेत्र में हिन्दी के शब्द प्रयोग के स्थान पर यदि देवनागरी स्वरूप को प्रयोग किया जाय तथा साथ ही अंग्रेजी के स्वरूप को भी रखा जाय तभी हम वैज्ञानिक क्षेत्र में भी हिन्दी के प्रयोग को बढ़ा सकते हैं। इसके लिए हमें हिन्दी के दैनिक बोलचाल के स्वरूप को अपनाना होगा। उद्घाटन के अवसर पर विचार व्यक्त करते हुए संस्थान के निदेशक डा. यू. सेनगुप्ता ने कहा कि हमें अन्य सरकारी आदेशों की भांति ही हिन्दी संबंधी आदेशों का भी पूर्ण निष्ठा एवं लगन से पालन करना चाहिए। साथ ही हिन्दी के प्रयोग को अपने दैनिक सरकारी कामकाज में अधिक से अधिक बढ़ायें तभी हम पूर्ण रूप से अपने आपको देश के प्रति निष्ठावान कहला सकेंगे। उन्होंने कहा कि अंग्रेजी लिखने के बाद उसका हिन्दी रूपान्तरण करके भाषा में सरलता व सहजता नहीं रह जाती है। अतः हमें मूल रूप से ही हिन्दी में कार्य को बढ़ावा देना होगा। भारतीय संस्कृति की धरोहर को संजोये रखने में हिन्दी की महती आवश्यकता है। हिन्दी को सम्पर्क भाषा बनाये रखना हम सभी का कर्तव्य है।

इस अवसर पर संस्थान की हिन्दी अधिकारी डा. श्रीमति मधु भारद्वाज ने हिन्दी पखवाड़े के दौरान आयोजित होने वाली विभिन्न प्रतियोगिताओं की जानकारी दी तथा भारत सरकार द्वारा समय-समय पर राजभाषा हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा देने वाले नियमों एवं प्रोत्साहन योजनाओं से अवगत कराया। हिन्दी पखवाड़े के दौरान संस्थान में टंकण प्रतियोगता, हिन्दी टिप्पण एंव मसौदा लेखन प्रतियोगिता, हिन्दी निबन्ध लेखन प्रतियोगिता, हिन्दी संबंधी पत्र-पत्रिकाओं का प्रदर्शन, हिन्दी वाद-विवाद प्रतियोगिता हिन्दी पखवाड़े के दौरान हिन्दी में कार्य के आधार पर पुरस्कार प्रतियोगिता आयोजित की गई। वाद-विवाद प्रतियोगिता के निर्णायक श्री नरेन्द्र मोहन वशिष्ठ, पंजाब नेशनल बैंक, श्री आर.सी. मिश्र, एस.टी.सी, डा. शिखरेश, आयुक्त विभाग थे। श्री नरेन्द्र मोहन वशिष्ठ, पंजाब नेशनल बैंक, ने इस अवसर पर बोलते हुए कहा कि इस प्रकार की प्रतियोगिताओं से कर्मचारी की कार्य करने की क्षमता बढ़ती है और एक उत्साह बना रहता है।

दिनांक 15 सितम्बर, 98 को हिन्दी पखवाड़े का समापन हुआ। समापन समारोह के मुख्य अतिथि प्रो. महावीर शरण जैन, निदेशक, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान आगरा थे। समापन समारोह को सम्बोधित करते हुए प्रो. जैन ने कहा कि प्रत्येक विकसित देश में चालीस भाषाएँ पढ़ने की व्यवस्था होती है, जापान, जर्मनी, फ्रान्स, रूस इत्यादि ऐसे देश हैं जो स्वभाषा से ही विकसित हुए हैं। स्वभाषा से ही स्वाभिमान उपजता है। स्वतंत्रता के पश्चात् जब संविधान में हिन्दी भाषा को राजभाषा का दर्जा मिला तब विदेशों के विद्यालयों में हिन्दी सीखने की व्यवस्था की गई। यूरोपीय देशों के लोग अपनी भाषा की उपेक्षा करने वालों को तिरस्कार की दृष्टि से देखते हैं। उनका मानना है कि यदि हम किसी देश की संस्कृति, सभ्यता को समझाना चाहते हैं तो उसी की भाषा में समझ सकते हैं। प्रो. जैन ने कहा हिन्दी से अपनी भारतीय भाषाएं अधिक निकट हैं और हिन्दी द्वारा ही देश की एकता पुष्ट होगी। सभी विकसित देशों में सीमित जनसंख्या ही विदेशी भाषा सीखती है। बाकी सभी लोग अपनी भाषा में ही कार्य करते हैं। जालमा संस्थान अन्तर्राष्ट्रीय संस्था है। यहां के वैज्ञानिकों से मेरा अनुरोध है कि वे स्वभाषा में कार्य कर अपनी भाषा का अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर सम्मान करें। देश के किसी भी भाग में जायें हिन्दी बोलने वाले मिल जायेंगे। इस अवसर पर प्रो. जैन ने 18 देशों की यात्रा के-संस्मरण भी सुनाये। प्रो. जैन को संस्थान के निदेशक डा. यू. सेनगुप्ता ने प्रतीक चिन्ह देकर उनका सम्मान किया । मुख्य अतिथि का स्वागत मार्ल्यापण कर संस्थान के उप निदेशक डा. वी. एम. कटोच ने किया।

इस अवसर पर डॉ. मधु भारद्वाज ने कहा कि हिन्दी में काम करना हमारी सरकारी और नैतिक जिम्मेदारी है जो जिम्मेदारी हमें संविधान निर्माताओं ने दी है उसे पूरी निष्ठा के साथ पूरा करना होगा।

भारतीय औद्योगिक विकास बैंक

भारतीय औद्योगिक विकास बैंक के उत्तरी अंचल एवं नई दिल्ली शाखा कार्यालय ने राजभाषा के कार्यान्वयन के लिए उत्साहजनक वातावरण बनाने के लिए 14 से 18 सितम्बर 1998 तक संयुक्त रूप से हिन्दी सप्ताह का आयोजन किया।

हिन्दी सप्ताह का आरंभ एक कार्यालय परिपत्र जारी कर स्टाफ को हिन्दी सप्ताह की भावना से अवगत करवाते हुए उन्हें सप्ताह के दौरान अधिकाधिक कार्य हिन्दी में करने का अनुरोध किया गया। कार्यालय के वातावरण को हिन्दीमय बनाने के लिए कार्यालय के प्रमुख स्थलों पर तथा वरिष्ठ अधिकारियों के कक्षों में देश के लिए राजभाषा के महत्व के बारे में विद्वानों के कथनों के पोस्टर लगाये गये। साथ ही, स्टाफ में राजभाषा नीति, वार्षिक कार्यक्रम, हिन्दी के प्रयोग के बारे में सरकार की विभिन्न अपेक्षाओं, पारिभाषिक शब्दज्ञान बैंकिंग,अर्थ और वित्तीय जगत के समसामयिक विषयों के प्रति अद्यतन जानकारियां हिन्दी में प्राप्त करने के प्रति/जिज्ञासा व अभिरुचि पैदा करने और हिन्दी में सृजनात्मकता को प्रोत्साहित करने के लिए 3 प्रयोजनमूलक प्रतियोगिताएं प्रारुप लेखन, प्रश्न मंच और हिन्दी काव्य पाठ आयोजित की गयी, इन सभी प्रतियोगिताओं में स्टाफ ने बड़े उत्साह से भाग लिया।

हिन्दी दिवस के आगमन पर बैंक नराकास नई दिल्ली के तत्वावधान में आयोजित की गई। अंतर बैंक प्रतियोगिताओं में भी हमारे कार्यालय के स्टाफ ने बड़ी दिलचस्पी से भाग लिया, इन में से कुछ प्रतियोगिताओं के अब तक घोषित परिणामों में हमारे दो स्टाफ सदस्यों को अलग-अलग प्रतियोगिताओं में द्वितीय स्थान प्राप्त हुआ है।

सितम्बर 18,1998 को हिन्दी सप्ताह का मुख्य कार्यक्रम मुख्य महाप्रबंधक श्री अशोक कुमार डोडा की अध्यक्षता में आयोजित किया गया। सर्वप्रथम श्री बी. के. चुघ प्रबंधक, हिन्दी ने हिन्दी सप्ताह के प्रयोजनों के बारे में जानकारी दी और कार्यालय में हिन्दी के प्रयोग की स्थिति पर एक संक्षिप्त रिपोर्ट प्रस्तुत की, तदोपरान्त महा प्रबंधक, श्री ए. वी. राममूर्ति ने माननीय गृह मंत्री का एवं श्री तापस चक्रवर्ती ने माननीय वित्त मंत्री का हिन्दी दिवस संदेश पढ़कर सुनाया और स्टाफ सदस्यों से यह अपील की कि वे हिन्दी सप्ताह की भावनानुसार अपने दैनिक कामकाज में हिन्दी के प्रयोग को बढ़ाएं। इस अवसर पर मुख्य अतिथि श्री बंदूनी ने अपने सारगर्भित संबोधन में सदस्यों से कहा कि अब देश को आजाद हुए 50 वर्ष हो चुके हैं। हम सब मिल-जुल कर हिन्दी के प्रयोग के प्रति शुद्धतावादी दृष्टिकोण का त्याग कर भारत सरकार की राजभाषा नीति के कार्यान्वयन हेतु एकजुट प्रयास करने चाहिए, यही भारत सरकार की मंशा है और इसी में ही भाषा नीति की सफलता। विशिष्ट अतिथि श्री वाजपेयी ने रोजमर्रा जीवन की संजीदगियों पर लिखे गए रोचक व उपयोगी मुक्तकों/दोहों की प्रभावशाली प्रस्तुति द्वारा स्टाफ को आनंदित कर दिया।

मुख्य महा प्रबंधक, श्री अ. कु. डोडा ने अपने अध्यक्षीय संबोधन में स्टाफ का हिन्दी के प्रयोग के लिए आह्वान करते हुए कहा कि रचनात्मक सोच केवल अपनी भाषा के माध्यम से ही संभव है, इसलिए कोई भी व्यक्ति बेहतर कार्य केवल अपनी भाषा में ही कर सकता है।

भारत हेवी प्लेट एण्ड वेसल्स लिमिटेड, विशाखपट्टणम

14 सितम्बर, 1998 को बी. एच. पी. वी. के "कलाभारती" प्रेक्षागृह में हिन्दी दिवस का भव्य समारोह आयोजित किया गया। बी. एच. पी. वी के कार्यपालक निदेशक श्री वी. आर. राव ने इस समारोह का उद्घाटन किया। उन्होंने अपने उद्घाटन भाषण में कहा कि विदेशी भाषा अंग्रेजी के बदले अपनी भाषा हिन्दी के जरिए सांस्कृतिक एंव सामाजिक विकास हो सकता है। हिन्दी शिक्षण योजना के सहायक निदेशक श्री नागेश्वर ठाकुर ने अपने भाषाण में कहा कि "हिन्दी भाषा सीखना कठिन है" इस गलत धारणा को अपने दिलों से हटा दें। उन्होंने यह भी कहा कि भारत की संस्कृति और सभ्यता भारतीय भाषाओं से ही विकसित होती है, विदेशी भाषा अंग्रेजी से नहीं। मानव संसाधन प्रभाग के वरिष्ठ प्रबन्धक श्री एन. के. एम. चौदरी ने सभा की अध्यक्षता की। उन्होंने संस्था में हिन्दी के प्रचार-प्रसार में हो रही गतिविधियों की जानकारी देते हुए कहा कि औद्योगिक क्षेत्र में रहने वाले कर्मचारियों के बीच हिन्दी भाषा एकता एंव सद्भावना उत्पन्न कर सकती है।

हिन्दी दिवस समारोह के अवसर पर 7-9-98 से विविध प्रतियोगिताएं हिन्दी में चलाई गई। विजेताओं को पुरस्कार दिए गए।

पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो

पुलिस अनुसंधान एवं विकास ब्यूरो, नई दिल्ली में दिनांक 14-9-98 से 25-9-98 तक "हिन्दी पखवाड़ा" का आयोजन किया गया। पखवाड़े के दौरान ब्यूरो में राजभाषा हिन्दी के प्रति जागरूकता लाने के लिए हिन्दी प्रतियोगिताएं कराई गई तथा प्रथम तीन स्थान प्राप्त करने वाले विजेताओं को नकद पुरस्कार व प्रशस्ति-पत्र प्रदान किए गए।

पखवाड़े का पुरस्कार वितरण समारोह श्री बी.बी. नन्द, महानिदेशक की अध्यक्षता में 24-9-98 को किया गया जिसमें मुख्य अतिथि डा. श्यामसिंह "शशि", पूर्व महानिदेशक, प्रकाशन विभाग, सूचना प्रसारण मंत्रालय सहित ब्यूरो के सभी अधिकारी तथा कर्मचारी उपस्थित थे। कार्यक्रम का शुभारंभ श्री बी.बी.नन्द, महानिदेशक महोदय ने द्वीप प्रज्वलित कर किया।

मुख्य अतिथि डा. श्यामसिंह "शशि" ने अपने उद्गार व्यक्त करते हुए कहा कि हिन्दी भारत के जनमानस की भाषा है। हमें देश की सभी भाषाओं को सीखने का प्रयास करना चाहिए तथा सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी को विकसित कर उसका उपयोग करना चाहिए। मुख्य अतिथि ने ब्यूरो के सभी अधिकारियों/कर्मचारियों का आह्वान करते हुए कहा कि वे इस पखवाड़े के दौरान अपने सरकारी कामकाज में राजभाषा हिन्दी का अधिकाधिक प्रयोग करें। अहिन्दी भाषी कर्मचारी इस पखवाड़े के दौरान कम-से-कम अपने हस्ताक्षर राजभाषा हिन्दी में करने का प्रयास करें।

महानिदेशक ने अपने अध्यक्षीय भाषण में अधिकारियों/कर्मचारियों को संबोधित करते हुए कहा कि उन्हें खुशी होगी यदि सरकारी कामकाज में मिली-जुली भाषा का प्रयोग कर सरल भाषा का प्रयोग किया जाए। उन्होंने सभी से अपना सरकारी कामकाज यथासंभव राजभाषा हिन्दी में करने का प्रयास करने को कहा।

केंद्रीय जल और विद्युत अनुसंधानशाला, पुणे

केन्द्रीय जल और विद्युत अनुसंधान शाला, खड़कवासला, पुणे (भारत सरकार, जल संसाधन मंत्रालय) ने 17 सितम्बर, 1998 को हिन्दी दिवस समारोह मनाया। इस अवसर पर, आयुध प्रौद्योगिकी संस्थान, गिरीनगर, पुणे के निदेशक एवं संकायाध्यक्ष प्रो. जी.एस. मणी जी प्रमुख अतिथि के नाते उपस्थित थे।

अनुसंधान शाला के निदेशक डॉ० बै.उपेन्द्र नायक ने प्रमुख अतिथि प्रो० मणी जी का स्वागत करते हुए अपने भाषण में कहा कि संविधान में हिन्दी को राजभाषा का स्थान प्राप्त हुए 50 साल हो गए हैं। इस लंबी अवधि में हिन्दी का काफी विकास हुआ हैं। तब से हिन्दी साहित्य के अलावा तकनीकी और विज्ञान के क्षेत्रों में भी हिन्दी का प्रयोग बढ़ रहा है। यह एक अच्छी बात है। अनुसंधान शाला एक तकनीकी संस्थान है, फिर भी यहां कार्यालयीन कामकाज में हिन्दी का पर्याप्त प्रयोग किया जा रहा है। इस संबंध में डॉ० नायक ने आगे सहर्ष सूचित किया कि जल संसाधन मंत्रालय की ओर से केंन्द्रीय जल और विद्युत अनुसंधान शाला को हिन्दी का प्रयोग बढ़ाने की दिशा में किए गए कार्य के परिणामस्वरूप "चल वैजयंती" पुरस्कार योजना के तहत वर्ष 1997-98 का द्वितीय पुरस्कार प्राप्त हुआ है। इस उपलब्धि के लिए उन्होंने सभी अधिकारियों और कर्मचारियों को बधाई देकर प्रोत्साहित किया।

हिन्दी पखवाड़े के दौरान आयोजित हिन्दी निबंध, टंकण, वाद-विवाद, प्रश्नमंच, तकनीकी लेख और हिन्दी में मूल रूप से टिप्पण-आलेखन योजना में पुरस्कार प्राप्त उम्मीदवारों को प्रमुख अतिथि के करकमलों द्वारा पुरस्कार एवं प्रमाणपत्र देकर प्रोत्साहित किया गया।

समारोह के मुख्य अतिथि प्रो. मणि ने हिन्दी में छपवाई गई 'नदी अभियांत्रिकी पत्रिका' का विमोचन किया । कार्यालय के पुरस्कार प्राप्त कर्मचारियों को बधाई देते हुए उन्होंने सर्व प्रथम हिन्दी दिवस आयोजनाकार्ताओं को धन्यवाद दिया। प्रो. मणी जी ने आगे कहा कि एक आदमी दूसरे आदमी के साथ भाषा के माध्यम से ही संपर्क बनाता है। मानव और प्राणी दोनों की अपनी भाषाएं होती हैं, लेकिन मानव की भाषा में यह विशेषता है कि उसमें व्याकरण की दृष्टि से अनुशासन होता है। किसी भी भाषा में अनुशासन होना बहुत जरूरी है। वास्तव में हिन्दी बड़े भू भाग में बोली जाने वाली भाषा है, इसलिए हिन्दी भाषा का भी बहुत भारी प्रचार-प्रसार हो सकता है। जब अंग्रेजी बोलने वाले लोगों की भाषा अंतर्राष्ट्रीय भाषा हो सकती है तो हिन्दी भी पिछड़ी नहीं रह सकती। हिन्दी भाषा का शब्द संग्रह-विपुल है।

मुख्य अतिथि ने उपस्थित कर्मचारियों को एक संदेश के रूप में कहा कि खड़कवासला के प्राकृतिक तथा रमणीय परिसर में आयुध प्रौद्योगिकी संस्थान और केन्द्रीय जल और विद्युत अनुसंधानशाला बसी हुई है। देश की सीमाओं की रक्षा के लिए हथियार बनाकर अनुसंधान करने का कार्य आयुध प्रौद्योगिकी संस्थान करता है, उसी तरह केन्द्रीय जल और विद्युत अनुसंधान शाला, जल संसाधन के क्षेत्र में अनुसंधान के माध्यम से सेवा के कार्य में व्यस्त है। इन दोनों ही संस्थाओं में मुख्य कार्य का स्वरूप तकनीकी है जहां अंग्रेजी का प्रयोग अधिकांश किया जाता है। मेरा यह सुझाव है कि इन संस्थानों में कार्य करने वाले कर्मचारी अपने तकनीकी कार्य को राजभाषा हिन्दी के रूप में मिला दें जिससे हिन्दी भाषा मशहूर होगी। उन्होंने अपने उद्गार निम्नलिखित स्वरचित कविता के माध्यम से व्यक्त किए :

प्रधान मंत्री की अभिलाषा

खड़कवासला में स्थित हैं दो विशाल संस्थान,
अपने अपने क्षेत्र में दोनों हैं महान ।

विशेषता एक की है रक्षा संबंधी विज्ञान,
और दूसरा करता है जल और विद्युत का अनुसंधान।

दोनों को हैं राष्ट्रभाषा से असीम स्नेह और लगन,
भारत सरकार भी देती है इनको प्रोत्साहन।

इस विषय पर मेरा है एक सुझाव,
क्योंकि दोनों संस्थाओं में नहीं कोई अभाव।

क्यों न मिश्रित करें हम तकनीकी और राजभाषा,
और दें हिन्दी को एक नई परिभाषा।

करें प्रयोग हम सरल और सुन्दर भाषा,
और पूर्ण करें भारत के प्रधानमंत्री की अभिलाषा।

अनुसंधानशाला के निदेशक, डा. बै. उपेन्द्र नायक के मार्गदर्शन और राजभाषा कार्यान्वयन समिति के अध्यक्ष डॉ० निर्माल्य घोष, राजभाषा अधिकारी डॉ० ईश्वर दत्त गुप्त, के सहयोग और हिन्दी अधिकारी श्रीमती रोहिणी कारखानीस की सहायाता से हिन्दी पखवाड़ा और हिन्दी दिवस समारोह मनाया गया।

राजभाषा अधिकारी डॉ० ईश्वर दत्त गुप्ता द्वारा आभार प्रदर्शन और राष्ट्र-गीत के पश्चात् समारोह सम्पन्न हुआ।

बीकानेर मंडल

उत्तर रेलवे, बीकानेर मंडल पर हर वर्ष की भांति इस वर्ष को भी 14 सितम्बर से 30 सितम्बर, 98 तक राजभाषा पखवाड़ा हर्षोलास के साथ मनाया गया । रेल कर्मचारियों ने हिन्दी के प्रति रुचि जाग्रत करने एवं राजभाषा के प्रति निष्ठा एवं लगन बढ़ाने के उद्देश्य से आयोजित राजभाषा पखवाड़े के दौरान सर्वप्रथम मंडल रेल प्रबंधक श्री विजय कुमार कौल ने मंडल के सभी अधिकारियों/कर्मचारियों के नाम अपील जारी करते हुए सभी से अंग्रेजी का मोह त्यागने तथा हिन्दी में अधिकाधिक कार्य कर राष्ट्रीय गौरव बढ़ाने का अनुरोध किया। मंडल रेल प्रबन्धक ने सरल आम बोल चाल की भाषा के उपयोग पर बल दिया।

कर्मचारियों में हिन्दी की क्रियाशीलता का विकास करने के उद्देश्य से विभिन्न प्रतियोगिताओं का आयोजन भी किया गया। मूल हिन्दी टिप्पण एवं प्रारूप लेखन प्रतियोगिता में 19 कर्मचारियों ने भाग लिया।

पखवाड़े के दौरान आयोजित राजभाषा प्रश्नोत्तरी के प्रति कर्मचारियों में काफ़ी उत्साह था। इस प्रतियोगिता में कुल 16 कर्मचारियों ने भाग लिया। प्रतियोगिता में चार-चार कर्मचारियों की चार टीमें बनाई गई। सर्व श्री राजेश प्रसाद, ब्रजेश कुमार ओझा, प्रदीप शर्मा, कमल मंडल पर पखवाड़े के दौरान 15-9-98 को बीकानेर स्टेशन पर राजभाषा पर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक का आयोजन किया गया था। जन सम्पर्क से संबंधित कार्यों में हिन्दी का प्रयोग विषय पर कार्यशाला का आयोजन किया गया। इसमें 17 अधिकारियों/प्रभारियों ने भाग लिया। 16-9-98 को चूरु स्टेशन राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक तथा वहां संरक्षा संगोष्ठी का आयोजन भी किया गया। इसी प्रकार 17-9-98 को दिल्ली क्वींज रोड़ स्टेशन पर तथा 23-9-98 को लालगढ़ स्टेशन पर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों की बैठकें आयोजित की गई तथा राजभाषा प्रयोग संबंधी गहन निरीक्षण भी किया गया। जन सम्पर्क संबंधी कार्यों में अधिक-से-अधिक हिन्दी का प्रयोग करने के लिए अभियान चलाया गया।

बैठक के आयोजन के क्रम में 24-9-98 को दिल्ली सराय रोहिल्ला स्टेशन पर कार्यशाला—राजभाषा प्रयोग और अधिकारियों/प्रभारियों का दायित्व विषय पर आयोजित की गयी।

राजभाषा पखवाड़े के दौरान राजभाषा सहायकों द्वारा कर्मचारियों से गहन सम्पर्क स्थापित कर हिन्दी में अधिकाधिक कार्य करने का अनुरोध किया गया। इस दौरान मंडल के लगभग एक हजार अधिकारियों/कर्मचारियों ने हिन्दी में कार्य करने के लिए संकल्प लिया।

पखवाड़े के दौरान ही दिनांक 24-9-98 को मंडल कार्यालय के सभी अधीक्षकों एवं प्रभारियों की एक कार्यशाला आयोजित की गई। इसमें संघ की राजभाषा नीति पर चर्चा की गई तथा सभी प्रभारियों/अधीक्षकों को स्पष्टत: बताया गया कि वे अपने-अपने कार्यालयों में राजभाषा का प्रयोग किस प्रकार बढ़ा सकते हैं। मंडल के सभी अंशकालिक पुस्तकाध्यक्षों तथा समितियों के लिपिकों के लिए भी एक कार्यशाला आयोजित की गई। इसमें उन्हें पुस्तकालय के उचित रखाव के बारे में तथा राजभाषा बैठकों की व्यवस्था के बारे में विस्तार से बताया गया। कार्यशाला में पुस्तकाध्यक्षों तथा समिति लिपिकों की समस्याओं का समाधान भी किया गया। रेलवे बोर्ड/प्रधान कार्यालय से प्राप्त आदेशों के संबंध में विस्तार से प्रकाश डाला गया।

दिनांक 30-9-98 को मंडल राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक का आयोजन किया गया जिसमें मंडल के सभी अधिकारी एवं प्रभारीगण उपस्थित थे। पखवाड़े के समापन अवसर पर प्रतियोगिता के विजेता कर्मचारियों को पुरस्कार वितरित किये गये।

प्रधान निदेशक लेखा परीक्षा का कार्यालय, मध्य रेलवे,मुम्बई

भारत सरकार, गृह मंत्रालय (राजभाषा विभाग) द्वारा वर्ष 1998-99 के लिए निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार राजभाषा में हिन्दी के प्रति जागरुकता तथा उसके उत्तरोत्तर प्रयोग में गति लाने के उद्देश्य से श्रीमती के. गंगा, प्रधान निदेशक, लेखा परीक्षा की अध्यक्षता में दिनांक 14-9-1998 को मुख्यालय में हिन्दी पखवाड़े का मुख्य समारोह आयोजित किया गया। मुख्य अतिथि के रूप में प्रसिद्ध सह-सम्पादक श्रीमती सुदर्शना द्विवेदी, नवभारत टाइम्स, मुम्बई हिन्दी पखवाड़े के मुख्य समारोह में उपस्थित थी।

श्री आर.बी.तिवारी, वरिष्ठ लेखा परीक्षा अधिकारी द्वारा सरस्वती पूजा अर्चना से समारोह का आरम्भ हुआ। श्रीमती सौमनी मेनन, सहायक लेखा परीक्षा अधिकारी ने सरस्वती वंदना की। श्री पी.सी.जैन, वरिष्ठ लेखा परीक्षा अधिकारी ने कार्यक्रम का संचालन किया।

कार्यालय द्वारा हिन्दी निबन्ध तथा अनुवाद प्रतियोगिता दिनांक 9-9-1998 एवं दिनांक 10-9-1998 को क्रमश: आयोजित की गई। प्रतियोगिता में भाग लेने वाले क एवं ख तथा ग क्षेत्र के कर्मचारियों को प्रथम एवं द्वितीय पुरस्कार से मुख्य अतिथि द्वारा सम्मानित किया गया। इसके साथ प्रतियोगिता में भाग लेने वाले सभी कर्मचारियों को प्रोत्साहन पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

मुख्य अतिथि श्रीमती सुदर्शना द्विवेदी, सह सम्पादक नवभारत टाइम्स ने कर्मचारियों एवं अधिकारियों को अपना अधिकाधिक कार्य हिन्दी में करने की प्रेरणा देते हुए कहा कि हिन्दी किसी राज्य विशेष की भाषा न होकर पूरे भारत की भाषा है। मुख्य अतिथि ने कहा कि हिन्दी सबसे सरल भाषा है और हिन्दी में काम करना भी आसान है। समारोह की अध्यक्षता करते हुए श्रीमती के. गंगा, प्रधान निदेशक, लेखा परीक्षा ने कार्यालय के सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों से अपील की कि वे राजभाषा नीति के कार्यान्वयन के लिए राजभाषा विभाग द्वारा बनाये गये कार्यक्रम का अनुपालन करे एवं अपने कामकाज और व्यवहार में हिन्दी अपनाएं तथा इसे सम्पर्क भाषा राजभाषा के रूप में आगे बढ़ाएं।

श्री सोबरन सिंह, उप निदेशक (प्रशासन) ने कहा कि अधिकारी एवं कर्मचारी हिन्दी दिवस के शुभ अवसर पर अपना अधिक-से-अधिक काम हिन्दी में करने का संकल्प लें और उसे पूरा करें।

कर्मचारी राज्य बीमा निगम, क्षे. का. तमिलनाडु

दिनांक 1 सितम्बर, 1998 से 15 सितम्बर, 1998 के दौरान क्षेत्रीय कार्यालय तमिलनाडु में व्यापक समारोह पर हिन्दी पखवाड़े का आयोजन किया गया। इस अवधि के दौरान विभिन्न प्रतियोगिताओं तथा निबन्ध, भाषण, टिप्पण आलेखन तथा अंत्याक्षरी प्रतियोगिताएं आयोजित की गयी

जिनमें कर्मचारियों/अधिकारियों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया। इस अवसर पर श्रीमती के. वैजयन्ती, स्नातकोत्तर व्याख्याता, उच्च शिक्षा व अनुसंधान संस्थान, चेन्नई ने कहा कि इस कार्यक्रम में बड़े चाव से आप लोगों ने हिन्दी फिल्मी गानों को गाया है, आपका उत्साह इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि हिन्दी के प्रति आपके मन में रूचि है। यदि ऐसा नहीं होता तो आप हिन्दी गाने मंच पर आकर नहीं गाते तथा इतनी बड़ी संख्या में यहां लोग इकट्ठे होकर मंत्रमुग्ध होकर गाने भी नही सुनते। जिस भाषा के गाने आपकी वाणी को सुशोभित करते हैं, अत: उस भाषा को सीखने में कोई हर्ज नहीं है। इस समारोह में आप लोगों की शिरकत इस बात को साबित करती है कि हिन्दी ही वह जुबान है जो हिन्दुस्तान के धुर-दक्षिण में कन्याकुमारी व रामेश्वरम से लेकर सुदूर उत्तर में कश्मीर तक समझी व बोली जाती है। अत: राजभाषा के रूप में इसे पढ़ना, बतौर सरकारी जुबान इसे अपनाना इस समय की सबसे ज्यादा यथार्थपरक अपेक्षा को पूरा करना है।

इस अवसर पर संयुक्त निदेशक व कार्यकारी क्षेत्रीय निदेशक श्री बी.के. व्यंकटेश ने कहा कि जब मैं अधिकारी बन कर दिल्ली गया तब मुझे अपने जीवन में हिन्दी के अल्प ज्ञान पर अफसोस हुआ। फाइलों पर सरकारी भाषा के रूप में हिन्दी अब एक हकीकत है। इस बात को न मानना अपनी आंख को बंद रखना है। उन्होंने उपस्थिति पर आश्चर्य-मिश्रित खुशी जाहिर करते हुए कहा कि हमें हिन्दी के ज्ञान में अधिकाधिक वृद्धि के लिए हिन्दी कार्यशालाओं की ज्यादा से ज्यादा जरूरत है।

इस अवसर पर श्री धर्मेन्द्र कुमार गुप्त, सहायक निदेशक राजभाषा ने अपने भाषण के दौरान कहा कि 14 सितम्बर भारतीय भाषाओं की अस्मिता और स्वधीनता का प्रतीक है। हिन्दी की शक्ति भारतीय भाषाओं की मजबूती में ही है। प्रान्तीय भाषाओं से ही हिन्दी को संजीवनी प्राप्त होती है।

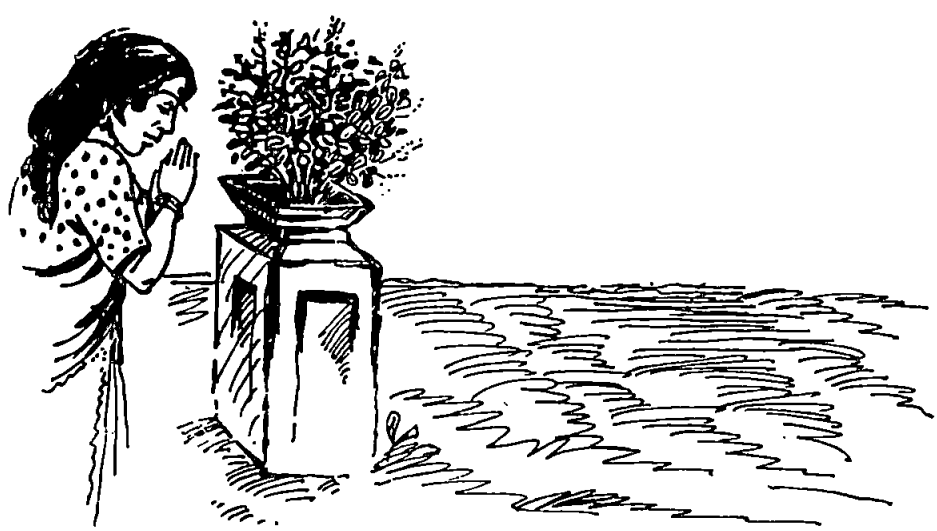

समाचार

मुसीबत से बचने के लिए पंजाब में पंजाबी का प्रयोग करें

अंग्रेजी के दैनिक इंडियन एक्सप्रेस के 11 अक्तूबर 1998 के अंक में छपे एक समाचार के अनुसार, यदि आप पंजाब सरकार में अधिकारी हैं और सरकारी पत्राचार में पंजाबी का प्रयोग नहीं करते तो आपके लिए मुसीबत सामने है। राज्य सरकार ने पंजाबी का प्रयोग न करने वालों के विरुद्ध कार्रवाई करने का निश्चय किया है। जिसमें प्रताड़ना और वार्षिक वेतन वृद्धि से लेकर पदोन्नति तक रोकी जा सकती है। पंजाबी भाषा विभाग के निदेशक श्री मदन लाल हसीजा ने 10 अक्तूबर 1998 को इंडियन एक्सप्रेस के प्रतिनिधि को बताया कि अब राज्य सरकार पंजाब राजभाषा अधिनियम 1967 को कार्यान्वित करने के लिए गम्भीर है। उन्होंने यह भी बताया कि अधिकारियों की वार्षिक गोपनीय रिपोर्टों में एक कालम बढ़ाकर भाषा प्रयोग का रिकार्ड रखना भी आवश्यक कर दिया गया है। मुख्य सचिव ने सभी विभागों को आदेश दिए हैं कि वे सुनिश्चित करें कि यह कालम पूरी तरह से भरा जा रहा है। श्री हसीजा ने बताया कि जब तक भाषा विभाग अनुमति न दे, राज्य सरकार ने अंग्रेजी टाइपराइटरों की खरीद पर पूरा प्रतिबंध लगा दिया है। अंग्रेजी के टाइपराइटर वापिस लिए जा रहे हैं और इस प्रकार 100 टाइपराइटर हाल ही में चंडीगढ़ के केन्द्रीय स्टोर में रखे जा चुके हैं। जिलों के भाषा अधिकारियों को आदेश दिए गए हैं कि वे अचानक छापे मारकर इस बात की जांच करें कि पंजाबी भाषा का सरकारी कामकाज में वास्तव में प्रयोग किया जा रहा है। पंजाब के उच्च शिक्षा तथा भाषा विभाग के मंत्री श्री मंजीत सिंह कलकत्ता ने मुख्यमंत्री तथा दूसरे मंत्रियों से इस विषय में सहयोग देने के लिए पत्र लिखे हैं।

आशुलिपिकों तथा टंककों की भर्ती परीक्षाओं में हिन्दी का विकल्प

भारत सरकार के गृह मंत्रालय के अंतर्गत सेन्ट्रल रिजर्व पुलिस फोर्स में आशुलिपिकों और टंककों की भर्ती के लिए 3 अक्तूबर 1998 के रोजगार समाचार में एक विज्ञापन प्रकाशित हुआ है। इसके अनुसार 202 टंककों और आशुलिपिकों की भर्ती परीक्षाओं में हिन्दी का पूरी तरह से विकल्प दे दिया गया है। यहां तक कि अंग्रेजी भाषा के प्रश्न पत्र के विकल्प में हिन्दी का विकल्प भी होगा और प्रश्न-पत्र द्विभाषी रूप में छापे जाएंगे।

कर्नाटक में हिन्दी माध्यम का होमोयोपैथी कालेज

दक्षिण समाचार, हैदराबाद के 12 अगस्त 1998 के अंक में छपे एक समाचार के अनुसार दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की कर्नाटक शाखा ने पूर्व-उपराष्ट्रपति डॉ० बी.डी. जत्ती के नाम पर धारवाड़ में एक होमोयोपैथिक मेडिकल कॉलेज एवं अस्पताल आरम्भ किया है। पाठ्यक्रम की अवधि 4 वर्ष छ: महीने है। इसके बाद एक वर्ष तक अस्पताल में चिकित्सा का प्रशिक्षण लेना होगा। इस कॉलेज की विशेषता यह है कि इसमें पढ़ाई हिन्दी माध्यम से होगी। कालेज के साथ एक हॉस्टल भवन भी है। केन्द्र एवं राज्य सरकार द्वारा निर्धारित शुल्क के अतिरिक्त कोई दान या अन्य राशि नहीं ली जाती। कॉलेज का पता निम्न प्रकार है:—

डॉ० बी.डी. जत्ती होमोयोपैथिक मेडिकल कॉलेज एवं अस्पताल
दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, धारवाड़ (कर्नाटक)-580001

आदेश-अनुदेश

भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग का दिनांक 16-9-98 का का.ज्ञा. सं. 11/12013/18/93 रा०भा० (नी. 2)

विषय : सरकारी कामकाज (टिप्पण/आलेखन) मूल रूप में हिंदी में करने तथा अधिकारियों द्वारा हिन्दी में डिक्टेशन देने के लिए प्रोत्साहन राशि में वृद्धि।

राजभाषा विभाग के दिनांक 16 फरवरी, 1988 के कार्यालय ज्ञापन सं. 11/12013/3/87-रा.भा.(क-2) के तहत सरकारी कामकाज में मूल हिन्दी में टिप्पण/आलेखन के लिए पहले से चलाई जा रही प्रोत्साहन योजना के अन्तर्गत दी जाने वाली राशि को बढ़ाने का प्रस्ताव कुछ समय से सरकार के विचाराधीन था। वित्त मंत्रालय, व्यय विभाग की सहमति केआधार पर उक्त कार्यालय ज्ञापन के पैरा-3 में जो नगद पुरस्कार देने का प्रावधान रखा गया था, उन पुरस्कार राशियों को पहले के मुकाबले दुगुना कर दिया गया है, अर्थात्:—

(क) केन्द्रीय सरकार के प्रत्येक मंत्रालय/विभाग/संबद्ध कार्यालय के लिए स्वतंत्र रूप से :

पहला पुरस्कार (2 पुरस्कार) : प्रत्येक रु. 1000/-

दूसरा पुरस्कार (3 पुरस्कार) : प्रत्येक रु. 600/-

तीसरा पुरस्कार (5 पुरस्कार) : प्रत्येक रु. 300/-

(ख) केन्द्रीय सरकार के किसी विभाग के प्रत्येक अधीनस्थ कार्यालय के लिए स्वतंत्र रूप से :

पहला पुरस्कार (2 पुरस्कार) : प्रत्येक रु. 800/-

दूसरा पुरस्कार (3 पुरस्कार) : प्रत्येक रु. 400/-

तीसरा पुरस्कार (5 पुरस्कार) : प्रत्येक रु. 300/-

उक्त योजना के बारे में दिनांक 16 फरवरी, 1988 के कार्यालय ज्ञापन के तहत बनाए गए सभी नियम एवं शर्तें पूर्ववत् रहेंगी। पुरस्कार की बढ़ी हुई राशि 1 अप्रैल, 1998 से लागू मानी जाएगी।

2. ठीक इसी प्राकर इस विभाग के दिनांक 6 मार्च, 1989 के कार्यालय ज्ञापन सं. 11/12013/1/89-रा.भा. (क-2)के तहत अधिकारियों को हिन्दी में डिक्टेशन देने के लिए प्रोत्साहन योजना के अन्तर्गत मार्गदर्शी सिद्धांत जारी किये गये थे। उक्त मार्गदर्शी सिद्धांतों में पुरस्कार राशि लगभग 500/-रु० रखी गई थी। इस पुरस्कार राशि को भी वित्त मंत्रालय व्यय विभाग की स्वीकृति के आधार पर बढ़ाकर दुगना अर्थात् 1000/-रु० कर दिया गया है। उक्त मार्गदर्शी सिद्धांत में वर्णित सभी शर्तें पूर्ववत् रहेंगी। इस योजना में दी जाने वाली बढ़ी हुई राशि भी पहली अप्रैल, 1998 से लागू मानी जायेगी।

3. यह कार्यालय ज्ञापन वित्त मंत्रालय, व्यय विभाग की सहमति से उनके दिनांक 3-8-98 के यू.ओ.सं. 1/(51)/ई. कोर्ड/98 के अनुसार जारी किया जा रहा है।

(बृजमोहन सिंह नेगी)

निदेशक (नीति)

भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग का दिनांक 14-9-98 का का०ज्ञ० सं. 11014/8/96 राजभाषा (प० 2)

विषय : राजभाषा विभाग द्वारा समय-समय पर प्रकाशित हिंदी में प्रकाशित पुस्तकों/पत्रिकाओं की संस्तुति।

उपर्युक्त विषय पर राजभाषा विभाग के दिनांक 28-10-96 के समसंख्यक कार्यालय ज्ञापन का अवलोकन करें। उक्त कार्यालय ज्ञापन में सभी मंत्रालयों/विभागों आदि से अन्य पत्रिकाओं के साथ-साथ "हंस" नामक पत्रिका पुस्तकालयों/वाचनालयों और संदर्भ प्रकोष्ठों आदि में उपलब्ध करवाने तथा पत्रिकाओं के ग्राहक बनने पर विचार करने के लिए अनुरोध किया गया था। हाल ही में यह ध्यान में लाया गया है कि "हंस" नामक पत्रिका के अगस्त, 1998 के अंक-एक में प्रकाशित सामग्री घोर आपत्तिजनक है। अतः उक्त कार्यालय ज्ञापन की क्रम संख्या 5 पर उल्लिखित "हंस" नामक पत्रिका के बारे में दिए गए अंश को अब निकाला (deleted) हुआ माना जाए।

उपर्युक्त के परिप्रेक्ष्य में सभी मंत्रालयों/विभागों/कार्यालयों, सार्वजनिक उपक्रमों, बैंकों, स्वायत संस्थाओं, प्रशिक्षण संस्थानों आदि से अनुरोध है कि वे इस संबंध में की गई कार्रवाई से राजभाषा विभाग को यथाशीघ्र अवगत कराएं।

प्रेमकृष्ण गोरावारा, निदेशक (अनुसंधान)

"भारतीय भाषाएं नदियाँ हैं और हिन्दी महानदी। हिन्दी देश के सबसे बड़े हिस्से में बोली जाती है। हमें इसे राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार करना ही चाहिए। मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि हिन्दी के बिना हमारा काम चल नहीं सकता।"

—रवीन्द्र नाथ ठाकुर

"जो लोग देश में हिंदी चलाने के विरोधी हैं उन्हीं के कारण तमिलनाडु में तमिल, बंगाल में बंग्ला, आंध्र में तेलगू और केरल में मलयालम का प्रचलन रुका हुआ है। यह एक ऐसा जटिल षड्यंत्र है जिसे जनता को बारीकी से समझना चाहिए। यह षड्यंत्र यदि सफल हो गया तो भारत का इतिहास विफलता बोध से ग्रस्त हो जाएगा और हम जिन मनसूबों के साथ किस्मत को बदलने और सभ्यता को नई दिशा की ओर मोड़ने की तैयारी कर रहे हैं वे धूल में मिल जाएंगे।"

राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर'

स्वतन्त्रता दिवस की पुकार

-अटल बिहारी वाजपेयी

पन्द्रह अगस्त का दिन कहता-आजादी अभी अधूरी है।
सपने सच होने बाकी हैं, रावी की शपथ न पूरी है।।

जिनकी लाशों पर पग धर कर आजादी भारत में आई।
वे अब तक हैं खानाबदोश गम की काली बदली छाई।।

कलकत्ते के फुटपाथों पर जो आंधी-पानी सहते हैं।
उनसे पूछो, पन्द्रह अगस्त के बारे में क्या कहते हैं।।

हिन्दू के नाते उनका दुःख सुनते यदि तुम्हें लाज आती।
तो सीमा के उस पार चलो सभ्यता जहां कुचली जाती।।

इन्सान जहां बेचा जाता, ईमान खरीदा जाता है।
इस्लाम सिसकियां भरता है, डालर मन में मुस्काता है।।

भूखों को गोली नंगों को हथियार पिन्हाये जाते हैं।
सूखे कण्ठों से जेहादी नारे लगवाए जाते हैं।।

लाहौर, कराची, ढाका पर मातम की है काली छाया।
पख्तूनों पर, गिलगित पर है गमगीन गुलामी का साया।।

बस इसीलिए तो कहता हूं आजादी अभी अधूरी है।
कैसे उल्लास मनाऊं मैं ? थोड़े दिन की मजबूरी है।।

दिन दूर नहीं खण्डित भारत को पुनः अखण्ड बनाएंगे।
गिलगित से गारो पर्वत तक आजादी पर्व मनाएंगे।।

उस स्वर्ण दिवस के लिए आज से कमर कसें बलिदान करें।
जो पाया उसमें खो न जाए, जो खोया उसका ध्यान करें।।

---

15 अगस्त, 1947 को लिखित

संविधान में हिन्दी भाषा के विकास के लिए निदेश

351 संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिन्दी भाषा का प्रसार बढ़ाए, उसका विकास करे ताकि वह भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके और उसकी प्रकृति में हस्तक्षेप किए बिना हिन्दुस्तानी के और आठवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट भारत की अन्य भाषाओं के प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात करते हुए और जहां आवश्यक या वांछनीय हो वहां उसके शब्द-भण्डार के लिए मुख्यतः संस्कृत से और गौणतः अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करें।

प्रबन्धक, भारत सरकार मुद्रणालय, रिंग रोड, माया पुरी, नई दिल्ली-110 064
1999